रत्नाकर-ग्रन्थमाला का ३३ वां रत्न।

विधि-विधान ।

(ऊंचे दर्जेका— ...जिक उपन्यास)

अनुवादक :—

श्रीयुत पं० रामचन्द्र शर्म्मा ।

प्रकाशक :—

दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी
१४।१।ए० शम्भूचटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता ।

प्रथम संस्करण] संवत् १९८८

प्रकाशक:—
दी पोपुलर ट्रेडिंग कम्पनी
कलकत्ता।

मुद्रक:—
विश्वमित्र प्रेस,
१४।१ ए शम्भूचटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता।

विधि-विधान

विधि-विधान ।

१

श्रावण मासके अन्तिम दिनोंमें बूढ़ी वर्षाने गांवको खूब ज़ोर से दबा रखा है । कई दिन तक लगातार बारिश हो जाने पर भी जब धुंधले बादलोंका पर्दा, आकाशसे दूर नहीं हुआ और कभी रिम-झिम-रिम-झिम और कभी तीव्र गतिसे पानी पृथ्वी पर पड़ने लगा, हवा उसी तरह पुरवा और उत्तरा चलती रही, तब गांवके लोग निराश होकर सड़ी हुई वर्षाका कष्ट भुगतनेके लिये तैयार हो गये। ऐसे समय गरीबोंके कष्टोंका तो कहना ही क्या है, सम्पन्न गृहस्थोंके भी नाकोंदम हो जाता है ।

काफी दिन चढ़ चुका है । भट्टाचार्य महाशयकी बड़ीबहू सिर पर टाटका टुकड़ा रख कर घरको देखा-भाली कर रही हैं । इस भयङ्कर वर्षामें धान और गेहूंसे भरी हुई कोठियोंके ऊपरका छप्पर चू तो नहीं रहा है, वर्षाकी मौसिमके लिये इकट्ठी की हुई सूखी लकड़ियां, कंडे और घास भीग तो नहीं रहे हैं, कहारीने आजकी रसोईके लिये सूखी लकड़ी पहुंचाई है या नहीं, और रात भरका गोबर बाहर फेंक दिया गया है या नहीं, इत्यादि कामोंको बड़ी मुस्तैदीसे देख रही हैं । गोशालामें पहुंच कर, वह गो-चहियोंका काम करनेवाले लड़केसे उनके घास-दानेके विषयमें कहा-सुनी करती हुई, पशुओंके

नीचे जहां-जहां कीचड़ हो गया था, उसको अपने हाथसे साफ कर रही थीं। उनकी प्रबल दलीलोंके सामने बेचारे लड़केका क्षीण प्रतिवाद कुछ काम नहीं दे रहा था।

इसी समय, एक ग्यारह-बारह वर्षके लड़केने, गोशालाके दरवाजेके पास खड़े हो भीतर झांक कर देखा और कहा,—

"मां, क्या आज मैं स्कूल नहीं जा सकूंगा ?"

"अभी जाती हूं बेटा, दस-बारह दिनकी इस बारिशसे गो-बछड़े बड़े परेशान हो रहे हैं। बंधे-बंधे खाते हुए क्या इनका पेट भरता है ? देखो न, पेट कैसा धँस गया है और इस कीचड़में खड़े-खड़े यदि इनके खुरोंमें घाव हो गये और कीड़े—"

"तो क्या इन बातोंमें आज मुझको स्कूलसे भी रख देना है ? यदि तुम्हें ही यह सब काम करना पड़ता है, तो यह लड़का और हरि किस लिये हैं ?"

"इनका क्या कसूर है, बेटा ? इस दिन-रातकी झड़ीमें आदमियोंको ही सूखी जगह नसीब नहीं होती, तब इन गरीबोंको कहां मिलने लगी जो अपने खड़े होनेकी जगहको अपने आप ही खराब कर देते हैं और हरा घास खाए बिना—"

"मां, तुम्हें यह पता नहीं है, कि दिन कितना चढ़ गया है, रोटी कब तैयार होगी ?"

पुत्रके रुलाई मिले हुए कंठ-स्वरको सुनकर मांने हाथ पोंछते हुए कहा,—"बेटा, मैं अभी तालाब पर नहा आती हूं। तुम जाकर अपनी चचीसे कहो कि वह दाल चढ़ा दे। मैं अभी आती हूं।"

"चचीसे कह चुका हूं, वे तो बोली नहीं ।"

"क्यों नहीं बोलीं ? क्या कर रही हैं ?"

"अपने बापके साथ बात कर रही हैं और रो रही हैं !"

माता कुछ देर चुप रह कर बोली,—"तो दासूकी मांको चूल्हेमें आग जलानेको कहो । आज मैंने सूखी लकड़ी भेजी हैं, उनको सुलगानेमें कष्ट नहीं होगा । मैं अभी आती हूं । फिर सोचकर बोलीं,—"मेरी धोती कौन देगा । जा देख मीरा कहां है, उसको बुला दे ।"

"वह भी चचीकी गोदमें बैठी है । चचीके पिताजी चौकी पर बैठे हुए फुस-फुस करके न जाने क्या कह रहे हैं, चचीजी कभी उनके मुंहकी ओर देखने लगती हैं और कभी रोने लगती हैं । मीरा भी वहां बैठी यह तमाशा देख रही है । मैं चचीके पिताको नानाजी नहीं कहूंगा । ये न जाने कैसे आदमी हैं, मुझे तो अच्छे नहीं लगते ।"

'छिः सनत् !' माताके इस छोटेसे धिक्कारसे क्षणभरमें संकुचित होकर पुत्रने फिर कहा,—"फिर वे चचीको रुला क्यों रहे हैं, इसीलिये तो मुझे अच्छे नहीं लगते ।"

"बेटे, तुम्हारी चची उनकी लड़की हैं—वे अपने सुख-दुःखकी बातोंसे रो रहे होंगे । तू दासूकी मांको बुलाला ।"

"अच्छा, बुलाता हूं, पर मां इनको किस बातका दुःख है ?"

"दुःख क्यों नहीं है, सन्तू ? जिस बातका हमें दुःख है, उसीका उन्हें है । तुम्हारे बाबा और पिता तुम्हारे चचाके लिये कितना रोते हैं, देखते नहीं हो ? उन्हींको याद कर ये भी रो रहे हैं ।"

बालक लज्जित और विषण्ण होकर चुप हो गया । उसका रोटीका

तकाजा करनेका उत्साह भी नष्ट हो गया। परन्तु माता उसी वक्त स्नान करनेके लिये तालाब पर चली गयी। उसकी जल्दी मचानेके कारण माता सिरमें तेल डालना भी भूल गयी हैं, यह सोचकर बालक एक बार फिर विषण्ण हो गया। उसने एक बार मनमें सोचा कि दौड़ कर मांसे कहूं, कि इतनी जल्दी करनेकी जरूरत नहीं है। मैं रातका बचा हुआ ठाकुरजीका प्रसाद खा कर ही स्कूल चला जाऊंगा। आज शनिवार है, डेढ़ बजे स्कूल बन्द हो जायगा, तभी आकर भोजन कर लूंगा। पर तुरन्त ही उसके ध्यानमें आया, कि बासी पूड़ी खानेसे इन वर्षाके दिनोंमें बदहजमी होकर बीमार हो जाऊंगा और कई दिन तक स्कूल जाना छूट जायगा। इधर बाबाजीको यह बात मालूम हो गयी, तो वे मां पर नाराज होंगे। लाचार होकर लड़का वहीं खड़ा मांके आनेका इन्तजार करने लगा।

२

बारिश जोर-शोरसे हो रही थी। धुआं भरे हुए रसोईघरसे सनत्‌की माताने आवाज दी,—"मीरा, एक बार यहां तो आना बेटी, अपने भैयाके लिये थोड़ेसे आलू लेकर उन्हें तराश दे।"

"आती हूं, ताईजी।" दूसरे कमरेसे आग्रहपूर्ण कण्ठसे उत्तर आया। परन्तु कुछ क्षण बाद ही, क्षुण्णतापूर्ण कंठसे ध्वनित हुआ,—"बारिश ऐसी जोरसे हो रही है कि मैं भीग जाऊंगी।"

धुआं भरे हुए जँगलेसे अपनी दृष्टिको जहांतक हो सका बाहर डाल कर (क्योंकि धूमराशि हवाके जोरसे घरके भीतर ही इकट्ठी हो

रही थी) ताईजीने कहा,—"हां, यह तो ठीक है, अच्छा रहो मैं ही कर लेती हूं ।" फिर अपने मनमें कहा,—"ऐसी बारिशमें बच्चे स्कूल कैसे जायेंगे ?"

"कौन स्कूल जायगा ताईजी ? मीरा ? हमारे स्कूलकी आज छुट्टी है, पण्डितजी कह रहे थे ।"

"कौन करुणा है, क्या ? ऐसी बारिशमें भीगते-भीगते यह कहनेके लिये आई है ? तुम लोगोंका स्कूल तो ऐसा ही है । खुलता ही कब है, जो आज छुट्टी होगी ? देखती हूं, आज सन्तूके लिये भोजन तैयार होना कठिन हो रहा है ।"

कहते-कहते वे रसोई-घरके भीतरसे बाहर आ गईं और कहा,—"भीगो मत करुणा, चौकी पर बैठो, मैं अभी आती हूं ।"

ठाकुरजीके घरसे खड़ाऊंका खट-खट शब्द होते ही सनत्की माताने उस ओर देखा। दरवाजा खुलते ही एक कौषेय-वस्त्र-उत्तरीय विभूषित सौम्य कान्ति प्रौढ़ मूर्त्ति उसको दिखाई दी। उनको देखते ही, सनत्की माँने अपने सिरका कपड़ा आगेको खिसका कर अपनी गतिका वेग कुछ कम कर दिया। घरके भीतरसे गृह-स्वामी मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने बारिशमें भीगती हुई अपनी गृहणी-पुत्रवधुकी ओर देख कर कहा,—"सनत् आज भी स्कूल न जाता तो क्या हर्ज था। पिछले कई दिनसे उनकी वर्षाकी छुट्टी थी, आज भी स्कूल खुलना मुश्किल है। कहीं तुम इस पानीमें भीग-भीग कर अपने शरीरको खराब न कर लेना और लड़केका—"

"माँ अब रसोई चढ़ानेमें जल्दी न करो। हरीश भैयाको स्कूल

का नौकर मिला था, उससे वे सुन आये हैं, कि आज भी हमारा रेनी-डे।" कहते हुए एक छोटासा छाता लगाये हुए, सनत्कुमार भी बाहरसे घरमें आ पहुंचा। परन्तु अपनी बात समाप्त होते न होते ही, ठाकुरजीके घरमें अपने बाबाका प्रबल कण्ठस्वर सुन कर एकदम चौंक कर सकतेसेमें आकर खड़ा हो गया।

"इतना बड़ा लड़का हो गया, अभी तक इतनी समझ भी नहीं आई, कि जब चार-पांच दिनसे स्कूल बन्द था, तो आज शनिवारको खुलेगा? सुबहसे स्कूल जानेके लिये भीगते हुए धरना दे रखा है। स्कूलमें जो पढ़ाई होती है, वह तो गङ्गामाई ही जानती हैं, हां घर भरके आदमियोंको हैरान जरूर होना पड़ता है। और फिर नंगे पैरों जलमें खड़ा ताक रहा है! खड़ाऊं पहननेका अभ्यास तो डालता नहीं, इस जलमें तो तुम लोगोंके बूट भीग कर मोम हो जायंगे। चलो तुम्हारी व्याकरणकी परीक्षा लूंगा। आज अरुण इस गांवमें नहीं है, नहीं, तो उसीसे तुम्हारी विद्याकी परीक्षा लेता।"

बालक धीरे-धीरे पुस्तक और खड़ाऊं लानेके लिये अपने शयन कक्षकी ओर चला। उस समय मालिक सिर पर छाता लगा कर खड़ाऊंसे खट-खट करते हुए आंगनमें आकर बोले,—"बेटी कहां है री?" उसी समय एक कमरेमेंसे फूलकी तरह सुन्दर मुंहने बाहर झांक कर देखा और व्यग्र तथा क्षीण कण्ठसे कहा,—"बाबाजी, मैं बारिशमें नहीं भीगी, घरमें माँके पास बैठी हूं।"

"खूब किया। अच्छा अब आओ तो आज हम यहीं स्कूल खोलेंगे।"

कुछ रुक कर बालिका धीरे-धीरे बोली,—"अभी तो पूजाके लिये फूल तोड़ने जाना है ।" बालिकाकी सम्पूर्ण अनिच्छापूर्वक कही हुई मानो दूसरेकी इच्छा द्वारा चालित बातको न समझ कर, बावाजीने हंसते हुए कहा,—"नहीं बेटी, तुम्हें फूल तोड़ कर जलमें भीगनेकी जरूरत नहीं है, तुम्हारी ताईजी सब कर लेंगी । तुम जरा मेरे पास तो आओ । देखूं तुम्हारे स्कूलने तुम्हें विद्याका कितना बड़ा जहाज बना दिया है ।"

अब तो बालिका किसीकी वाधा न मान कर, उस मेघ-मण्डित आकाशके नीचे, एक छोटीसो विद्युत-रेखाकी-भांति कूदती हुई बाहर आ गयी और एकदम बाबाजीका हाथ पकड़ कर आदरपूर्वक बोली,—"चलो न देखना में कितना पढ़ गयी हूं ।"

"तेरे नानाजी कहां है ? वे क्या अभी तक बाहर नहीं आये ?"

"वे इसलिये बाहर नहीं आये, कि उनका जूता और कपड़े भीग कर खराब हो जाते । वे घरमें बैठे माँसे बात कर रहे हैं । वे इस वक्त बाहर न जायंगे ।"

फिर रसोई-घरकी ओर देख कर कहा,—"करुणा बहन, कब आई हो ? आओ भाई, बाहर आओ । बाबाजी, करुणा बहनकी परीक्षा न लोगे ? देखो, यह मेरे सामने बुतसी बनी बैठी रहती है । यह मुझसे पार नहीं पा सकती । विश्वास न हो, तो ताईजीसे पूछ देखो, क्यों ठीक है न ताईजी ?"

"जानता हूं, खूब जानता हूं मेरी विद्याधुरन्धरी । अब बाहर चलो । करुणाको तेरी ताईसे कुछ काम मालूम होता है । अभी तो तुम दनों ही चलो ।"

कहते हुए भट्टाचार्य महाशय अपने प्रेमकी पुतलीको एक प्रकारसे खींच कर ही बाहर ले गये। पौत्र भी खड़ाऊं पहने और पुस्तक हाथमें लिये हुए उनके पीछे-पीछे चला। डरके मारे उसका मुंह सूख गया था। इससे तो स्कूल खुला होता तो ही अच्छा था। उसने करुणापूर्ण दृष्टिसे एक बार माताकी ओर देखा। माता उस समय रसोईघरके दरवाजे पर खड़ी हुई उस नवागत बालिकाके साथ बात कर रही थी। पुत्रकी करुण-दृष्टिके साथ माँकी दृष्टि मिलते ही, माताने कुछ हंस कर दूसरी ओर मुंह फेर लिया। श्वसुर और स्वामी की परस्पर विरोधी मतकी शिक्षामें बढ़ते हुए इन बालक-बालिकाओंके विषयमें विशेष कर सनत्‌की दुरवस्थासे कभी-कभी उसको ऐसी ही करुण हंसी हंसनी पड़ती थी।

भट्टाचार्यजीने करुणाकी ओर देख कर कहा,—"तुम्हारे पिता घर नहीं हैं, तुम भी भीगते हुए नहीं आना बेटा, मैं हरीशको वैद्यके पास भेजता हूं। वह दवा और दूध एक साथ दे आयगा। डरकी क्या बात है, अच्छी तरह दवा और पथ्य मिलते ही तेरा भाई अच्छा हो जायगा।"

बालिकाका पांडुवर्ण करुणापूर्ण मुंह, सान्त्वना और सहानुभूतिके स्पर्शसे कुछ लाल हो उठा। विषाद-शान्त नेत्रोंको हटा कर आंसू उसके गालों पर आ गये।

सनत्‌की माताने बालिकाकी इस शब्दहीन वेदनासे व्यथित होकर कहा,—"रोओ मत, भाई अच्छा हो जायगा, डर क्या है?" कहते हुए उसका सिर अपनी गोदमें लेकर आंचलसे आंसू पोंछ दिये।

इसी समय आंगन पार होकर मीराकी माता, रसोईघरके दरवाजे पर जा पहुंची । उम्र तो उसकी ज्यादासे ज्यादा पचीस वर्षकी होगी, पर देखनेमें और भी कम उम्रकी मालूम होती थी । सनत्की माता उससे अधिकसे अधिक दो वर्ष बड़ी थी, पर उसके सामने मीराकी माँ बिलकुल किशोरी मालूम होती थी । विषाद-मलिन और गूढ़ चिन्ता-च्छन्न मुखसे विधवा देवरानीने सधवा जेठानीकी ओर देखा । मलिन-वदना बालिकाको जेठानीकी गोदमें देख कर क्षणमात्रमें उसका कुंचित-भ्रू चिन्ता-म्लान मुख विरक्तिके उच्छ्वाससे आरक्त हो उठा । जेठानीकी ओर देख कर मीराकी माताने कुछ तीव्र स्वरसे कहा,—"बहन, आज दूधको इधर-उधर फिजूल न खर्च कर देना । पिताजीको दोनों वक्त दूध पीनेका अभ्यास नहीं है । कुछ खीर-वीर बना देनी चाहिये । कल तो बनाई नहीं गयी थी, आज तो बनेगी न ?"

सनत्की माताने कुछ संत्रस्त होकर उत्तर दिया,—"यह तो ठीक है, खीर जरूर बनानी चाहिये । दूधकी खींच हो गयी तो और सब काम छोड़ कर आज जरूर बनाऊंगी ।"

"फिजूल खर्च न किया गया, तो कोई काम न छोड़ना पड़ेगा बहन ।"

"छोटीबहू, तुम बार-बार फिजूल खर्च क्या कहती हो ? करुणा अब जा बारिश कम हो गयी है, तू घर जा, मैं अभी हरीशको भेजती हूं ।"

"दीदी, कल रायता-आचार न होनेसे पिताजी अच्छी तरह भोजन नहीं कर सके, आज यह कमी न रहे ।"

जेठानीने चिन्तित मुखसे कहा,—"हां यह तो ठीक है। कल वे जिस समय आये थे, उस समय तो जो तैयार मिला, वही खाना पड़ा। पर आज ऐसा नहीं होगा।"

देवरानी मुंह फुला कर अभिमानपूर्वक बोली,—"इतना दिन चढ़ गया, किसीने आजकी बात सोची भी है ? सब काम हो रहे हैं, पर—"

"मैं सब ठीक कर लूंगी। सन्तूका स्कूल बन्द है। मुझे झूठ-मूठ रसोई-घरमें आना पड़ा। अब फिर कपड़े बदलूं तब कहीं जाकर ठाकुरजी के घरमें जा सकूंगी। जा, तू इतनी देरमें थोड़ेसे फूल तोड़ ला। बारिशमें फूलोंको भी हालत खराब हो गयी।"

"ठाकुरजीके लिये तुम्हें चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी बहन, मैं सब किये लेती हूं। तुम पिताजीके लिये भोजनका इन्तजाम करो। बिना कहे, तो किसीको ध्यान ही नहीं होता।"

जेठानीने कुछ नाराज होकर कहा,—"क्यों तुमने याद दिला दिया तो क्या हर्ज हो गया। तुम भी तो इसी कुटुम्बकी हो। मुझसे यदि कोई भूल हो जाय तो तुम उसको ठीक कर सकती हो। तुम्हारे घर आकर यदि तेरे पिताको भोजन ठीक तरहसे न मिल सके तो यह तेरे लिये भी तो लज्जाकी बात है!"

"मेरी लज्जा और दुःख तो संसारसे ही नष्ट हो चुका है। अब क्या कोई बात मैं जोर देकर कह सकती हूं ?"

"तू कैसी पागलोंकीसी बातें कर रही है! इतनी छोटीसी बातपर इतना अभिमान नहीं किया जाता। करुणा, अपने भैयाके लिये थोड़ासा

खालिस दूध लेजा। जितना जल डाल कर उबाल कर दिखलाया है, उसी तरह कर लेना। आज मुझे फुरसत नहीं है, नहीं तो मैं ही ठीक कर देती। जा करुणा, तेरा बीमार भाई अकेला है।"

"अकेला तो नहीं है, मैं तो मौसीको बैठा कर आई थी ताईजी! हां, तो हरीश भैया वैद्यके पास...."

"हां हां, तुम्हें बड़प्पन नहीं दिखलाना पड़ेगा। रोगीको इतनी देर दूसरेके भरोसे नहीं रखना चाहिये, तू घर जा। सनतूको कह जाना कि तेरी मां बुला रही है।"

"बाबाजी तो उसको पढ़ानेके लिये ले गये है, ताईजी।"

"ले जाने दे। गृहस्थियोंके बच्चोंका केवल पढ़ने ही से काम नहीं चलता—"

दूधका गिलास हाथमें लेकर चबूतरेसे आंगनमें पैर रखते ही, छोटीबहू असहिष्णु भावसे कह उठीं,—"इस रिम-झिम रिम-झिम वर्षामें लड़कीको भिगोए बिना तो बहनको सुख नहीं मिलेगा। शायद उसको कहीं भेजना है, क्यों न?"

अभी तक करुणा आंगन पार नहीं कर सकी थी। उसको दिखा कर जेठानी। देवरानीको इशारा करनेवाली ही थी कि इससे मामला और भी बढ़ गया। मीराकी मांने झल्लाकर कहा,—"मुझे तो यह अच्छा नहीं लगता। तुम तो सभी बातोंमें अपनी मनमानी करती हो। दूसरों के लिये—"

बड़ीबहूने छोटीबहूकी बात काटकर कहा,—"छोटी बहू, ठाकुरजीके घरमें जाओ, मेरा काम तो इस तरह खड़े होनेसे नहीं चल सकता।"

आंगनमें आकर बड़ीबहू, बाहरवाले और भीतरवाले मकानके बीचके दरवाजेकी ओर बढ़ी। मीराकी मां विरक्तिकी चरमसीमामें पहुंचकर, न जाने क्या-क्या कहने लगी। उस समय सनत्‌की मांको इसकी वे बातें सुननेकी फुरसत नहीं थी।

३

गांव भरमें मृत्युञ्जय भटाचार्य ही सबसे अधिक धनवान मनुष्य थे। उनके उपयुक्त दो पुत्र भी कृतविद्य होकर उस छोटेसे ग्रामके लिये गर्वका विषय हो गये थे, किन्तु गांवके परम दुर्भाग्य से उस सौभाग्यका आधा हिस्सा, कुछ दिन हुए अकाल ही में नष्ट हो गया। भट्टाचार्य महाशयके छोटे पुत्र सुनन्दकुमारने डिपुटी मेजिस्ट्रेट होकर कई वर्ष तक सबके आनन्दको बढ़ाया था। एक वर्षसे अधिक हुआ, पिता, भ्राता और स्त्रीके हृदयमें वज्राघात करके नव यौवनमें ही वे इस असार-संसारको छोड़ कर चले गये। तबसे भट्टाचार्य-परिवारका आनन्द और सुख-समृद्धि बहुत कुछ बिदा हो गयी है। बड़ा पुत्र आनन्दकुमार, पिता और अपने बचपनके अभिभावक पितामहकी रुचिके अनुसार संस्कृत कालेजका एक विख्यात अध्यापक है। उनका पुत्र सनत्कुमार और स्त्री अरुन्धती हमेशा गांवमें ही रहती थी। क्योंकि भट्टाचार्य महाशय देव-सेवा, गो-बच्छी, खेती-बाड़ी, आश्रितजन और अपने पूर्व पुरुषोंका मकान छोड़कर बाहर रहनेके लिये बिलकुल तैयार नहीं हुए। ऐसी दशामें वृद्ध पिताको गांवमें अकेला छोड़कर, बड़े पुत्र आनन्दकुमारने अपनी स्त्री और पुत्रको अपने साथ

रखना उचित नहीं समझा। वे परदेशमें थोड़ी बहुत असुविधा होते हुए भी अकेले ही रहते थे। छोटे पुत्र सुनन्दकुमारको भी डिपुटी मेजिस्ट्रेटीके कारण बाहर ही घूमना पड़ता था। उसको एकदम निरानन्द जीवन व्यतीत करनेसे रोकनेके लिये भट्टाचार्य महाशयने उसकी लड़की मीरा और उसकी मां सरस्वतीको उनके साथ ही भेज दिया था। आज एक वर्षसे उनका वह सौभाग्य नष्ट हो जानेसे दोनों माता-पुत्री गांवमें ही रहती हैं। सरस्वतीके पिता भी एक सम्पन्न व्यक्ति हैं, विशेष कर वे शहरमें रहनेवाले व्यक्तियोंमें भी श्रेष्ठ, कलकत्ताके रहनेवाले हैं। उन्होंने अपने पुत्र-पुत्रियोंको अपनी रुचिके अनुसार शिक्षा दी थी। इसलिये वे स्वयं या उनके परिवारका कोई आदमी गांवमें रहना पसन्द नहीं करता था। आजकल वे अपनी विधवा कन्या और कन्याकी पुत्री मीराको देखनेके लिये आये हुए हैं।

उस दिन समधीके साथ भोजन करनेके लिये बैठे, तो उन्होंने देखा कि दोनोंके भोजनका स्थान यथासम्भव दूर-दूर कर रखा है और दोनोंके भोज्य-पात्रोंमें अन्यान्य वस्तुएं एकसी होने पर भी मत्स्य-मांसके द्वारा जो वस्तुएं तैयार की गयी हैं, वे केवल उन्हींके सामने आई हैं और किसीके आगे नहीं। मनमें हँसते हुए भोजन करने बैठे और दो-चार ग्रास खाकर हँसते हुए ही कहा,—"आज तो पण्डितजीको भोजन करनेमें बड़ी असुविधा हो रही होगी ?"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य अभी तक अपने अभ्यासके अनुसार चुपचाप ही भोजन कर रहे थे, पर अपने समधिके इस प्रश्नसे कुछ विस्मित होकर आश्चर्य-भावसे उनकी ओर देखा।

"आप क्या भोजन करते समय बोलते भी नहीं ?"

भट्टाचार्य महाशयने कुण्ठित भावसे गर्दन हिलाकर मृदु स्वरसे कहा,—"अतिथि-अभ्यागत या वन्धु-वान्धवोंके आ जाने पर तो बोलना ही पड़ता है। गृहस्थियोंका बांधा हुआ नियम तो किसी विषयमें भी पूरा करना हमेशा उचित भी नहीं है, आप भोजनकी बात क्या कह रहे थे ?"

"कह रहा था, कि आज मत्स्य-मांसकी गन्धसे भोजन करनेमें आपको कष्ट हो रहा होगा ?"

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। मेरे इस देव-सेवाके घरमें मत्स्य-मांस यद्यपि नहीं खाया जाता है, पर आनन्दकुमार वगैरह बाहर रहते हुए सभी खाते हैं और भोजनमें कष्ट होनेकी बात क्यों सोच रहे हैं ? आप देखते नहीं हैं, बहुओंने इसीलिये दोनोंके बैठनेकी जगह कितनी-कितनी दूर कर दी है ?"

"अच्छा, क्या मीरा और सनत्कुमार वगैरह भी मत्स्य-मांस नहीं खा सकते ?"

भट्टाचार्य महाशयने मुंह ऊपरको उठाकर प्रशांत स्वरसे कहा,—"हां, एक प्रकारसे न खाना ही समझिये। पर गांव-गँवईमें तो सदा मत्स्य-मांस मिलना भी नहीं है। इनको तो भगवान्का भोग खानेका ही अभ्यास है।"

"लेकिन भट्टाचार्यजी, यह क्या उचित है ? यदि इन्हें मत्स्य-मांस न मिला, तो बचपनसे ही इनका शरीर कृश बना रहेगा। आप नहीं खाते, इसमें कुछ हर्ज नहीं है—आप बूढ़े हो गये हैं, लेकिन

इनका नया जीवन है, इनके स्वास्थ्यका मूल पदार्थ पहले ही से इनसे दूर नहीं रखना चाहिये।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने हँसते हुए अपने समधिकी ओर देख कर कहा,—"आपकी धारणा क्या ऐसी ही है ? पर मेरी धारणा दूसरी तरह की है। आप क्या इनका स्वास्थ्य कुछ खराब देखते हैं ? मेरी मीरा और सनत् क्या काफी हृष्ट-पुष्ट नहीं हैं ?"

"आप शायद इसीलिये निश्चिन्त रहते हैं, यह दूध-घीकी ताकत किसी कामकी नहीं है। देखना कुछ दिन बाद ही इनका शरीर खराब हो जायगा और सुना है मीराको तो कभी-कभी ज्वर भी हो जाता है।"

"नहीं, ऐसे गांवोंमें रहनेवालोंको तो कभी-कभी ज्वर आ ही जाता है। बच्चे ठंढ-वंढकी परवा नहीं करते, दिन भर भीगते हुए कीचड़में फिरते रहते हैं और आप जो स्वास्थ्य खराब हो जानेकी बात कह रहे हैं, उसके विषयमें निवेदन है कि जो बच्चे नियमित रूपसे दौड़-धूप करते हैं, शुद्ध भोजन करते हैं उनके लिये ऐसा नहीं हो सकता। आप लोग जिसको 'एक्स रसाइज़' कहते हैं, वह जितना गांव-गोठमें होता है, वैसे सर्वाङ्गपूर्ण व्यायामकी व्यवस्था करनेका आप लोग सुयोग ही नहीं पा सकते।"

भट्टाचार्य महाशयकी इस बात पर ध्यान न देकर चन्द्रनाथ चक्रवर्तीने उद्विग्न मुखसे कहा,—"वर्षाऋतुमें तो गांवोंमें मेलेरिया-ज्वर हुआ करता है ?"

"हां, उसीका सूत्रपात है, पर मेलेरियाका समय शरद और हेमन्त ऋतु है, आज कल नहीं।"

"राम-राम ! ये ऋतुएं तो आ ही रही हैं । देखिये मेरी इच्छा है, कि मैं मीरा और सरस्वतीको अभीसे अपने साथ कलकत्ता ले जाऊं ।"

"मेलेरियाके डरके मारे ! देखिये, जो लोग सदा पेट भर भोजन करते हैं और पुष्टिकर खाद्य पदार्थोंका जिन्हें अभाव नहीं है, उनको जल्दीसे मेलेरिया नहीं पकड़ता । गांवके गांव जो मेलेरियासे नष्ट होते जा रहे हैं, वे अन्नाभावसे ही हो रहे हैं ! केवल—"

"ये सब धारणाएं आपके गांववालोंकी ही हैं ! खैर, कुछ हो, मैं अब इन्हें ले जाना चाहता हूं ।"

"हां, यह आप कह सकते हैं । लेकिन मेरा एक निवेदन है, कि सामने ही पूजा है, इस समय बच्चीको—"

"इसी लिये तो मैं जल्दी ले जाना चाहता हूं ।"

"पूजाके बाद ले जानेसे क्या काम नहीं चलेगा ? आपके यहां तो पण्डितजी, पूजा होती नहीं है ! मेरे दिन तो, सुनन्दके चले जानेके बाद महामायाको देख कर ही कट रहे हैं ।"

"लेकिन हम लोगोंकी दृष्टिमें यह बड़ा असङ्गतसा प्रतीत होता है, भट्टाचार्य महाशय , खैर, जैसी आपकी इच्छा, लेकिन मैं समझता हूं, कि सरस्वतो अपनी लड़कीको लेकर मेरे पास रहनेसे ही शान्ति प्राप्त कर सकेगी ।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य नीचा मुंह किये भोजन कर रहे थे, यह सुनते ही हाथ रोक कर उन्होंने समधीकी ओर देखा । उनके ध्यानमें इतनी देर बाद यह बात आई कि चक्रवर्तीजीके इस प्रकार अचानक आनेका

क्या कारण है। कुछ देर बाद मुंह नीचा करके गम्भीर स्वरसे कहा,—"बहू भी क्या ऐसा ही समझती है ?"

"समझती तो है ही। उन्हींके रोने-धोने अर्थात् उनके कष्टको—"

भट्टाचार्य महाशयने बाधा देखकर कहा,—सुनिये चक्रवर्ती महाशय, मेरे आनन्द और सुनन्दका यह घर-बार है—"सुनन्दके अभावमें उसकी स्त्री और कन्याका उसमें आधा हिस्सा है। पर यदि बहू अपने घरमें अपने आप ही अशान्ति अनुभव करती हों, तो क्या दूसरे के घर और दूसरोंके गृहस्थमें रह कर शान्ति प्राप्त करेंगी ?"

"पिताके घर, माँ-बापके पास रह कर शान्ति नहीं पायगी, तो और संसार भरमें कहां पायगी ? यद्यपि आप स्नेहके कारण यह कहते हैं, कि ये आधेकी मालिक हैं, पर क्या वास्तवमें यही बात है ?"

"आप क्या कहना चाहते हैं, कि सुनन्दकी स्त्री और लड़की सुनन्दकी सम्पत्तिकी अधिकारिणी नहीं हैं !"

"सुनन्द यदि स्वयं उपार्जन करके इनके नाम कुछ रुपया जमा कर जाते, तो ही ये उसकी अधिकारिणी होतीं ! लेकिन अब आपके रहते हुए, ये लोग कानूनन—"

"कानूनकी बात रहने दीजिये, क्या बहू भी ऐसा ही समझती है ?"

"सरस्वतीको तो मैंने लिखना-पढ़ना न सिखा कर, बर्तन-भांड़े मांजने नहीं सिखाये। मेरे घरकी तो यह रीति ही नहीं है। वह भी सब समझती है, कि कानूनसे अर्थात्—"

"अर्थात् उनके कानून-दां पिता ही आज दो-दिनसे बराबर समझा

रहे हैं, तभी वे समझी हैं, नहीं इतने दिन तो कुछ नहीं समझी थीं ! खैर, अब आप यह बतलाइये, कि आप क्या कहना चाहते हैं ?"

"मैं सरस्वती और मीराको ले जाना चाहता हूं। इस गांवमें रहनेसे मीराका न तो स्वास्थ्य ही ठीक होगा और न पढ़नेमें ही कुछ उन्नति कर सकेगी।"

"आप मीराके नाना यह चाहते हैं और मैं बाबा हूं, मैं यह नहीं चाहता। ऐसी दशामें आप क्या कहना चाहते हैं चक्रवर्ती महाशय ?"

"और यदि सरस्वती भी मेरी रायसे सहमत हो तो ?"

यह हो ही नहीं सकता, मेरी छोटीबहू, ऐसा नहीं कर सकती। यह केवल आपकी इच्छा और जिद है, जो आप उसके मुंहसे कहलाना चाहते हैं। वे अपने माता-पिताके पास दो दिनके लिये जाना चाहती हैं तो जायं, पर फिर जिस दिन उनकी इच्छा अपने घर चले आनेकी हो, चली आयं।"

क्रोधको यथासाध्य रोकनेकी चेष्टामें, अपने दोनों ओठोंको दबा कर चन्द्रनाथ चक्रवर्तीने कहा,—"समधीजी, शहरमें रहनेवाले हम लोगोंमें इतनी बुद्धि होनेका आप विश्वास कीजिये, कि जिससे गाँवमें रहने वालोंकी शिक्षाके अनुसार बनी हुई सम्मति और धारणाकी गलती निकाल कर दिखा दें। यह जो आप छोटी बहूके घर-बार की बात कह रहे हैं, इसका जरा भी मूल्य नहीं है, जब तक आप विल करके उनका आधी सम्पत्तिका अधिकार न दे जायं ! मीराकी माँ और मीराके भरण-पोषणके साधारण अधिकारके सिवा, इस घरमें

उन्हें और किसी बातका अधिकार नहीं है, यह बात क्या आप इतनी बड़ी उम्र हो जाने पर भी नहीं समझते ?"

"नहीं, मैं तो समझता हूं, कि मीरा और सनत्‌का बराबर अधिकार है।"

"यदि आप यह बात मानते हैं, तो आपको अभीसे एक विल कर देना चाहिये। यह तो आप जानते ही हैं, कि मनुष्य-जीवन···"

"अपना कर्तव्य मुझे हमेशा याद रहता है। आशा है, अब तो आपको लड़की और दौहित्रीको ले जानेकी आवश्यकता न होगी ?"

"क्या आप मजाक कर रहे हैं ? ये दोनों तो अभी मेरे साथ जायेंगी।"

"लौटेंगी कब ?"

"यह नहीं कहा जा सकता। सरस्वतीकी बड़ी भारी इच्छा है, कि मेरी पोतीके साथ मीरा लिखना-पढ़ना सीखे। अब वे मेरे साथ जायेंगी, फिर आप अर्थात्···"

अर्थात् जब मैं अपनी पौत्रीको कानूनन अधिकार दे दूंगा, तब मैं उन्हें ला सकता हूं, क्यों यही न ?"

चक्रवर्ती महाशयने इसका कुछ सभ्यताके खयालसे प्रतिवाद नहीं किया और भोजनमें ध्यान लगा दिया।

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य भी उनके उत्तरकी प्रत्याशा न कर चुपचाप भोजन करने लगे। भोजन समाप्त हो जाने पर कुल्ला कर चुकनेके बाद उन्होंने दृढ़ स्वरसे कहा,—"लेकिन यह समझ रखिये, चक्रवर्ती

महाशय, कि भगवान्‌के दिये हुए अधिकारको अस्वीकार करके जो लोग कानूनसे अपने स्वत्वकी रक्षा करना चाहते हैं, वे हमेशा ही जीवनपर संग्राममें जयी नहीं होते । मेरा बहुत दिनका पुराना रक्त, ऐसे अपमानके साथ अपने अधिकारको न ले सकेगा—इससे चाहे हृदय कट जाय ! मैं भी आज कहता हूं, कि उनको वह अधिकार तब तक नहीं दूंगा, जब तक वे भगवान्‌के दिये हुए अधिकारको सिर झुका कर स्वीकार नहीं कर लेंगे । आप अपनी कन्या और दौहित्रीको ले जा सकते हैं ।"

चन्द्रनाथ चक्रवर्तीने अभिमानपूर्वक उत्तर दिया,—

"अच्छी बात है । आप यह स्वप्नमें भी खयाल न कीजिये, कि मेरी लड़की और दोहती दो-रोटीके लिये आपके दरवाजे पर पड़ी रहेंगी ।"

४

वर्षा-ऋतुकी निरानन्द संध्या, दरिद्रियोंके झोंपड़ोंके आंगनमें दूने निरानन्दकी मूर्त्ति धारण कर फैल रही थी । वर्षा बन्द हो गयी है, पर गदला आकाश इन फूसके छप्परों पर मानो गिरा जा रहा था और उसके हृदयमें उस दरिद्र ग्रामके भीतरसे धूएंकी लहरें उठ कर, जगह-जगह पर जमी जा रही थीं । पशु और मनुष्य दोनोंको शामके वक्तकी मच्छड़ोंकी झङ्कारसे बचानेके लिये, लोगोंने यह धूआं स्वयं ही किया था । चारों ओर सड़ा हुआ कीचड़ हो रहा था । गांव में जगह-जगह वर्षाका जल रुक जानेसे तालाब बन रहे थे । उनमेंसे

मेड़कोंकी अत्यन्त गम्भीर आवाज और केले बांसोंके पेड़ोंमेंसे झिल्ली उत्कट शब्दके साथ मच्छड़ोंकी उच्च ध्वनि एक साथ उठ कर उस निस्तब्ध सन्ध्याको गुंजा रही थी।

मामूली सींखोंसे आंगनमें घेरा बना हुआ था। दो फूंसके छप्परों मेंसे एक छप्परका फूंस उड़ गया था, बन्धन सड़ कर ढीले हो गये थे और छप्पर कुछ नीचेकी ओर खिसक आया था। उसीके एक कोनेमें अब दरिद्र गृहस्थकी गोशाला बनी हुई थी। बाकी एक घरमें रहनेका काम चल रहा है। उसी घरके भीतरसे एक मलिन वसना बालिका एक मिट्टीका जलता हुआ दीया हाथमें लेकर बाहर आ खडी हुई। उस जरासे तेलवाले दीएके क्षीण प्रकाशने चौकके दोनों ओर मिट्टीकी दीवारवाले घरके मृत कङ्काल पर अपने अस्तित्वकी छाप लगा कर, दृश्यको और भी भयङ्कर कर दिया। बालिकाने अपने हाथके दीपक को एक बार आंगनमें चारों ओर घुमा कर माथेसे लगा लिया और फिर घरके भीतर जाकर, लकड़ीके दीपट पर रख दिया। फिर उद्विग्न नेत्रोंसे, उस संध्याके अन्धकारमें जहां तक दृष्टि जा सकती थी, वहां तक देखती हुई, दरवाजेके सहारे खड़ी हो गयी।

घरमें एक मैली-कुचैली शय्या पर एक रोगी पड़ा था। उसके आकार प्रकारसे यह नहीं मालूम होता था, कि लड़की है या लड़का। शीर्ण कङ्कालमात्र शरीर था। उसके जीवित या मृत होनेमें भी देखने वालेको सन्देह हो सकता था, यदि उसकी पसली और हृत्पिण्डमें थोड़ी बहुत गति न होती। उसके पास ही, तीन या चार वर्षका एक बच्चा चित्त होकर, उसी मलिन शय्या पर पड़ा सो रहा था। ऐसी

अवस्थामें, एक आठ वर्षके करीबकी बालिका, ऐसे एकान्त स्थानमें, एक मुमूर्षू और एक सोये हुए बच्चेको लेकर उद्विग्न और भीत हो जायगी इसमें आश्चर्य ही क्या है !

बाहर धीरे-धीरे अन्धकार बढ़ने लगा । भट्टाचार्य महाशयके घरकी आरतीका शब्द धीरे-धीरे बन्द हो गया । बालिकाको प्रतीत हुआ, कि आज आरती बड़ी जल्दी खतम हो गयी है । विचलित बालिका बीच-बीचमें रोगी और निद्रित शिशुकी ओर देख लेती थी, उनके थोड़े-बहुत हिलने-डुलनेसे भी उसको कुछ सान्त्वना मिलनेकी आशा थी ।

चौकमें किसी मनुष्यके पैरकी आहट हुई । बालिकाने बड़े आग्रह से कहा,—"आ गये पिताजी ?"

"करुणा, तुम्हारी अंगीठीमें क्या थोड़ीसी आग है बेटी ? दिया-सलाईकी डिब्बी ऐसी सील गयी है, कि दस-पन्द्रह सलाई खर्च करने-पर भी घासमें आग नहीं लगी । गो-बछड़े मच्छरोंके मारे बड़े परेशान हो रहे हैं ।" कहते-कहते एक गांवकी स्त्री दरवाजेके पास आकर खड़ी हो गयी और घरमें झांककर कहा,—"तेरे भाईकी तबीयत कैसी है ?" इस प्रश्नके साथ ही चौंक कर फिर कहा,—"हे राम ! पंडितजी घरमें नहीं हैं ! तुम इस रोगीके पास अकेली बैठी हो ?"

करुणाने रुआंईसी होकर कहा,—"हां, बुआजी अकेली हूं ।" यह उत्तर देनेके साथ ही वह उस स्त्रीके पास आकर खड़ी हो गयी । ऐसी असहाय अवस्थामें एक मनुष्यका मुख देखने ही से उसको बहुत कुछ ढारस मिल गया । बुआजीने सहानुभूतिपूर्ण कंठसे कहा,—"राम-

राम, इस रोगी और छोटेसे बच्चेको लिये हुए, इस जन-हीन मकानमें तुम्हें अकेले रहना पड़ रहा है बेटी ? क्यों तुम्हारे पिताजी कहाँ गये हैं ? और तेरा बड़ा भाई भी तो दिखाई नहीं देता, वह कहां गया ?"

"पिता भैयाको साथ लेकर दूसरे गांव गये हैं। वहां मेरे काकाजी रहते हैं।"

"तो क्या बेटी, इन छोटे-मोटे बच्चोंका तेरे ऊपर भार छोड़कर दिन भरसे निश्चिन्त हुए बैठे हैं ? इन ब्राह्मणोंमें क्या थोड़ी भी अक्ल नहीं है। कमसे कम किसी पड़ोसीको तो कह जाते। बेचारी बच्ची डरके मारे सोंठसी हुई बैठी है।" कहते हुए बुआ करुणाके सिर पर हाथ फेरने लगी। सहानुभूतिके स्पर्शसे बालिकाके नेत्रोंसे टपाटप आंसू पड़ने लगे। उसने वाष्परुद्ध टूटे-फूटे स्वरसे अपने पिता और भाईके ऊपर दोष मढ़नेवाली पड़ोसिनका प्रतिवाद किया,—"बहुत जल्दी ही ही तो है और आनेकी बात भी थी। वह गांव तो कुल दो कोस ही है। पिताजी चलते समय कह गये थे, कि बहुत देर नहीं होगी। हरि भूख-भूख करते हुए डरकर सो गया है। पता नहीं अब वे कब रसोई बनानेका सामान लायेंगे ?"

"तेरे बापकी बुद्धि भी ऐसी ही है, सुबहके वक्त अपने भाईके घर गये थे, वे क्या उन्हें बिना खिलाये ही छोड़ देते ? ऐसा हो था तो हरिको भी साथ क्यों न ले गये ? भोजनमें देर तो हो ही जाती है, पर अबतक तो आ जाना चाहिये था। तेरे भाईका अब क्या हाल है ?"

"वैसा ही है बुआजी, बुखार बड़े जोरका है, शरीर तप रहा है।"

"भगवान सबके रक्षक हैं।" कह कर कुछ चिन्तित भावसे फिर

कहा,—"तुम थोड़ी देर और बैठी रहो करुणा, मुझे जरा अपनी दियासलाई दे दो, मैं गौओंके पास धूआँ करके फिर तेरे पास आती हूं। बहू इतने ही में चिल्लाने लगी होगी। डरना नहीं, मैं अभी आती हूं। देख, यहां चौकी पर खड़े होकर हमारा घर दिखाई देता है। डर क्या है, मैं अभी आती हूं। हां, दियासलाईकी डिब्बी तो दे।"

दियासलाई लेकर 'कैवर्त-बुआ' अपने घर चली गयी। बालिका आशाके बलसे बलियान होकर दरवाजेके पास ही बैठ गयी। उसने सोचा, यदि डर लगा तो उनके घरकी रोशनी देखते ही वह डर कुछ कम हो जायगा। बच्चा इसी समय जाग उठा और 'पिताजी पिताजी' कहकर रोने लगा! करुणा त्रस्त होकर उसके पास आ बैठी और उसकी पीठ पर थपकी देती हुई उसको फिर सुला देनेका प्रयत्न करने लगी। पर बच्चा सोया नहीं, 'पिताजी' कहकर उठ बैठा और 'बहुत भूख लगी है।' कह कर रोना शुरू कर दिया। करुणामें अब उसको सान्त्वना देनेकी शक्ति नहीं रही। उसने कातर स्वरसे कहा,—"चुप रहो भाई, मेरे राजा पिताजी अभी आते हैं, चुप रहो तुम्हारे रोनेसे भैयाको तकलीफ होगी।"

इतनी देरमें रोगीकी भी नींद खुल गयी। वह 'उः आः' शब्दसे अपनी यन्त्रणा प्रकट करता हुआ अन्तमें व्याकुल स्वरसे बोला,—'जल।" करुणा छोटे भाईको छोड़कर अपने रोगी भाईके मुंहके पास आकर उसको थोड़ा-थोड़ा जल देने लगी। इसी समय चौकमें एक साथ कई आदमियोंके पैरोंकी आहट सुन पड़ी और साथ ही पिताका स्वर भी आया,—"बेटी करुणा!"

'पिताजी' कह कर करुणा जलका वतन हाथमें लिये हुए ही बाहर चली गयी। उसके साथ ही साथ छोटा बच्चा भी दौड़ गया।

"इतनी देरमें आये पिताजी? क्या हम लोगोंको डर नहीं लगता? हम लोग···"

"बेटी, मैं क्या यह समझता नहीं हूं। एक तरहसे दौड़े हुए आये हैं। वहांसे चलते ही शाम हो गयी थी। तेरे बड़े भैयाके पैरमें अंधेरेमें ऐसी चोट लगी है, कि···"

"क्या भैया आ गये हो? अजी तुम कैसे हो इतनी रात हो गयी है, छोटीसी लड़की डरके मारे मरा जा रही थी। ऐसा क्या भोज खाने गये थे, कि ऐसे रोगी और छोटे-छोटेसे बच्चोंको देखने के लिये भी किसीसो नहीं कह गये!"

"आओ बहन, हां भोज खानेके लिये तो मैं जरूर गया था। हे भगवन्!" कहकर क्षीण शरीर क्लान्त ब्राह्मण जमीन पर बैठ गया या यों समझिये, कि एक प्रकारसे गिर पड़ा। साथका बालक पंखा लानेके लिये भीतर गया। करुणाने अभीतक अपनी पहली शिकायत करनी बन्द नहीं की थी,—"हरिको भूख लगी है, उसको क्या खानेको दूं, बराबर रो रहा है—"

इस बार कैवर्त-बुआने धमका कर कहा,—"तू कैसी लड़की है री, देख रही है, बाप अधमरा होकर बाहरसे आया है, थोड़ी देर दम लेने दे—थोड़ा जल लाकर दे।" बालिकाके लज्जित होकर चुप होते ही घरमें क्षीण कंठसे ध्वनित हुआ,—"जल पिताजी—"

"अरे नरसिंह जल-जल कर रहा है करुणा। आता हूं बेटे आता हूं", कहते-कहते गिरते-पड़ते पण्डितजी उठ खड़े हुए।

बड़े पुत्रने उन्हें रोक कर कहा,—"पिताजी, तुम थोड़ी देर बैठ कर आराम करो, करुणा उसको जल दे रही है और मैं उसके पास जा रहा हूं।"

"नहीं भाई, बच्चेको दिन भरसे देखा नहीं है। सुना नहीं है, बेचारा पड़ा-पड़ा भी मेरे आनेकी राह देख रहा था। अरुण तेरे परमें चोट लगी है, थोड़ा देर शान्त होकर बैठ जा। आओ बहन घरमें आओ, मेरा नरू बच्चा कैसा है देख लो।"

ब्राह्मणके साथ ही साथ घरमें प्रवेश करके कैवर्त-बहनने खेद मिश्रित स्वरसे कहा,—"अभी तो थोड़ा देर पहले देख गयी हूं, बच्चा मानों बिस्तरेके साथ मिल गया है। पता नहीं, बेचारेकी जान इस रोगसे कब बचेगा!"

रोगी पुत्रके सिरहानेके पास बैठकर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए पिता आर्त कंठसे बोले,—"बच जायगा बहन? इस दुखीका धन अच्छा तो हो जायगा न?"

"भैया, तुम रोगी बच्चेके पास बैठ कर ऐसी बातें क्यों कह रहे हो? अच्छा क्यों नहीं होगा? जरूर राजी हो जायगा। हरि जरा इधर तो आओ भैया!"

हरि इतनी देर तक आंख मलते हुए अभिमानसे चुप-चाप रो रहा था। कैवर्त-बुआके इस आदरपूर्वक आह्वानसे, वह खुल कर रो पड़ा।

"इसको शायद भूख लगी है करुणा—आह, करुणा !"

"अभी देती हूं भैया, आओ हरि, थोड़ेसे चने खालो।" कहकर ज्येष्ठ पुत्र अरुणने अपनी छोटे भाईको अपनी गोदमें खींच लिया। इसी समय कैवर्त-बुआने कहा,—"रहने दो, रहने दो, ये चने कल सुबह खा लेना। तेरे लिये मैं खोई लाई हूं आओ हरि इन्हें खाओ।" कहते-कहते वह अपने आंचलमेंसे एक मुट्ठी खोई खोलने लगी।"

उनके पिताने आंसू भरे हुए नेत्रोंसे कहा,—"इसीलिये तो मैं किसीको नहीं कह गया था बहन। मेरे····"

"लेकिन तुम्हारा आजका यह काम अच्छा नहीं हुआ भैया, इस जंगलमें तुम्हारा घर है, चारों ओर सियार बोल रहे हैं, रोगी लड़का और छोटे-छोटे बच्चे यदि डर जाते तो ?"

"मृत्युञ्जय भट्टाचार्यको कह गया था, कि मैं अरुणको लेकर बाहर जा रहा हूं। मुझे विश्वास था, कि वे किसी आदमीसे इन बच्चोंकी खबर ले लेंगे। मुझे खुद पता नहीं था, कि इतनी देर हो जायगी ! भाईके साथ तर्क-वितर्क करते हुए इतनी रात हो गयी, फिर भी उनको जरा दया नहीं आई।" यह कह कर ब्राह्मणने दीर्घ नि:श्वास छोड़ा।

कैवर्त-बुआने उत्सुकताके साथ पूछा,—"भैया, वहां क्यों गये थे ? वे तुम्हारे कैसे भाई हैं ? क्या उन्होंने बुला भेजा था ? अपने भतीजोंको नहीं बुलाया था ?"

"मेरे चचाका लड़का है, उनकी स्त्री अपनी एक भानजीका पालन पोषण कर रही है, उसके साथ अरुणका विवाह कर अपने घरमें रखना

चाहती है। कल मैंने इस विषयमें भट्टाचार्य महाशयसे परामर्श किया था, तो उन्होंने मुझे बार-बार रोक कर कहा कि भाई ऐसा काम नहीं करना। इस चौदह वर्षके बच्चेका यदि अभीसे विवाह करके गलेमें सांकल डाल दी, तो अन्तमें इसकी भी तुम्हारी जैसी ही हालत होगी। तुम्हारे भाईकी ऐसी सम्पत्ति ही क्या है, जो हमेशा उसका भरण-पोषण होता रहेगा। और तुमने तो अरुणको पढ़ानेके लिये मेरे सुपुर्द कर दिया है। अब पांच वर्ष बाद मैं इसको आनन्दके सुपुर्द कर दूंगा, तब देखना, वह एक खासा आदमी हो जायगा। आज मैं उनकी बातको अनसुनी करके चला गया था, लेकिन भट्टाचार्य महाशय एक देवता पुरुष हैं, वे अपने मुखसे जो कहते हैं, वह एक प्रकार से देवाणी ही होती है। भाई साहबका जैसा ढंग देखा है, वह कुछ ठीक नहीं है। वे चाहते हैं कि अरुणको मैं उन्हें ही दे दूं। तुम तो यह जानती ही हो, कि मेरे नरु और अरु ये दो तो भरोसे ही हैं। मेरी गरीबकी सन्तान समझ कर और उनकी बुद्धि देख कर मास्टरों ने फीस माफ कर दी है और पुस्तक भी खुद ही देते हैं। वही नरु आज छः महीनेसे खाट पर पड़ा है। ऐसी दशामें यदि मैं अरुणको भी इस तरह दूसरोंको देकर अपने पाससे हटा दूं तो, मुझसे यह सहा नहीं जायगा।"

चक्रवर्ती महाशयकी बात सुन कर अत्युग्र विस्मयसे कैवर्त-बुआने कहा,—"यह कैसी बात कह रहे हो! लड़केका विवाह करके लड़का उनको दे देना पड़ेगा? यह कैसी बात है? ऐसी बात कहनेवाला सात जन्ममें भी पुत्रका मुंह नहीं देख सकता। तुम्हारे तीनों बेटे राजी

खुशी बने रहें, गरीब ही सही, मजूरी करके खा लेंगे। भैया, मेरी तो तुम सब बातें जानते हो! इस रत्ती भरके पोतेको लेकर और जवान बेटेको जलमें बहा कर भाईके घर आई हूं। इनका तो वैसा कुछ बड़ा रोजगार नहीं है, रोज कुआ खोदना, रोज पानी पीना। कुछ दिन तो बड़े कष्टसे बीते। अब वह दस बारह वर्षका हो गया है, तब कुछ जरा कष्ट कम हुआ है। गाय चराता है, और भात-दाल खाता है। और थोड़े दिनमें जवान हो जायगा, हल-पाथा सम्भालने लगेगा, फिर किसी बातकी चिन्ता न रहेगी। अपना बेटा क्या किसी दूसरे को दिया जा सकता है!"

चक्रवर्त्ती महाशय खिन्न होकर बोले,—"तुम लोगोंके घर हम लोगोंके घरोंसे अच्छे हैं बहन! इस उच्च वर्णके नामसे, ब्राह्मण, कायस्थ के घरमें पैदा होकर हम लोगोंको इतनीसी सुविधा भी नहीं है। हम लोग बिना खाये मर जायंगे, भीख मांग लेंगे, पर लड़कोंको गाय चरानेका काम करनेके लिये नहीं भेज सकते, भेजना भी चाहें, तो कोई अपने पशु उनसे चरवायेगा नहीं। हम लोगोंके लिये लिखने-पढ़ने और भिक्षा करनेके सिवा और दूसरा कोई मार्ग नहीं है! जो पिता अपने लड़कोंको लिखा-पढ़ा नहीं सकता, उसके लिये दूसरेको लड़का दे देनेके सिवा चारा ही क्या है? वहां तो बच्चा मनुष्य हो जायगा, सुखपूर्वक रहेगा! हम लोगोंके यहां तो लड़कोंके विवाहमें 'देने लेने का' नियम नहीं है, बहन। हम लोग गरीब वैदिक ब्राह्मण हैं, पांच सुपारी देकर ही कन्याका विवाह कर देते हैं। हां, जिसमें शक्ति है, वह अपनी इच्छासे चाहे जो कुछ दे दे, बस। वरपक्षके आदमी यह

नहीं कह सकते, कि यह दो, वह दो। यदि कोई कहे, तो वह बड़ी हेय दृष्टिसे देखा जाता है। आगे कुछ दिनोंमें तो जाल-पांतका पचड़ा ही नष्ट हो जायगा। मैंने अपने भाईसे ऐसी कोई बात नहीं कही। केवल यही कहा था, कि अरुणको तुम लेकर लिखना-पढ़ना सिखाओ, लेकिन मेरा यह सबसे बड़ा और पहला लड़का है, अपने छोटे भाइयोंका पालन करना इसीका कर्तव्य है। तुम्हारी तो बहुतसी जमीन-जायदाद और बाग-बगीचे हैं, मुझको यहीं थोड़ीसी जगह दे दो, मैं अपने गांवका घर बेच कर यहीं अरुणके पास आकर रहने लगूंगा।"

"हां तो फिर उन्होंने क्या कहा ?"

"क्या बतलाऊं क्या कहा ! कहता है, मैं क्या जमाईको इसलिये पालूंगा, कि वह तुम लोगोंकी सेवा करे ? लिखना-पढ़ना करके अब वह क्या करेगा, मेरी जायदादको दस आदमी खा रहे हैं, उसीको देखे भालेगा। लेकिन तुम लोग इस गांवमें नहीं आ सकोगे। नहीं तो जमाई हम लोगोंके अधिकारमें कैसे रहेगा ? तुम उसको अपना कह कर इतनी खींचा-तानी न कर सकोगे।"

"राम-राम पण्डितजी यह क्या कह रहे हो ? ऐसी बात उन्होंने किस मुंहसे कही है ? भूखे मर जाना अच्छा, पर अपनी रोटीको इस तरह किरकिरी न करना। भट्टाचार्य महाशय जो कहते हैं, वही ठीक है।"

चक्रवर्ती महाशयने दीर्घ निःश्वास छोड़ कर कहा,—"ठीक तो है, पर पांच वर्ष तक लड़का जो उनके पास पढ़ेगा, यह समय कैसे

कटेगा ? इससे यदि मैं तुम्हारी तरह मजदूर होकर पैदा होता तो मेरे बाल-बच्चे इस तरह भूखे तो न मरते । अब तो किसीके घर नौकरी कर लेनेका भी साधन नहीं हैं । हमारे पूर्व पुरुष तो बड़े-बड़े अध्यापक और देश-पूज्य पण्डित हो, सर्वमान्य गुरु बन कर अपने दिन बिता गये हैं, फिर हमारे पिता एक सीढ़ी नीचे उतर कर यजमानी पुरोहिताई कर गये हैं । लेकिन उनके पेटमें इस कामके लायक विद्या थी, पर मुझे वे इतनी भी नहीं देकर जा सके । और इस पर भी बचपनमें विवाह करके मेरे लिये उन्होंने जो कुछ किया है, वह तो तुम देख ही रही हो । यह तो भगवान ही जानते हैं, कि इतने प्राणियों को एक बार भी अन्न कैसे मिल जाता है !"

कैवर्त-बुआने सहानुभूतिके स्वरमें कहा,—"भैयाजी, वे यजमान क्या अब तुम्हें...."

चक्रवर्ती महाशयने उसकी बात काट कर कहा,—"यजमान अब हैं ही कहां ? गरीब गृहस्थोंमेंसे बहुतसे तो परमधामको सिधार गये हैं और जो दो-चार इस गांवमें हैं भी उनके अपने ही दिन बड़ी मुश्किल से कटते हैं । परन्तु जो बड़े आदमी हैं, वे इस गांवमें रहते ही नहीं—वे सब कलकत्ता या और किसी शहरमें रहते हैं । अमीर यजमानोंके घर मेरे पास होते, तो क्या बाल-बच्चोंकी ऐसी दशा होती, कि मैं उन्हें पुस्तक भी खरीद कर न दे सकता । पहननेमें फटे-पुराने कपड़े और खानेमें एक समय दो मुट्ठी चावल मिलते हैं । उनका तो गांवके साथ भी कुछ सम्बन्ध नहीं है, फिर पुरोहितोंकी तो बात ही क्या ?"

"हां, बच्चोंके लिये रातके समय तो कुछ खानेको है न? गो थोड़ासा दूध तो देती है न?"

"कहां देती है। बच्चा बड़ा हो गया है, दिन भर जङ्गलमें चरता है और शामको घर आ जाता है। भट्टाचार्य महाशयकी बड़ी बहू थोड़ासा दूध भेज दिया करती हैं, उसीसे कुछ नरुका काम चल जाता है। इसीलिये तो सोच रहा हूं, आजकल उनके घर छोटीबहूके पिता आये हुए हैं, व्यस्त हो रहे होंगे, नहीं तो दिन भरमें एक बार तो बच्चोंकी खबर जरूर ही लेते। जो थोड़ी बहुत दवा-दारू बच्चेके पेट में जा रही है, वह भी तो उन्हींकी कृपाका फल है।"

"बाल-बच्चे नींदमें टूल रहे हैं और अरुण अपने पैरको लिये बैठा है। घरमें कुछ हो, तो भैया इन्हें खिला-पिला कर अच्छी तरह सुला दो। रात हो गयी है, अब मैं जाती हूं भैया। लड़का सो गया होगा। दिन भर मैदान और जङ्गलोंमें, धूपमें घूमता रहता है, शाम होते ही सो जाता है, उठा कर खिलाना पड़ता है। पालागन है, पण्डितजी।"

"जाओ बहन! हरि, मधुसूदन!"

पुत्र कन्याओंको आज क्या खानेको दिया जायगा, यह बात याद आते ही, क्लिष्ट मर्माहत पिता उठ कर खड़े हो गये।

५

पूजाकी छुट्टियोंमें सनतूकुमारके पिता घर आये हुए थे। दोपहर के समयमें अरुन्धती स्वामीके पास बैठी हुई पङ्खा झलती हुई बात-चीत कर रही थी। बीच-बीचमें आनन्दकुमार नींदसे आंख

मीच लेते थे, तो वह चुप हो जाती थी। पर उसी वक्त आनन्द-कुमार कुछ कह कर चुप हो जाते थे ? पत्नीके वाक्यस्रोतको फिर बाधा युक्त कर देते थे। स्त्री कभी-कभी अनुरोध करती थी,—'अब नहीं, अब जरा सो रहो' पर स्वयं ही बात पर बात करती चली जा रही थी। स्वामी बारह मास बाहर रहते हैं और वह स्वयं श्वसुर और स्वामी के घरको सुव्यवस्थित रखनेके लिये घरमें रहती है। जिस स्त्रीका स्वामी बारहों महीने परदेशमें रहता है, उसका अपना घर भी ठीक घर नहीं हो सकता, उसका शरीर और मन प्रायः परस्परमें विरोध उत्पन्न करते रहते हैं। गरमियोंकी छुट्टियोंके बाद पूजाकी छुट्टी कुछ जल्दी ही आ जाती है, पर आनेवाले दीर्घ-विच्छेदको याद कर स्वामी और स्त्रीकी बातें समाप्त ही नहीं होना चाहतीं। ऐसा दीर्घ विच्छेद हमेशासे ही भोगना पड़ रहा है, इसलिये एक दूसरेके लिये सदा नये ही से बने रहते हैं। दोनोंमेंसे कोई किसीके लिये पुराना नहीं हुआ। इसीलिये, संसारकी साधारण बातें, घर भरके सुख-दुःखकी आलोचना ये सब उनके लिये समान आग्रहकी वस्तु थी।

स्त्री अरुन्धती कह रही थी,—"पहले साल पिताजीने इतने बड़े शोकके समय भी पूजा बन्द नहीं की थी, पर इस बार मीरा और छोटीबहूके चले जानेसे, तबसे भी अधिक कातर हो गये हैं। बोले,—'अब पूजा-ऊजा मुझे अच्छी नहीं लगती—इतने फिसाद अब मुझसे नहीं सहे जाते।' उनका शोक मानों चौगुना हो गया है।"

आनन्दकुमारने आंख मूंदे हुए कहा,—"सब समझता हूं, लेकिन उपाय क्या है ? पिताजीसे कुछ कहना भी कठिन है, सोचेंगे, लड़का

मुझे उपदेश देनेके लिये आया है ! ऐसे आदमीको धैर्यकी मात्रा और थोड़ोसी बढ़ानी चाहिये थी ।"

"धैर्यकी बात कहते हो ? मीरा तो उनका प्राण थी। वे उससे सनतूसे ज्यादा प्रेम करते हैं। उसी मीराको खोकर देखते नहीं हो, जिन कामोंके करनेका उन्हें जन्मसे अभ्यास था, उनमें भी कितनी गड़बड़ी हो गयी है। सनत्कुमार तकको अपने पास नहीं बुलाते। मीराके चले जानेके बादसे संध्या-आह्निकके बाद गांवके लड़कोंकी जो पाठशाला प्रतिदिन बैठा करती थी, वह भी बन्द हो गयी और यह तो तुम जानते ही हो, कि यह काम उनके कितने प्यारका था। हरिश्चन्द्र चक्रवर्तीका लड़का अरुण उनके मनके मुताबिक संस्कृत पढ़ सकता था, इसलिये उसका कितना आदर करते थे। अब तो देखती हूं, बाल-बच्चोंको देखते ही, उनके नेत्रोंमें जल भर आता है। मुंह लाल हो उठता है, तो दूसरी ओर ध्यान लगा लेते हैं। इस वर्ष हमारे यहां पूजा बन्द हो गयी है, इसी लिये घर सूना-सानासा मालूम पड़ता है, यह बात नहीं है ? घरके और बाहरके बच्चोंका वह बाजार श्रावणके महीनेसे ही बन्द हो गया है और बच्चे भी उनका यह उदासीन भाव देखकर अब उनके पास नहीं फटकते। सनत तो उनकी दृष्टिसे हमेशा छिपा रहनेका प्रयत्न करता है। डरता तो उनसे पहले ही बहुत कुछ था, पर अब तो उसका वह डर चौगुना बढ़ गया है।"

"सब समझता हूं—सब समझता हूं, किन्तु उनके धैर्यकी बात इस लिये कह रहा था कि सुनन्दके ससुरको बातोंसे उन्हें इतना रुष्ट नहीं होना चाहिये था। संसारके हाल-चाल और गति देख कर

यह आशा करनी ही व्यर्थ है, कि संसारके सभी मनुष्य देवता होंगे— यह भी एक भूल है। बहूके पिता यदि अपनी लड़की और दोहती के भविष्यके विषयमें इतने संदिग्ध हो गये हैं, तो उन्हें कुछ विशेष दोष नहीं दिया जा सकता। संसारमें दिन-रात यही तो होता है। विशेष कर वे कानून-कायदेके आदमी हैं, इन बातोंमें वे कानूनका ही अधिकार चाहते हैं और सबसे अच्छा उसे ही समझते हैं। यदि उन्होंने ये बातें उठाईं थीं, तो पिताजी कह सकते थे, हां, लिखा-पढ़ी कर देंगे। बस इतनेहीसे तो सब गड़बड़ी मिट जाती। यदि वे अपनी सम्पत्तिमें से आधी मीराकी समझते हैं तो, चन्द्रनाथ चक्रवर्ती यदि थोड़ीसी लिखा-पढ़ी करा लेना चाहते हैं, तो उसमें क्या दोष है ?"

"यह तो ठीक है, पर पिताजी न जाने क्यों इतने क्रुद्ध हो गये ? यह बात कहनेकी तो उस समय मुझमें भी ताकत नहीं थी। यदि तुम उस समय यहां होते तो मामला यहां तक न बढ़ता। पिताजीको समझा-बुझा सकते और छोटीबहूकी भी यह भूल हो गयी, कि वह उसीदिन यहांसे चली गयी। यदि और दो-चार दिन बाद जाती तो तुम्हें खबर देकर इसकी कुछ व्यवस्था भी की जा सकती थी। पिताजी-को क्रोध ही आ गया था, तो छोटी बहूको कुछ समझदारीसे काम लेना चाहिये था। मैंने कितनी बार उसका हाथ पकड़ कर कहा,— 'अपने जेठको घर आने दे' पर वह भी अपने बापकी तरह एकदम अधीर होकर रोती हुई, मीराका हाथ पकड़ कर अपने पिताके साथ गाड़ीपर जा बैठी। बापरे ! उस दिनकी बात याद करके तो अभी तक कलेजा कांपने लगता है।"

एक निःश्वास छोड़कर अरुन्धती चुप हो गयी। साथ ही साथ अनुभूतिके यन्त्रकी तरह आनन्दकुमारने भी एक निःश्वास छोड़ कर कहा,—"लेकिन मैं यहां आकर भी कुछ अच्छा प्रबन्ध कर सकता, मुझे तो ऐसा विश्वास नहीं होता। तुम तो पिताजीको सदासे देख ही रही हो। यदि वे कभी अत्यन्त क्रुद्ध हो जाते हैं, तो फिर क्या वे किसीकी सलाह मानते हैं? उनकी जिदके सामने उनका कोई भी कुछ नहीं है।"

"अहा! तुम केवल उनकी जिदकी बात सोच रहे हो, यह नहीं देखते, कि उनके हृदयमें कितना बड़ा घाव हो गया है? अभी तो उस दिन इतने बड़े पुत्र-शोकका धक्का लगा था, फिर उस लड़केके बाद जो लोग उनकी आंखोंके तारा हो रहे थे, उनको भी क्या ऐसा ही व्यवहार करना चाहिये था? छोटीबहूके पिता चाहे जो कुछ समझते रहें, पर वह क्या इतने दिनमें भी उन्हें पहचान न सकी थी? और भविष्यमें, जायदादके विषयको लेकर, किसके साथ विवाद होता? तुम्हारे या सनत्‌के साथ! क्या वे यह बात नहीं सोच सकते थे?"

"बड़ी बहू, तुम क्या कह रही हो? संसारके काण्ड क्या तुम नहीं देखती हो? घोष-परिवारमें क्या हुआ? बड़े भाईके मरते न मरते ही छोटे भाइयोंने मिलकर उसका सर्वस्व लूट लिया और उसके अनाथ बच्चों और उनकी मांको घरसे निकाल दिया। तुम्हीं लोगोंके मुंहसे सुना है, कि उसकी सास तो हमेशासे ही बहुको यन्त्रणा दे-दे कर मार रही थी। अन्तमें सास भी अपने और बेटोंके साथ मिल गयी और अपने अनाथ पोते-पोतियोंकी ओर एक बार भी नहीं देखा।

परन्तु बड़ा पुत्र तो कायदेसे सम्पत्तिका अधिकारी था, लेकिन फिर भी यह काण्ड हो गया और सच बात तो यह है, कि पिताजीके जीवित रहते हुए सुनन्दको तो कानूनन कोई अधिकार नहीं मिला था, और मीरा भी लड़का नहीं लड़की है, ऐसी स्थितिमें तो उन्हें संदेह होना ही चाहिये था।"

"ऐसी बात न कहो, पिताजी और तुम्हारे ऊपर भी ऐसा संदेह किया जा सकता है! तुमने जिनकी नजीर दी है, उनके घरमें तो हमेशासे ऐसा ही वैर-विरोध चल रहा था। बहू इतने दिन तक सब कष्ट सह रही थी, यही बहुत है, पर स्वामीके मरते ही सबका अन्त हो गया और तुम्हारे घरमें भी यदि बहू ऐसी बात सोचे, तो उन्हें नरकमें भी स्थान नहीं मिलेगा।"

"स्वामीने दीर्घ निःश्वास छोड़कर कहा,—"यह समय बड़ा कठिन है। छोटीबहूकी इस समय जैसी अवस्था हो गयी है, उसको देखकर यही कैसे कहा जा सकता है, कि उसकी बुद्धि ठिकाने रहेगी? ऐसे पतिसे हाथ धोना पड़ा, जीवनमें कभी दुःख उठाया नहीं था, सम्पन्न पिताकी लाडली लड़की है और यहां भी सबसे वैसा-ही आदर-सम्मान प्राप्त करती रही, कभी जरासी असुविधा भी सह्य न कर सकती थी और अब तक अधिकतर परदेशमें ही रही है। उसकी सुख-स्वाधीनता स्वामीके साथ चली गयी है। यदि उसके मनमें कोई ऐसी चिन्ता उत्पन्न हो गयी थी, तो उसको पैदा होते ही नष्ट कर देना चाहिये था।"

स्त्रीने अपने स्वामीकी बातोंको कुछ देर सोच कर कहा,—"हां,

यह भी ठीक है। ससुरजी यदि उनके इस अविश्वासको सहन कर, जैसा वे चाहते थे, वैसा ही कर देते, तो शायद छोटीबहू न जाती। लेकिन देखो, मैं तुम्हारे सामने यह बात कहती हूं, छोटीबहूको अब यहां रहना अच्छा नहीं मालूम होता था। उसके भाईकी लड़कियोंको कैसे सजा-बजाकर गाड़ीमें बैठा स्कूलमें भेजा जाता है, कैसे गाने जानती हैं, पियानो बजाती हैं, सिलाई सीखती हैं—पढ़ती-लिखती हैं, मीराको भी उस [illegible] पढ़ाने-लिखानेकी उसकी इच्छा थी, प्रारब्धके दोषसे वह न हो सका, इसका उसे बड़ा अफसोस था। पिताके घर जानेके लिये वह मन ही मन कुछ-कुछ छट-पटाती भी रहती थी। अब उसकी वह साध मिट जायगी।"

स्वामीने आंख मूंदे हुए कहा,—"यह तो कोई दोषकी बात नहीं है। उसके पिताके यहां लड़कियोंके पढ़ानेकी विशेष चेष्टा की जाती है। छोटीबहूके तो यह एक ही लड़की है। उसको यदि अच्छी तरह पढ़ाने-लिखानेकी इच्छा करती है, यह तो अच्छा ही बात है। मैंने स्वयं जाकर, बहू और मीरासे मिलकर उनसे कह दिया है कि मीराका सारा भार मेरे ऊपर है। पिताजी दो दिनके लिये नाराज हो गये हैं, धीरे-धीरे उनका वह भाव भी दूर हो जायगा। वे अपनी लड़कीको जैसे उनकी इच्छा हो, पालन करें। मीराके लिये मैं अपने वेतनका आधा हिस्सा प्रतिमास भेज दिया करूंगा। सनतके लिये तो कुछ कर नहीं सकूंगा, यह तो पिताजीकी तृप्तिके लिये हमेशा पशु बना रहेगा। खैर, लड़की ही थोड़ा-बहुत प[illegible] तो अच्छा है।"

अरुन्धती कुछ विचलित होकर बोली,—"क्या किया जाय, अब

तो यहां मीरा भी नहीं है, इस समय तो सनत्‌को यहांसे पृथक् नहीं किया जा सकता।"

"स्वामीने अपनी मुंदी हुई आंख खोलकर स्त्रीकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखते हुए कहा,—"लेकिन लड़केकी कितनी उम्र हो गयी है, इसका भी कुछ हिसाब है? इसके साथके कितने ही बच्चे और दो एक वर्षमें इन्ट्रेंसकी परीक्षा देंगे और यह इतना बड़ा होकर अभीतक तीसरे दरजेमें पढ़ रहा है, जानती हो?"

"यह तुम क्या कहते हो?—अभी बारहवां साल ही तो शुरू हुआ है। इसका दोष भी तो कुछ नहीं है। ससुरजी दिन-रात संस्कृत पढ़नेके लिये कहते हैं—और गांवके स्कूलोंकी बात तो तुम जानते ही हो। सनत्‌को तो लोग अच्छा योग्य लड़का बतलाया करते हैं।"

"लोग तो ऐसा ही समझा करते हैं। लेकिन सुनो अरु, हम सनत्‌के शत्रु माता-पिता होंगे, यदि कुछ दिन और उसको इसी तरह छोड़ दिया जायगा—उसके पढ़ने-लिखनेकी ओर मनोयोग न दिया जायगा। यदि मीराको लेकर छोटीबहू इस तरह न चली जाती, तो मैं इस बार सनत्‌को अपने साथ जरूर ले जाता, उससे पिताजी मेरे ऊपर चाहे कितने ही नाराज क्यों न होते। कैसे आश्चर्यकी बात है, कि हम लोगोंको पढ़ानेके समय तो उनका शिक्षाके साथ इतना विद्वेष नहीं था, अब जितनी अवस्था बढ़ती है, न जाने कैसे हुए जाते हैं। हरिश्चन्द्र भट्टाचार्यका लड़का अरुण अच्छा बुद्धिमान और विद्यालिप्सु है, पर उसके पिताकी सामर्थ्य उसको स्कूलमें पढ़ानेकी नहीं है, मास्टरोंकी कृपासे जितना पढ़ा जा सकता है और मनक

बाकी बची हुई इच्छा, पिताजीके पास संस्कृत पढ़कर पूरी कर लेता है। उसीके दृष्टान्तको सामने रखकर पिताजी सनत्को भी इन्ट्रेंस तक गांवके स्कूलमें पढ़ाकर उसका समय नष्ट करनेमें न जाने क्या लाभ सोच रहे हैं, वे यह तो सोचते नहीं, कि इससे सनत्की कितनी हानि होगी, यह सोचना तो मेरा काम है, मुझको और सनत्को जीवन भर····"

अरुन्धतीने बात काट कर कहा,—"लेकिन देख तो रहे हो, मीरा के चले जानेके बादसे अरुणको भी नहीं पढ़ाते। नहीं-नहीं, यदि सनत्की इतने दिन तककी क्षति उठा ली है, तो और थोड़े दिन सही, कमसे कम इस साल! अभी थोड़े दिन पहले छोटीबहू, उनकी गोद मेंसे मीराको छीन कर ले गयी है, अब तुम सनत्को ले जानेकी बात उनके सामने न चलाना।"

"लेकिन यदि एक वर्ष बाद भी मीरा यहां न आई! ये तो अपनी जिद छोड़नेके नहीं।"

"सो तो जो होना होगा, होयगा, पर अभी दोनों बच्चोंको उनके पाससे अलग नहीं करना चाहिये।"

आनन्दकुमारने निःश्वास छोड़ कर कहा,—"खैर रहने दो।"

फिर कुछ देर रुक कर बोले,—"लेकिन एक वर्षके बाद मुझसे फिर तुम ऐसा अनुरोध न कर सकोगी।"

"अच्छी बात है।"

——

६

पूजाकी छुट्टी समाप्त होनेमें अब अधिक दिन नहीं रहे । आनन्द-कुमार प्रातःकाल उठ कर पुत्र सनत्को साथ ले गङ्गा किनारे घूमनेके लिये गये थे । सनत्को अभी थोड़े दिन हुए मलेरिया हो गया था। पिताका हृदय अपने पुत्रके विवर्ण मुंहकी ओर देख कर अति शीघ्र विच्छेद हो जानेकी आशङ्कासे बीच-बीचमें कातर हो रहा था। थोड़ी देर बाद सनत्के माथे पर पसीनेकी बून्दें देख कर आनन्दकुमारने कहा,—"चलो सनत्, अब घर चलें।"

सनत् आग्रहपूर्वक आगेकी ओर बढ़ रहा था। पिताके घर चलने के आग्रहको सुन कर व्यस्त भावसे प्रतिवाद करता हुआ बोला,— "नहीं पिताजी, और जरासा चलने पर उस बांधके पास पहुंच जायंगे। वहां कैसी सुन्दर-सुन्दर मछलियां खेलती हैं, जरा चल कर देख तो लो। बाबाजी, हम लोगोंको इधर अकेले नहीं आने देते। चलो पिताजी वहां तक चलें।"

"तुम्हें पसीना आ गया है सनत्, अभी तुम दुर्बल हो, ज्यादा न घूमो। इस समय मछली देख कर क्या होगा? अब तो तुम हरिके साथ लुक-छिप कर धूपमें मछली पकड़ न सकोगे! इन्हीं कामोंसे तो तुम्हें इस बार ज्वर आया था, नहीं पहले तो कभी नहीं होता था।"

पिताके इस अनुयोगपूर्ण वाक्यसे पुत्रने मुंह नीचा कर लिया—और चुपचाप पिताकी आज्ञाके अनुसार घरकी ओर चलते हुए सहसा कह उठा,—"तुम कलकत्ता कब जाओगे पिताजी?"

"और छ-सात दिन बाकी हैं सनत्।"

"तुम मीरा बहनके पास रोज जाया करते हो ? वह तुम्हें रोज मिलती है ?"

पिताने क्षोभ मिश्रित हंसी हंस कर कहा,—"यह बात तुम कितनी बार पूछोगे ?"

सनत् लज्जित होकर हंसता हुआ बोला,—"मैं भूल जाता हूं, पिताजी, कभी-कभी जाया करते हो ? अच्छा, जिस दिन यहांसे कलकत्ता पहुंचोगे, उसी दिन जाओगे ?"

"उस दिन नहीं जा सकूंगा। उससे एक या दो दिन बाद जाऊंगा।"

"दो दिन बाद ? इतनी देर कर दोगे ? मैं होता, तो कलकत्ता पहुंचते ही मीराके पास दौड़ा जाता।"

पिताने पुत्रको इस बातका कुछ प्रतिवाद नहीं किया, क्योंकि इस प्रसंगके आ जानेसे वे कुछ विमनासे हो गये थे। कुछ देर बाद सनत्‌ने मृदु स्वरसे कहा,—"पिताजी, एंट्रेंस पास करनेके बाद मैं कहाँ पढ़ूंगा।"

"क्यों ? कलकत्तेमें।"

"उसमें तो अभी बहुत दिनकी देर है। क्या मैं आजकल कलकत्तामें नहीं पढ़ सकता ? अच्छा, मीरा अब स्कूलमें पढ़ने जाती है और न जाने क्या-क्या करती है—मां कह रही थी। हां पिताजी, जब मीराको स्कूल वालोंने दाखिल कर लिया है, तो मुझे नहीं करेंगे ? मीराने बाबाजीसे थोड़ेसे श्लोक ही पढ़े थे—इतनी ही तो उसकी विद्या है। स्कूलमें 'कविता-कलाप' और 'कथा-माला' ही तो पढ़ा

करती थी। वह इतनी विद्वान् कैसे हो गयी, जो कलकत्ताके स्कूल-वालोंने स्कूलमें दाखिल कर ली ? मैं मीराका बड़ा भाई हूं, उससे तीन-चार वर्ष बड़ा हूं, ऐसी हालतमें वे मुझे अवश्य दाखिल कर लेंगे और मेरी 'इंग्लिश-रीडर' 'ग्रीव्स-पोपुलर स्टोरीज़' को देख कर तो कुछ कह ही नहीं सकते।"

पिता अन्यमस्क भावसे केवल,—"वह तो लड़कियोंका स्कूल है, तुम वहां नहीं पढ़ सकते ? कह कर मार्ग अतिवाहित करने लगे।"

सनत् कुछ आश्चर्य चकित होकर उनकी ओर देखता हुआ, पीछे-पीछे चलने लगा ! आह ! क्या सनत् इतना भी नहीं जानता, कि मीरा लड़कियोंके स्कूलमें पढ़ती है ! यहां भी तो वे एक ही स्कूलमें पढ़ते थे ! लड़कियोंका स्कूल तो गांवकी पाठशाला ही में शामिल है और मैं अंगरेजीकी चोथी क्लासका विद्यार्थी हूं। सनत्के ध्यानमें यह बात नहीं आई कि पिताजीने यह कैसे सोच लिया, कि मैं मीराके स्कूलमें पढ़नेकी बात कह रहा हूं।

घर पहुंचते ही सनत्कुमार इस दुरूह समस्याकी मीमांसा करनेके लिये, अपनी माँको ढूंढ़ने लगा और आनन्दकुमार अपने कमरेमें बैठ कर थकावट दूर करने लगे। इसी समय उनके कानमें पिताजी की आवाज आई, इसलिये वे उनके पास जा पहुंचे। मृत्युञ्जय भट्टाचार्य उस वक्त कोई पुस्तक देख रहे थे—पुस्तक देख रहे थे या पुस्तक के पन्ने पर दृष्टि जमा कर कुछ चिन्ता कर रहे थे, यह भी नहीं मालूम हो सका। उस विशाल ललाट पर, बुढ़ापेकी झुर्रियोंके पास ही चिन्ताके गम्भीर चिन्ह प्रकट हो रहे थे। आनन्दकुमारके पास

पहुंचते ही उन्होंने कहा,—"तुम्हारी छुट्टीके अब कितने दिन बाकी हैं ?"

"अभी एक सप्ताह है ।"

"अभी एक सप्ताह है ?"

"इस बार जाते समय सनत्‌को भी साथ ले जाना । उसकी यहां अच्छी तरह पढ़ाई नहीं होती ।"

यह सुन कर आनन्द कुछ अचानक इतना ज्यादा चौंक उठा, कि पुस्तकमें ध्यान लगाये हुए भट्टाचार्य महाशयको भी अपने पुत्रके इस तरह चौंकनेसे उसकी ओर देखना पड़ा । यह कैसा असम्भव काण्ड है ! आनन्दकुमार क्या स्वप्न देख रहे हैं ? या पिताजी अन्तर्यामी हैं ? पुत्रकी पढ़ाईमें काफी क्षति हो रही है यह समझते हुए भी, जिस पिताके मनके कष्ट और असन्तुष्टिके भयसे, आनन्दकुमार यह बात अभी तक जबान पर नहीं ला सका था, वह पिता अपने मुंहसे यह बात कह रहे हैं ! आश्चर्यके साथ ही अप्रत्याशित आनन्द की एक तीव्र झलक, आनन्दकुमार सहसा संवरण नहीं कर सके और एक प्रकारसे असंयत भावसे कह उठे,—"आप—आप कह रहे हैं, यह बात ?"

"हां, मैं ही कह रहा हूं ! इतने दिन तक मैंने जो आपत्ति की थी, वह भी अनुचित थी । इस बार इसको तुम अपने साथ ले जाओ ।"

आनन्दकुमार इस बीचमें कुछ सुस्थिर हो गये थे । इस बार जबसे वे छुट्टीमें आये थे, अपने पिताकी सदा हास्यमय प्रसन्न कान्ति को सर्वदा विमर्ष मलिन देखा करते थे । इस समय मानों उसके ऊपर

एक तह स्याहीकी और चढ़ गयी है, यह बात इतनी देर बाद आनन्द-कुमारकी नजरमें खटकी। पिताका गम्भीर स्वर मानो और भी गम्भीर हो गया है। आनन्दकुमारने थोड़ी देर सोच कर कहा,—"इस साल तो इसको यहीं—"

"ना-ना।" हाथके इशारेसे आनन्दकुमारको वहांसे चले जानेके लिये कहते हुए बोले,—"ले जाओ इसको, यहां एक दिन भी नहीं रखना।"

आनन्दकुमार समझ गये, कि इसका और प्रतिवाद करना व्यर्थ है, पिताजी एक नहीं सुनेंगे। अपने पिताके स्वभावको वे हमेशासे ही जानते थे। आनन्दकुमार कर्तव्यविमूढ़ भावसे धीरे-धीरे अन्तःपुरमें अपनी स्त्रीके पास चले गये।

अपने हाथकी वेदान्तसार नामक पुस्तकके ऊपर चिपकी हुई दृष्टि के अचानक हटते ही भट्टाचार्य महाशयने देखा, कि उनके सामने बड़ी पुत्रबधु खड़ी हुई आंसु पोंछ रही है। उसके ऊपर दृष्टि पड़ते ही श्वसुरने त्रस्त होकर आंख नीची कर ली।

"पिताजी!"

श्वसुरने अत्यन्त धीमे स्वरसे कहा,—"क्यों बेटी?"

"यदि सनत्को पढ़नेके लिये भेजना है, तो मीराको मेरे पास ला दो—नहीं तो मैं अकेली न रह सकूंगी।"

"मीरा? मीराको कहांसे लाऊं?"

"जहांसे लाई जा सकती हो, वहींसे लाइये—उन्हींकी बात रहने दीजिये।"

श्वसुरने अत्यन्त व्यस्त और श्रान्त स्वरसे कहा,—"बेटी, वे तो अब नहीं आ सकते और मुझसे भी यह काम न होगा। देख यह मीराकी चिट्ठी है! जब वह आनन्दपूर्वक है, तो फिर यहां लानेकी क्या जरूरत है?"

अरुन्धतीने देखा, कि टेढ़े-मेढ़े और लम्बे-चौड़े अक्षरोंमें लिखी हुई एक लम्बी चिट्ठी है। यद्यपि अभी तक वह अपने श्वसुरकी लिहाजसे, उनके सामने कुछ नहीं पढ़ा करती थी, पर इस पत्रको बड़े आग्रहसे उनके हाथसे लेकर धीरे-धीरे पढ़ने लगी।

"बाबाजी, तुम कैसे हो? मेरा मन तुम्हारे, भैया और ताईजी के लिये बड़ा दुखी रहता है। तुम बड़े दुष्ट हो, हम लोगोंको निकाल दिया है; ताऊजी, मुझसे खूब प्यार करते हैं और मुझे देखनेके लिये आया करते हैं। कहते थे, बहुत जल्दी सनतूको भी यहां ले आयेंगे। तुम भैयाको पढ़नेके लिये यहां भेज क्यों नहीं देते? क्या उसको मूर्ख बना रखोगे? तुम बड़े दुष्ट हो, हम लोगोंको भगा दिया है और अब भैयाको भी नहीं आने देते! हम लोग अब तुम्हारे पास कभी नहीं आयेंगे। मैं यहां ईला बहनके साथ, सज-बज कर और गाड़ी पर बैठ कर स्कूलमें पढ़नेके लिये जाती हूं। तुम्हारे यहां न तो ऐसी गाड़ी है और न ऐसे स्कूल ही। ईला बहन मुझसे बहुत अच्छी तरह लिख-पढ़ सकती है—करुणा बहनकी तरह—फिर भी मुझसे अच्छा पढ़ती है। उसने और मैंने, दोनोंने मिल कर यह चिट्ठी लिख कर तुम्हारे पास भेजी है। भला बतलाओ तो मुझे तुम्हारा पता कैसे मालूम हुआ? नहीं कभी नहीं बतला सकते। ताऊजीसे पूछ कर

लिख लिया था, उसीको देख कर ईला बहन लिख देगी। मैं तो लिख नहीं सकूंगी। मैंने तुम्हारे पास चिट्ठी लिखी है, यह बात तुम भैया और ताईजीसे न कह देना। स्कूल जानेके समय, इसको उस लाल बक्समें डाल दूंगी। तुम ताऊजीके साथ भैयाको भी भेज देना, दोनों एक साथ पढ़ा करेंगे। एक दिन ताऊजी नानाजीसे कह रहे थे, कि तुम भैयाको अच्छी तरह पढ़ने-लिखने नहीं दोगे। मेरे अच्छे बाबाजी तुम भैयाको भेज देना। मेरा प्रणाम ग्रहण करना। जब मैं बड़ी हो जाऊंगी और माँ मुझसे कुछ नहीं कह सकेगी, तब मैं आपके पास आऊंगी। माँ अच्छी तरह है। मामा लोग और यहांके और सब लोग भी अच्छी तरह हैं। ईला बहन बड़ी अच्छी हैं। मैं भी अच्छी तरह हूं। ईला बहनके साथ मेरी खूब पटती है। चिट्ठीका जवाब देना।

इति—सेविका मीरा"

चिट्ठी समाप्त करके अरुन्धती क्षण भरके लिये स्तब्ध हो गयी। उसके कानमें मीराके शब्द गूंजने लगे। और सब बात भूल कर इस आनन्द पुत्तलिकाकी विरह-वेदना नयी होकर हृदयमें पहुंचने लगी। घरका पक्षी उड़ कर जो दूसरेके पास चला गया है, शायद वह थोड़े ही दिनोंमें बोली भी दूसरों ही की बोलने लगेगा। यह व्यथा, उसके श्वसुरके लिये कैसी असहनीय है, यह सोच कर वह अपने सम्मुखागत दुःखको थोड़ी देरके लिये भूल गयी। कुछ देर बाद आंख पोंछ कर उसने कहा,—"हम लोग फिर किस तरह रह सकेंगे?"

"जिस तरह रहते हैं, उसी तरह रहेंगे बेटी! सुनन्द छोड़ कर चला गया, मीरा भी—"

"जाओ ! वे तो फिर आ जायंगे। छोटी बहूकी बुद्धि और थोड़ी पकते ही समझ जायगी, लेकिन सनत्‌को ...."

"इसमें आपत्ति न करो बेटी—आनन्दकी इच्छामें मैं कोई विघ्न न डालूंगा। ये लोग जैसा चाहते हैं, वैसे ही बच्चोंकोको लिखायें-पढ़ायें।"

बहूने अस्फुट स्वरसे कहा,—"मैं यदि न रह सकूं।"

श्वसुर उठ कर बहूके पास आये और उसके सिर पर आशीर्वाद पूर्वक हाथ फेरते हुए बोले,—"रह सकोगी बेटी, मैं आशीर्वाद देता हूं, तुम रह सकोगी।" फिर कुछ चिन्तित भावसे सहसा बोले,—"लेकिन सनत् न रह सके ?—तुम जाओगी बेटी उसके साथ ?"

"ना पिताजी, मुझसे ऐसी बात नहीं कहना। आपको छोड़ कर मैं कहीं नहीं जा सकूंगी।" कहते-कहते अरुन्धती आर्त्त कण्ठसे रो उठी।

श्वसुरने फिर उसके सिर पर हाथ फेरा और अपने दोनों हाथोंको सूंघ कर स्नेह मिश्रित गम्भीर स्वरसे कहा,—"यह मैं जानता हूं। खैर तुम यहीं रहो, तुम मेरे लिये ही यहां रहो ! मुझमें भी इनके साथ तुम्हें कलकत्ता भेज देनेकी ताकत नहीं है। भगवान् शायद, इतने आत्मसुखके लिये मुझको क्षमा कर देंगे।"

इसी समय आंगनमें से किसी बालकने आर्त्तकण्ठसे आवाज दी—"बाबाजी, बाबाजी !"

"कौन अरुण है ? क्या है ?"

यह कहते-कहते भट्टाचार्य महाशय घरसे बाहर आ गये। मीरा

के चले जानेके बादसे न तो उन्होंने ही उसको पढ़नेके लिये बुलाया था और न वह खुद ही आया था। और आज अचानक, इस तरह आर्त कण्ठकी आवाज़ सुन कर वे कुछ चौंक उठे।

नंगे पैर, नग्न शरीर, रुक्ष-मलिनवेश वाला चौदह वर्षका बालक अपनी लाल-लाल आंखोंसे एक ओरको देख रहा था। भट्टाचार्य महाशयको सामने देखते ही बोला,—"क्या आप बतला सकते हैं, मेरे पिता कहां है ?"

"तेरे पिता ? हरिश ? मुझको तो मालूम नहीं है। क्यों क्या वे मकान पर नहीं थे ?"

"रात तो थे, पर जब रातको दोपहरके समय नरू हम लोगोंको छोड़ कर चला गया—"

"क्यों नरू कहां गया ? मर गया ! हाँ, नरू—"

"हाँ, रातको वह चला गया। तबसे हम लोग बहुत देर तक जागते रहे। पिताजी हम लोगोंको 'सो जाओ सो जाओ' कहते हुए नरूको छातीसे लगाये पड़े रहे। सुबह तक मुझे नींद नहीं आई, फिर कुछ तन्द्रासी आ गयी थी, जाग कर देखा, पिताजी नहीं है। बहुत देर हो जाने पर भी जब नहीं आये तो चारों ओर ढूंढ़ रहा हूं, कहीं नहीं मिले।"

"चलो-चलो।" कहते हुए भट्टाचार्य महाशय उसके साथ दौड़ कर बाहर हो गये। अपने शरीरका अस्तित्व मानो उस वक्त वे भूल गये थे। रास्तेमें पूछा,—"कब गये थे, करुणा उस विषयमें कुछ नहीं बतला सकी ?"

"करुणा कहती है, कुछ प्रातःकाल होते ही, उन्होंने धीरे-धीरे उठ कर नरूको एक बार चुम्बन कर और 'मेरे बेटे, घरमें पड़े रहो, बिस्तरे पर लेटे रहो।' कहते हुए दरवाजा खोला था। करुणाके 'पिताजी' कहते ही कहा 'चुप रहो, सबकी नींद खराब न करना, मैं बाहर जाता हूं।' वह बच्चा है ही, चुप हो गयी। जब मैं जाग कर उससे पिताजीके विषयमें पूछा, तो उसने सब बात कह दी।"

"गोशाला वगैरहमें देख लिया? कहां कहां ढूंढ़ा है? उन्हें आज किसीने नहीं देखा?"

"कोई कुछ नहीं कह सकता! अब और कहां ढूंढ़ूं? तमाम रास्तोंमें, जंगलकी ओर, गांवके आस पास—कहीं नहीं हैं!" कहते हुए दोनों हाथोंसे अपने मुंहको ढंक कर बालक बड़ी कठिनाईसे उच्छ्वासित क्रन्दनका वेग रोकते हुए चुप हो गया। भट्टाचार्यने अपनी चाल और भी तेज कर दी।

७

रास्ता कुछ ज्यादा नहीं था और पथिककी गति भी कुछ कम नहीं थी, एक प्रकारसे उनकी शक्तिकी सीमाके पास पहुंच गयी थी, परन्तु मृत्युञ्जय भट्टाचार्यको वह पथ पूरा होना ऐसा मालूम पड़ता था, कि न जाने कितने घंटे लग गये हैं। जब वे हरिश्चन्द्र भट्टाचार्यके घर पहुंच गये, तो हताशाच्छन्न भावसे दरवाजेके पासकी खूटी पकड़ कर खड़े हो, एक बार चारों ओर देखा। वर्षाके प्रबल आक्रमणसे वह शत-छिद्र गृह बड़ी मुश्किलसे अपने अस्तित्वको बनाये

हुए था। लेकिन उसमें जो लोग रहते हैं, गृहवास शब्द ही उनकी सम्पत्ति है, घरकी सुख-सुविधा किसी तरहकी भी न रह गयी थी।

अनाजकी कोठी एक ओर लुढ़की पड़ी थी, गो जङ्गलमें चर कर अपने स्वामीके मकानमें ही खड़ी हो जाती है। उस घरमें तैजस या या सम्बलके रूपमें मिट्टीके बर्तनोंके सिवा और कुछ नहीं था। ब्राह्मण होकर गो-विक्रय तो किया नहीं जा सकता, इसलिये केवल एक गौ मनुष्योंमें मिल कर उनके साथ सुख-दुःख भोग रही थी।

दरवाजेके सामने करुणा छोटे भाईको गोदमें लिये बैठो है। उस के शीर्ण और पोड़ित मुख पर आतंकके भावोंका पलस्तरसा हो रहा था। दो पड़ोसिन दूर खड़ी हुई 'हाय-हाय' करती थीं। कोई आ रहा था और कोई जा रहा था और लोग प्रश्न पर प्रश्न करके दुःखके प्राबल्यसे वाक्यहीना बालिकाको और भी वाक्य रहित कर रहे थे। भट्टाचार्य महाशयको देख कर भी बालिकाने दुःखके प्राबल्यसे, उनकी ओर देखनेके सिवा और कुछ नहीं कहा।

भट्टाचार्य महाशयने घरमें जाकर देखा, कि टूटो-फूटी खाट पर मैले और फटे हुए कपड़ोंसे किसीको ढंक रखा है, घरमें और कोई नहीं है। वे समझ गये, कि पुत्रत्राण पिता, इस तरह पुत्रके शवको कोनेमें ढंककर अपने आप शोकके प्राबल्य और उद्भ्रान्त चित्त से न जाने कहां चले गये या क्या किया, इसका किसीको कुछ पता नहीं। इस मृत लड़केको वे बचपनसे ही देखा करते थे और उसकी इस वर्ष भरकी बीमारीमें औषध-पथ्य भी बहुत कुछ उन्होंने किया था, केवल दो माससे वे और शायद उनका घर भी अपने दुःखसे

ऐसे मुह्यमान हो गये थे, कि संसारमें और किसीकी खोज-खबर न ले सके थे। इसी अभिमानसे मानों उस मृत बालकने अपने मुखको उद्भ्रान्त पिताके हाथोंसे इस तरह ढँकवा लिया है। मानों अब वे संसारमें किसीको न तो अपनी दुःख वेदनाका ही अनुभव होने देंगे और न अपना मुंह ही दिखाएँगे, ऐसा निश्चय कर चुके हैं।

डेढ़ वर्ष पहलेकी स्मृति, अपने पुत्र सुनन्दकुमारकी मृत्युके दिन-की बात, उनके नेत्रोंके सामने नयी मूर्तिमान होकर खड़ी हो गयी। एक हाथसे अपना माथा और दूसरे हाथसे मिट्टीकी दीवारका सहारा लेकर भट्टाचार्य महाशय बाहर आकर खड़े हो गये। तबतक दो-चार और पड़ोसी भी आ गये थे। सबके मुंहमें एक ही बात थी,—"कहां चले गये? अभी तक तो नहीं मिले!" अरुणकी कातर प्रार्थनासे कुछ पड़ोसी भी ढूंढ़नेके लिये गये थे, धीरे-धीरे वे सब आकर इकट्ठे हो गये। पिताके यहां आनेके कुछ ही देर बाद आनन्द-कुमार भी आ पहुंचा था। वे एक आदमीको थानेमें खबर करनेको भेजकर शव-दाहकी व्यवस्था करने लगे। सब लोग यही विश्वास कर रहे थे, कि हरिश्चन्द्र भट्टाचार्य अब जीवित नहीं मिलेंगे। सब लोग इस बातको अपने मनमें रखकर बालक-बालिकाओंको सान्त्वना देते हुए बोले,—"भय क्या है, अभी थोड़ी देरमें मिल जायंगे, शायद किसी जगह बैठे होंगे। इधर घरमें तो अब लाशको रखना ठीक नहीं है! बेटे अरुण, तुम हम लोगोंके साथ चलो शवदाह कर आएं। फिर हम लोग तुम्हारे पिताको—"

"आनन्द चचा, पिताजी नरूको यह कहकर गये हैं कि घरमें

सोये रहो । तुम इसको घरसे बाहर न ले जाओ चचाजी, पिताजी आकर क्या कहेंगे ?" कहते हुए अरुण आर्त भावसे दौड़कर घरमें गया और वहां लोगोंको अपने भाईकी लाश उठाते हुए देख कर रो उठा । आनन्दकुमार उसको गोदमें लेकर अनेक तरहके प्रबोध वाक्योंसे सान्त्वना देने लगे । बुद्धिमान बालकको धीरे-धीरे शान्त करके वे लोग अरुणको साथ ले और उसके भाईकी लाश लेकर चले गये । भट्टाचार्य महाशय तब वहां आई हुई स्त्रियोंकी ओर देखकर बोले,—"इस लड़की और बच्चेको तुम्हारेमेंसे कोई मेरी बड़ी बहूके पास पहुंचा सकती हो ?"

एक बुढ़ियाने आगे आकर कहा,—"यह कौन बड़ी बात है, पर पण्डितजी, तुम्हारे घरकी भी तो शुभ मनानी चाहिये । ये स्नान कर लें और कुछ खा पीलें—"

भट्टाचार्य महाशयने उसको रोक कर गम्भीर स्वरसे कहा,—"हमारा तो घर अशुभमय ही है, उसके लिये तुम न घबराओ ।" फिर थोड़ी ही दूर पर दासीके साथ सनत्‌को आते हुए देख कर कहा,—"देखो, बहूने अपने आप आदमी भेज दिया है ।" फिर करुणाके ऊपर हाथ रखकर 'उठो बेटी' कहते ही करुणाने उनकी ओर पागलों-कीसी दृष्टिसे देखते हुए कहा,—"इसको ज्वर हो रहा है । प्यास-प्यास करता हुआ सो गया है, इसकी नींद टूट जायगी ।"

भट्टाचार्य महाशयने करुणाके फटे हुए आंचलको बालकके ऊपरसे उठाकर, उसके ऊपर हाथ रखकर कहा,—"हां, इसको भी ज्वर हो रहा है । तो बेटी तुमने जल पीनेको क्यों नहीं दिया ?—इसको जल दे ।"

"जल है कहां ? जलकी कलसी लेकर पिताजी शायद गङ्गाजल लेने गये हैं।" यह सुनते ही बच्चेके ज्वरकी बात भूल कर भट्टाचार्य महाशय सहम उठे और कहा,—"क्या उनको कलसी ले जाते हुए देखा है ?"

"मैंने देखा तो नहीं है, लेकिन छोटे भैयाका मुंह चूमकर और उसको अच्छी तरह लिटा कर पिताजी उठ गये और मुझसे कहा,—"तुम लोग चुप-चाप सो रहो, मैं बाहर जाता हूं।" फिर उन्होंने दरवाजा खोला, डरके मारे आंख मूंदे—"

इसी समय एक पड़ोसिन इसपर टिप्पणी चढ़ाती हुई बोली,—"ऐसी बेवकूफ और डरपोक लड़की मैंने अब तक नहीं देखी। सुनती हूं, उस वक्त सुबह हो गयी थी, फिर आंख क्यों मूंदती ? तभी तो तेरा बाप इस तरह चला गया ! अरुणको भी आवाज न दे सकी ?"

बालिका अपराधीकी तरह क्षीण कंठसे बोली,—"मेरे सिरके पास ही दरवाजा था, पिताजी घरमें नहीं रहेंगे, यह सोच कर बड़ा डर लगने लगा था। और यह भी खयाल था, कि छोटा भाई नींद खुलते ही रोने लगेगा, खानेको मांगेगा। मेरे हिलते ही उसकी नींद खुल जाती, इसलिये—"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने उसको रोक कर कहा,—"बुखार हो जाने के कारण क्या कल इसको खानेको नहीं दिया है ?"

"कल हम लोगोंमेंसे किसीको भोजन नहीं मिला। पिताजी मंझले भैयाके पाससे एक बार भी नहीं उठे।"

एक स्त्रीने खेद पूर्वक कहा,—"हे भगवान् ! तो बेटी, तू हममेंसे

किसीके घर क्यों नहीं चली आई थी ? अरुण तो अब बड़ा हो गया है, वह भी तो कुछ बना सकता था।"

"परसोंसे घरमें कुछ नहीं है। जो थोड़ेसे चावल रखे थे, वे परसों एक बारमें ही खतम हो गये थे। छोटे भैयाने दो दिनसे बुखारके मारे नहीं खाया, कल थोड़ासा खाया था।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य ये बातें सुनते हुए बीच-बीचमें अपने हाथसे माथा पकड़ रहे थे। वे सोच रहे थे, कि सिर्फ शोकके वशीभूत होकर ही नहीं बल्कि यह समझकर भी कि रोग और भूख-प्याससे यह एक तो समाप्त हो ही गया है, धीरे-धीरे और भी इसी तरह अनाहार और बिना चिकित्साके संसारसे बिदा हो जायंगे, छोटे बच्चेकी तिल्ली बढ़ी हुई थी, लीवर खराब हो गया था और रंग एकदम हलदीके जैसा पीला हो गया है। फिर उसपर यह रूखा-सूखा पथ्य भी मिलना कठिन है! बाकी इन तीनों बच्चोंको जिलानेके लिये क्या लोगोंके दरवाजे पर भीख मांगनी पड़ेगी ? इसीलिये शायद इन सब चिन्ताओंसे छूट जानेका ध्यान कर हरिश्चन्द्र भी अपने पुत्रके साथ ही चला गया है। लेकिन कैसे गया ? किस उपायसे ? कमसे उसकी लाश तो मिलनी चाहिये और यदि अभी तक अपने प्राणोंको नष्ट न कर सका हो!—उन्होंने फिर करुणासे पूछा,—"तेरे पिता क्या कुछ ले नहीं गये।"

"ताईजीने पूजाके समय मुझे जो कपड़ा दिया था, वह बांस परसे उठा कर ले लिया था और उनके जाते वक्त जल फेंकनेकासा शब्द हुआ था..."

पड़ोसिन काँपती हुए बोली,—"राम-राम ! कलसी और रस्सी दोनों ही ले गये हैं—तो पण्डितजी—"

सनत्‌के साथ आई हुई भट्टाचार्य महाशयकी दासी सबको धमकाती हुई बोली,—"तुम सब क्या कह रही हो, जो प्रारब्धमें है, वही होगा, फिर पहले ही से बच्चोंको डराकर अधमरे क्यों किये देती हो ? मनके दुःखसे शायद वे कहीं चले गये हैं, दो दिन बाद ये बच्चे याद आते ही फिर लौट आयेंगे। फिर एक प्रौढ़ा सधवाकी ओर देखकर कहा,—"हां, बहू तुम्हारी ननद नहीं दीख पड़ती, वह कहां है ? वे होतीं, तो इस समय बच्चोंको देखती-भालतीं। वे इनसे बड़ा प्रेम करती हैं।"

जिसको यह बात कही थी, उस स्त्रीने अपने सिरपर कपड़ा खींच कर (क्यों कि उसको बहू कहा गया था, इसलिये उसने समझा मैं बहूकी कोटी हीमें पहुंच गयी हूं) और अभी तक खूब जोर-जोरसे बात करते हुए भी, अब कुछ स्वर धीमा करके कहा,—"वह तो आज सात दिनसे बुखारसे पीड़ित है और उसका लड़का दिन-रात पासमें बैठा हुआ उसके मुंहमें जल देता रहता है। उसको होश होता, तो क्या मामला यहां तक बढ़ सकता था ? और हम लोग तो अपने घर-बार और बाल-बच्चोंमें ही दिन-रात परेशान रहते हैं। जो कोई हम लोगोंको आकर कह देता, तो हम कुछ न कुछ इन्तजाम कर ही देते। बिना कहे हमको क्या मालूम कि बात यहां तक बढ़ गयी है।" उसका स्वर धीरे-धीरे क्षुण्णताकी क्षीणतामें मग्न हो गया। हरिश्चन्द्र भट्टाचार्यके सबसे अधिक घनिष्ठ और निकट प्रतिवेशी यही लोग हैं, यद्यपि उनकी यह घनिष्टता लोगोंकी दृष्टिमें दूरत्वके अर्थमें ग्रहण

की जाती है । दोनों घरोंके बीचमें एक बीघेके करीब जमीन पड़ती थी, वह भी अब छोटे-मोटे वृक्षोंसे पूर्ण हो गयी है, इसलिये दोनों घरोंके मनुष्य आपसमें देखा-भाली भी नहीं कर सकते और यदि कभी आवाज देनी पड़ती है, तो इतने जोरसे चिल्लाना पड़ता है, जिसे गांवभर सुन ले । फिर भी ये लोग इस घटनासे सब लोगोंके सामने अपनेको लज्जित समझते थे ।

इन्हीं पड़ोसियोंके जिम्मे हरिश्चन्द्र भट्टाचार्यके छोड़े हुए घरको छोड़कर, मृत्युञ्जय भट्टाचार्य करुणाका हाथ पकड़ और रोगी बच्चेको दासीकी गोदमें देकर जिस समय अपने घर जानेके लिये तैयार हो रहे थे, उसी समय, श्मशान जानेवालोंमेंसे एक आदमी दौड़ा हुआ आया और बोला,—"आपको आनन्द पण्डित श्मशानमें बुला रहे हैं, आपको अवश्य चलना चाहिये ।"

इस आनेवाले आदमीकी भाव-भङ्गी देखकर उन्होंने यह सोचा, कि शायद हरिश्चन्द्र भट्टाचार्यका पता मिला है । इसलिये लडके और करुणाको दासीके साथ घर भेजनेकी आज्ञा दे दी । उनकी आंखोंसे ओझल होते ही 'मामला क्या है ?' कहकर वे श्मशान जानेके लिये तैयार हो गये । इसी समय देखा, कि पासके थानेके दारोगा साहब, साथमें दो-चार आदमियोंका लेकर आ रहे हैं । उनको सब बातें समझा कर वे घर लौटनेका विचार कर ही रहे थे, कि बुलाने वालेकी बातसे घर जानेकी जरूरत नहीं रही । उसने कहा,— "दारोगा साहब आ गये हैं, यह अच्छा ही हुआ है । ये भी साथ चलें और वहां चल कर जो करना हो उसकी व्यवस्था करें ।"

"क्यों, क्या बात है ? क्या हरिश्चन्द्रका कुछ पता मिला है ?"

बहुतसे आदमियोंके एक साथ किये हुए इस प्रश्नको सुन वह व्यक्ति कुछ घबड़ा कर बोला,—"जी नहीं, पर घाटसे बहुत कुछ दूर जो मुर्दाफरोशोंके दो घर हैं, उन्हींमेंसे एक आदमी कहता है, कि सुबहके वक्त यज्ञोपवीत पहने हुए एक आदमीको कंधेपर एक कपड़ा डाले और हाथमें कलसी लिये स्नान करनेके लिये गंगाजीमें घुसते हुए उसने देखा था। न जाने कौन है और क्यों आया है, यह सोच कर मैंने फिर उसपर कुछ ध्यान नहीं दिया—उसवक्त तक अच्छी तरह सूर्यका प्रकाश नहीं हुआ था। यह सुनकर आनन्द पण्डितको संदेह हो गया है। वे कहते हैं, कि मछुए बुलाकर यहां ढुंढ़वाना चाहिये। इसीलिये आपको बुला रहे हैं।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य स्तब्ध होकर वहीं खड़े रह गये, जैसे उनके पैर आगे चलना ही न चाहते हों। दारोगा साहबने उनकी ओर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिसे देखकर कहा,—"भट्टाचार्य महाशय, आप घर जाइये। एक तो वहां एक छोटेसे बच्चेका शव दाह हो रहा है और दूसरे इस ढूंढ़-भालसे न जाने कैसा काण्ड उपस्थित हो जाय। मैं तो आ ही गया हूं, अब आप घर जाइये।"

फिर उस गांवके आदमीकी ओर दृष्टि फिरा कर कहा,—"भाई, तुम ऐसा प्रबन्ध करो, जिससे मेरा यह चौकीदार मछुए और एक किस्तीका इन्तजाम शीघ्रतापूर्वक कर ले। और—"

दोनों चौकीदारोंने रोककर कहा,—"जी, हम लोग तो इसी गांवके चौकीदार हैं, यहांके नाड़ी-नक्षत्रको अच्छी तरह जानते हैं।

इन्हें तकलीफ करनेकी जरूरत नहीं होगी, हम लोग मछुए आदि सबका प्रबन्ध कर लेंगे ।"

यह कहकर दोनों चौकीदार चले गये और बाकी दो दारोगा साहबके पास रह गये । तब दारोगाने कहा,—"तो आप घर जाइये भट्टाचार्य महाशय ।" और स्वयं श्मशानकी ओर चलनेको तैयार हुआ । भट्टाचार्य महाशयने यह देखकर कहा,—"नहीं मेरे चलनेकी भी आवश्यकता है ।"

सब लोग श्मशानकी ओर चल पड़े । गांवका वह आदमी भी, जो उन्हें बुलानेके लिये आया था, साथ हो लिया ।

उस समय श्मशानमें चिता जल चुकी थी । निश्चितको भस्मीभूत करनेकी व्यवस्था करके लोग अनिश्चितकी तलाशमें गङ्गाजीके जलकी ओर देख रहे थे । मृत्युञ्जय भट्टाचार्य गङ्गाके बिलकुल किनारे जलके पास जाकर खड़े हो गये । चिताकी ओर देखनेकी उनमें हिम्मत नहीं थी । जलकी ओर देखते हुए प्रतिमाकी तरह निर्वाक् और निस्पन्द भावसे खड़े थे । बालक अरुण भी चुप-चाप उनके पास आकर खड़ा हो गया ।

दारोगा साहबने वहां पहुंचते ही अपने दोनों चौकीदारोंको जल में घुसा दिया । उनके थोड़ी देर इधर-उधर ढूंढ़कर निष्फल प्रयास होने बाद डोंगी और मछुए आ पहुंचे । मछुओंने थोड़ी ही देरमें, कुछ गहरे जलमें से हरिश्चन्द्रकी लाश खींच कर ऊपर निकाल ली । उनके गलेमें कन्याकी धोती बंधी हुई थी और उसके साथ जलसे भरी हुई कलसी ! यह दृश्य देखते ही, शोक, मनस्ताप और अनाहार-

दुर्बल बालक अरुल आर्तनाद करके मृत्युञ्जय भट्टाचार्यके पांवोंके पास बैठ गया। उसके साथ ही भट्टाचार्य महाशय भी नीचे जलके किनारे ही बैठ गये और अरुणको गोदमें लेकर देखा, कि वह बेहोश हो गया है। यह देखकर आनन्दकुमार आदि आकर अपने पिता और बालकको जलसे कुछ दूर ले जाकर, बालकको होशमें लानेका प्रयत्न करने लगे। उधर दारोगा साहब, मृत देहके गलेमेंसे कलसी खोल और उसको किनारे लाकर यह परीक्षा कर रहे थे, कि अभीतक इसमें जीवनका कुछ चिन्ह है या नहीं। कुछ देर तक अनेक प्रकारके उपाय किये गये। पर अन्तमें सब लोग इन उपायोंको निरर्थक समझ कर चुप हो गये।

दारोगा साहबकी आज्ञासे पुत्रकी निर्वाणप्राय चिताके पास पिताकी चिता भी तैयार की गयी। शवकी सब क्रिया सम्पूर्ण होकर जब उसे चिता पर रखा गया तो मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने अपनी गोदमें पड़े हुए जड़-प्राय अरुणसे कहा,—"अरुण!"

यह आवाज़ सुनते ही 'अरुण पिताजी!' कहकर आर्तनाद कर उठा। वृद्ध ब्राह्मणने कांपते हुए हाथोंसे उसको छातीसे लगाकर कहा—"हां, आज मैं तुम्हारा पिता हूं, अरुण, मैं तुम्हारा पिता हूं।" उस समय मानों बालकके कानमें कोई शब्द ही प्रवेश नहीं कर रहा था। वह स्तब्ध नेत्रोंसे उनकी ओर देख रहा था।

अपने साथ अरुणको भी स्नान आदि कराकर और तर्पणसे निवृत्त होकर भट्टाचार्य महाशय और आनन्दकुमारने घर आकर देखा, कि अरुन्धतीने बालकको दूध पिला कर सुला दिया है और करुणा नहा-

धोकर उसके सिरहाने बैठी है । सनत् भी उन्हींके पास था । उनको देखते ही करुणा,—"बाबा, पिताजी ?" कह कर एक अबोध व्याकुल प्रश्नके साथ खड़ी होना चाहती थी , पर फिर बैठ गयी । यह देख कर अरुन्धतीने उसको गोदमें ले लिया । मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने पुत्रवधुके सिरपर हाथ फेरते हुए कहा,—"बेटी, याद रखना आज तुम्हारी और मेरी दोनोंकी यही मौत है ।"

दिन करीब-करीब समाप्त हो चुका था । भूखे-प्यासे बालक-बालिकाओंके लिये अरुन्धती कुछ फल-मूल लाई, यह देख कर मृत्यु-ञ्जय भट्टाचार्यने कहा,—"बेटी, मिट्टीके दो नये बर्त्तन थोड़ासा कच्चा दूध और गङ्गाजल ले आओ ।"

अरुन्धती सब सामान ले आई तो उन्होंने अरुणसे कहा,—"अरुण, जरा एक बार तुलसीके मन्दिरके पास चलो । यह दूध और गङ्गाजलसे भरे हुए दोनों पात्र रख कर मन ही मन अपने पिता और भाईका स्मरण करो, वे अब देवता हो गये हैं न, स्वर्गमें यही वस्तु उन्हें भोजनके लिये मिलेगी । उनका ध्यान करके कहो,—

'श्मशानानलदग्धोसि परित्यक्तोसि वान्धवैः
इदं क्षीरं इदं नीरं भुक्त्वा पीत्वा सुखी भवेत ।'

पिता और भाईको याद कर यह श्लोक पढ़ते हुए अरुण बेंतकी तरह कांप रहा था । पिताका अनशन-क्लिष्ट मुख और कोटर-प्रविष्ट चक्षु, मानों उसको स्पष्ट दीख रहे थे और उसको यह भी ध्यान हो रहा था, कि यह इतनासा दूध भी वे अन्तमें नरुको न दे सके थे !

लेकिन करुणा शोकविमुग्ध चित्तसे यह अनुष्ठान देखती और मन्त्र सुनती हुई सोच रही थी कि "अब पिताजीको थोड़ासा भोजन मिला है, कई दिनसे तो बिलकुल नहीं खाया था !" पिताकी अन्तिम अवस्थाकी बातका यद्यपि बालिकाको कुछ भी पता नहीं था, परन्तु वह इतना जरूर जानती थी, कि नरुके साथ वे भी स्वर्गमें चले गये हैं !

८.

पांच वर्ष व्यतीत हो गये । मृत्युञ्जय भट्टाचार्य और थोड़ेसे वृद्ध हो गये हैं । उनके पुत्र और पुत्रवधु प्रौढ़ावस्थामें पहुंच गये हैं—और उनके जो पुत्र-पुत्री थे या जो पुत्र-पुत्रीकी तरह पालित हो रहे थे, उनमेंसे किसीने किशोरावस्थासे यौवनमें पदार्पण किया है और किसीने किशोरावस्थामें । एक ही स्थानमें, बिलकुल पासमें रहनेवाली प्रकृतिकी विचित्रताका चरम आदर्श, यह मनुष्य जीवन है । कली खिलनेवाली है, खिलती है और फिर झड़ जाती है ! मनुष्योंमें भी ठीक ऐसी विचित्रता है । नयी आशा, नया उद्यम और तरुण आदर्शसे नवीन जीवन-पुष्प खिल कर अपनी सुगन्ध फैलाना चाहता है—बीचमें खड़ा हुआ प्रौढ़ जीवन, श्यामल पत्रकी भांति उनको अपने स्नेहकी छायामें खिलाकर, अपने-अपने जीवनकी सार्थकता प्राप्त कराना चाहता है—और उधर वृद्ध वृक्ष अपने पत्ते और टहनी हिलाकर कहता है कि यह कैसी उच्छृङ्खलता है । यह तो अच्छा नहीं, चुप-चाप स्थिर होकर बैठो बेटे, यह प्रकाश, यह हवा, ये तो

सिक्ता-करुणा।

हमेशाके ही हैं—इनके लिये पागल होकर अपनी शक्तिको व्यर्थ क्यों नष्ट करते हो !

इस लम्बे-चौड़े समयके बीत जाने पर भी मीराकी मां या भट्टाचार्य महाशयका मन नरम नहीं हुआ। उनमेंसे किसीने भी कर्तव्य या स्नेहके सामने सिर नहीं झुकाया। मीरा अपने नानाके यहां ही पल रही है। भट्टाचार्य महाशय जानते हैं, कि आनन्दकुमार अपने कर्तव्यको समान रूपसे पालन कर रहा है और इसीलिये शायद वे उनके पास नहीं आए। भविष्यकी भावनासे भी निश्चिन्त हैं। पर भट्टाचार्य महाशय इसके लिये इतने विरक्त न थे, जितने अपने ऊपर अविश्वास और इतना रूखा व्यवहार करनेसे।

सनत् प्रशंसाके साथ मेट्रिक पास कर अब एफ० ए० में पढ़ रहा है। पिताके पास रहता हुआ, वह प्रायः प्रतिदिन ही अपनी चची और बहनका स्नेह प्राप्त करता है। इसलिये माताका अभाव उसको कुछ विशेष नहीं खटता था। चन्द्रनाथ चक्रवर्तीके मकानमें सब आदमी उसका आदर करते थे। आनन्दकुमारने भी अपने स्नेह, सौजन्य और अच्छे व्यवहारसे उन बागी सम्बन्धियोंको अपने ऊपर सदय कर लिया था।

अरुन्धती बूढ़े श्वसुर और उनकी पूजा-पाठ, देव-सेवा और आश्रित व्यक्तियोंको सम्भाले हुए एक ही तरहका जीवन व्यतीत कर रही थी। अपने श्वसुरकी किसी समयकी आज्ञा, इस समय उसकी अस्थि-मज्जामें समा गयी थी। करुणाने उनके घरमें मीराका स्थान सहजमें ही ग्रहण कर लिया था और सनत्का स्थान अरुणने भी कुछ-

कुछ दखल कर लिया था । भट्टाचार्य महाशय अरुणसे जितना प्रेम करते हैं, उतना कभी-कभी आकर रहने वाले सनतसे भी नहीं कर सकते. कभी-कभी यह सन्देह अरुन्धतीको हो जाता था, पर अरुणके स्निग्ध स्वभाव और उसके सद्गुणोंको देख कर मोहित हो जाती थी । करुणा और अरुणके छोटे भाईको ये लोग विशेष चेष्टा करने पर भी न बचा सके थे । इस मकानमें आनेके कोई दो-तीन महीनेके भीतर ही, वह भी अपने पिता और भाईके पथका पथिक हो गया था । भट्टाचार्य महाशयने अरुणको वहींके स्कूलमें मेट्रिक पास करा दिया है । उसके बाद इतने वर्षों में उसको बड़े यत्नसे संस्कृतके काव्य साहित्यके साथ-साथ न्याय और स्मृति ग्रन्थ भी बहुत कुछ पढ़ा दिये थे । उन्होंने अपने यौवनकालमें, स्मृतितीर्थ, न्यायरत्न, काव्य-सरस्वती इत्यादि उपाधियां अनायास ही प्राप्त कर ली थीं । पण्डित-मण्डलीके बहुतसे विद्वान् लोग, उनके पास शास्त्रोंके अनेक दुरुह तत्वों की मीमांसा करानेके लिये आया करते हैं और विद्वानोंकी सभामें उनका सम्मान भी बहुत है । अपनी जातिमें भी वे समाजपति थे । लेकिन आजकल वेदान्तमें 'शङ्कर-भाष्य' और वैष्णव आचार्योंके 'मीमांसा सूत्र को देखनेमें ही अपना समय व्यतीत कर रहे हैं । जहां-जहां इन विषयोंकी आलोचना होती थी, उन सभाओंमें या योग्य व्यक्तिके साथ इन विषयोंकी चर्चा ही आजकल उनके जीवनकी सब से अधिक उपभोग्य वस्तु थी । इस समय बचपन और यौवनावस्थामें पढ़े हुए न्याय, स्मृति और काव्यशास्त्रोंकी वे कभी खबर भी नहीं लेते थे । यौवनावस्थामें उन्होंने एक पाठशाला खोल कर थोड़े दिन

तक विद्यार्थियोंको पढ़ाया था, पर अपने इस तत्त्व जिज्ञासु हृदयके धीरे-धीरे बढ़ने वाले सिद्धान्त-तर्क-जालके चक्रमें फंस कर कर्म-जीवनका आदर्श धीरे-धीरे उनके पाससे दूर हो गया था। पासमें बहुतसी पैतृक सम्पत्ति होनेके कारण कभी-कभी वे 'व्यवहारी' भी हो जाते थे। पर इस बुढ़ापेमें पौत्र-पौत्रीको पाकर, यौवनावस्थाका वह उत्साह और आदर्श उनमें फिर आ गया था। उनकी यह प्रबल इच्छा थी, कि वे अपने आदर्शसे, इनको शिक्षा देकर उन्नत करें। लेकिन प्रारब्धने ऐसा न होने दिया, पर इस वृद्धावस्थामें, हृदयकी अन्त:सलिला फल्गुधाराको जिन्होंने निर्झरका आकार दिया था, उनके अभावमें भी वह स्रोत-धारा नष्ट नहीं हुई। भाग्यके विपर्ययसे जो लोग उनकी करुणाके आश्रयमें आकर सिर नीचा करके खड़े हुए थे, भट्टाचार्य महाशय अपने खाली स्थान पर उन्हींका अभिषेक करके उस नव-जीवनी धाराका उसी तरह पोषण करने लगे। इसलिये वे केवल अरुणको पढ़ा कर ही शान्त न होते थे, करुणाको भी इन पांच वर्षोंमें मातृ-भाषा और उसका व्याकरण पढ़ा कर संस्कृत आरम्भ करा दी थी। करुणाको पढ़ाते हुए उन्हें घड़ी-घड़ी अपनी वह नव उन्मे-षितमेधा-स्फूर्त शिखामयी बालिका मीरा याद आ जाती थी। करुणा, मीराका वह स्थान अधिकार न कर सकती थी। करुणाका मन अरु-न्धतीके घरके कामोंमें सहायता करने और देव-पूजाके निर्दोष होनेके ध्यानमें ही लगा रहता था। भट्टाचार्य महाशय समझते थे, कि बाल-पनमें जिनके ऊपरसे होकर इतना बड़ा विप्लव चला गया है, उनकी प्राणशक्ति उतनी अधिक सजीव होनी भी नहीं चाहिये और मेधा-

शक्ति भी सबमें एक जैसी नहीं होती । फिर भी वे करुणाको पढ़ानेमें निरुत्साहित नहीं हुए थे ।

उनके हृदयकी प्यास विशेष रूपसे शान्त होती थी,—अरुणाके साथ, वह मानों दूसरा अर्जुन था । उसको जिस दिन जो पाठ दिया जाता था, मालूम होता था मानों उसने उसे पहले ही याद कर रखा है ।

उस दिन सुबहके वक्त, करुणा डलिया हाथमें लिये हुए, वृक्षोंसे पुष्प सञ्चय कर रही थी । जल्दी-जल्दी ठाकुर-पूजाके उद्योगमें लग जाने पर ताईजीको विशेष आपत्ति करनेका समय नहीं मिलेगा और घरका सारा काम अकेले करनेमें उनको विशेष श्रान्त और क्लान्त नहीं होना पड़ेगा, यह सोच कर बालिका जल्दी-जल्दी फूल तोड़ रही थी । इसी समय कैवर्त-बुआने सामने मैदानमें खड़े होकर आवाज दी,—"कहां है, मेरी करुणा बेटी क्या कर रही है ?"

"बुआजी, मैं यहां फूल तोड़ रही हूं ।" कह कर करुणाने कुन्द-वृक्षके पीछेसे उत्तर दिया । फिर सामने आकर हंसते हुए कहा,—"कई दिनसे आई नहीं बुआजी, अच्छी तो थी ?"

"अच्छी नहीं रहूंगी, तो क्या मुझे यमराज लेने आयगा ? दुनियां की अच्छी-अच्छी वस्तुओं पर आदमियों ही की नहीं देवताकी दृष्टि पड़ती है ! भी नहीं तो क्या मैं उस बार इतनी बीमार होकर भी बच जाती और अच्छी चीज चली जाती ! हायरे मेरी फूटी किस्मत !" कह कर और अपने सिर पर दुहथड़ मार कर वह वहीं बैठ गयी ।

करुणाका हंसता हुआ मुख, क्षण भरमें निदारुण स्मृतिके स्पर्श

से धूपमें पड़े हुए फूलकी तरह कुम्हाला गया और दोनों नेत्र हाथकी डलियाकी ओर झुक गये ।

"आओ-आओ दीदी, तुम्हारा कंगालीचरण अच्छा तो है ? सुना है, उसका जल्दी ही विवाह कर बहू लानेवाली हो ?"

कैवर्त-महिलाने आनन्द गद्गद् कण्ठसे कहा,—"तुम्हारे इन चरणोंकी कृपासे बहू आ जायगी, नहीं तो मेरे ऐसे भाग्य कहां ?" कहते हुए सामने खड़ी हुई सद्यस्नाता, पट्टवस्त्र परिहिता, शान्त स्निग्ध मूर्ति अरुन्धतीको साष्टाङ्ग दण्डवत करके मुंह ऊपर उठाया ।

"तुम्हारा एक कङ्गाली एक सौ हो जायं, मन पसन्द बहू मिले और तुम कुछ दिन तक अनन्द लो । उस बार तो मरनेकी ही तैयारी कर ली थी ! कङ्गालीकी बहू देखनेके लिये ही जी गयी हो ! हां, तुम्हारा कङ्गाली कितने वर्षका हो गया दीदी, सनत्‌का जोड़ीदार है न ?"

"बहूजी, तुम्हारा सब हिसाब-किताब ठीक रहता है ! जब मैं अपनी किस्मत फूट जाने पर, कङ्गालीको गोदमें ले अपने भाईके घर आई थी, तब तुम्हारा सनत् भैया भी उतना ही बड़ा था । तुम्हारे कहने ही से यह बात याद आ गयी है, नहीं तो हम लोगोंके घर उम्र का हिसाब कौन रखता है ?"

"हाँ तो इस सत्रह-अठारह वर्षके लड़केका अभीसे विवाह कर दोगी ?"

"बहूजी, यह कोई तुम लोगों जैसे भले आदमियोंका घर तो है ही नहीं, जो लड़का लिखे-पढ़ेगा ? अभी तक भाईके घरमें रहती थी,

अब अपना अलग घर बना लिया है, एक-दो गौ बच्छे भी कङ्गालीके पास हो गये हैं। अब वह जवान आदमीके बराबर मिहनत करने लगा है। मैं बूढ़ी हो गयी हूं, अब क्या मुझसे घरका सब काम हो सकता है बहूजी ? यदि अभीसे एक सुन्दरसी बहू आ गयी, तो साल दो सालमें उसको घरका काम-काज सिखा जाऊंगी। अमर तो हूं नहीं, एक न एक दिन तो मरना ही पड़ेगा, फिर यदि कङ्गालीका पहले ही से विवाह न कर दिया, तो उसको एक गिलास जल देने वाला भी न रहेगा ? इसीलिये सोचती हूं, कि विवाह जल्दी कर दूं !"

"हां यह तो ठीक है।" कह कर अरुन्धती कुछ अनमनीसी होकर चुप हो गयी। पर उसी समय, पासमें डलिया हाथमें लिये हुए करुणाको खड़े देख कर हंसते हुए कहा,—"ऐसे जाड़ेमें सुबह-सुबह इस कामके किये बिना क्या काम नहीं चलता ? वे अभी पढ़नेके लिये हांक मारने लगेंगे। तेरा स्वभाव ठीक सनत्के जैसा है—वह भी इसी तरह—चकमे देकर पढ़नेसे बचना चाहता था।"

करुणा लज्जित होकर हंसने लगी। अरुन्धती उसकी पीठ पर हाथ फेरती हुई स्नेहपूर्वक बोली,—"इस जाड़ेकी मौसिममें पतली धोती करके, ताईका काम करनेको किसने कहा है ? जाओ—"

अरुन्धतीकी बात काट कर 'कैवर्त-बुआ' अपने 'बुआ' पदकी रक्षा करने योग्य भाषामें बोली,—"हे राम, यह कैसी बात है बहू ? अब यह छोटी तो रही नहीं ! यह अभीसे तुम्हारे कामोंमें सहायता देकर घरके कामकाज नहीं सीखेगी, तो कब सीखेगी ? और कब तक पढ़ना-लिखना सिखाओगी ? घरका काम-काज सिखाना भी

तो जरूरी है। करुणा कितने वर्षकी हो गयी बहूजी, बारहकी है न ?"

"तेरहवेंमें पहुच गयी। हमारे समाजमें दस वर्षकी लड़कीका विवाह कर देनेकी ही प्रथा है। मैं और छोटीबहू भी तो आठ-आठ नौ-नौ वर्षकी उम्रमें इस घरमें आई थीं। पर मीराका भी तो अभी विवाह नहीं किया, वह भी बारहवेंमें पैर रख चुकी है। उसका और अरुण, करुणाका एक साथ विवाह कर देनेका इरादा है। यह करुणा तो रोगी रहती है, क्या कोई कह सकता है, कि यह तेरह वर्षकी है ? जैसे दस वर्षकी लड़की हो। इसीलिये बड़े पण्डित और भी निश्चिन्त है। सुनती हूं, मीरा खूब बढ़ गयी है। उसका विवाह किये बिना काम नहीं चल सकता।"

"क्यों बहू, करुणा बेटी ही कौन छोटी दीखती है ? कपड़े-लत्ते पहन कर लक्ष्मीकी तरह मालूम होती है, मानो ठीक विवाहके मण्डपमें बैठनेवाली कन्या ही—"

"लक्ष्मी तो है ही—मेरी बेटी सचमुच लक्ष्मी है। इसीलिये तो सोच रही हूं, कि किसके घरमें दूंगी। जिसको दी जाय वह सुपात्र होना चाहिये। जैसे-तैसेको—"

कैबर्तबुआ बड़े ही आश्चर्यसे अरुन्धतीकी ओर देख कर बोली,—"यह क्या कह रही हो, बहूजी ? करुणाको किसके घर दूंगी ? करुणा बेटी क्या तुम्हारे ही घरकी लक्ष्मी नहीं होगी ? गांवके भले-बुरे, छोटे-बड़े यह बात तो सभी कह रहे हैं, कि सनत्‌के साथ करुणा का विवाह होगा। सनत् अभी पढ़ रहा है, इसीलिये करुणाका इस

बड़े हो जाने पर भी विवाह नहीं किया । नहीं तो तुम लोगोंके घरोंमें क्या लड़की तेहर-चौदह वर्ष तक कुंवारी रखी जा सकती है ? घरका घरमें विवाह होगा, इसलिये कोई चिन्ता नहीं है । इन मुखोपाध्यायके घरके तो सब यही कहते हैं । सब कहते हैं कि सनत्‌के साथ करुणाका अवश्य विवाह होगा । फिर तुम आज यह नयी बात क्यों कह रही हो बहू ?"

यह सुन कर अरुन्धती स्तब्ध हो गयी । त्रस्त भावसे करुणाकी ओर दृष्टि फेर कर देखा, तो वह 'कैवर्त-बुआ' की बात समाप्त होनेसे पहले ही ठाकुरजीके मन्दिरकी ओर चली गयी थी । इस बार अरुन्धतीने कुछ जोर देकर कहा,—"नहीं-नहीं ऐसी बात नहीं कहनी चाहिये । सनत् और करुणा—"

बुआ सन्तोष पूर्णहास्यके साथ व्यस्त होकर बोली,—"बहूजी, वह बात भी चटर्जीकी बड़ी बहूसे सुनी है । सुना है, तुम लोगोंके यहां विवाहसे दो-चार दिन पहले आशीर्वाद हुए बिना यह बात मुंहसे नहीं कही जाती है । जिस लड़कीका विवाह-आशीर्वाद हो जाने और सब लोगोंको मालूम हो जानेके बाद टूट जाता है, उस लड़कीको 'अन्नपूर्वी' या क्या कहते हैं । उस लड़कीके साथ फिर कोई विवाह नहीं करता । यदि कोई कर लेता है, तो वह जातिसे गिर जाता है । तो बहूजी, मैं क्या किसीके सामने कहूंगी थोड़े ही । खुशीमें आकर अचानक कह दिया है । और तुम लोगोंसे कोई कभी अनुचित काम हो सकता है ? एक तो भद्र मनुष्य वैसे ही कोई बुरा काम नहीं करते, पर तुम लोग तो देवता हो । मेरे अरुणको तुम्हीं लोगोंने

बचाया है, पाल-पोस कर बड़ा किया है। अब तो वह जिस रास्तेको जाता है, वहीं उजाला हो जाता है। सब लोग कहते हैं कि अरुणका भट्टाचार्य महाशय, अपनी पौत्री मीराके साथ विवाह करेंगे, और करुणा तो घरकी लक्ष्मी बनी-बनाई है। बहूजी, कहनेमें क्या दोष हैं ? तुम क्या दुनियांकी बातोंमें आकर अपनी बात भूल सकती हो ?"

इतनी देर बाद अरुन्धतीने, 'कैवर्त-बुआ' के वाक्य-स्रोतमें बाधा न दे सकने पर चारों ओर देखा। और करुणा ठाकुरजीके मन्दिरमें चली गयी है, यह देख कर, कुछ शान्त होकर उसका वाक्य समाप्त होनेकी राह देखने लगी। किन्तु सहसा आङ्गनकी ओर उसकी दृष्टि पड़ते ही सहम उठी। मृत्युञ्जय भट्टाचार्य एक हाथसे दरवाजा पकड़े हुए 'कैवर्त-बुआ' की बात सुन रहे थे। श्वसुरके गम्भीर और स्तब्ध मुखकी ओर देख कर अरुन्धतीका मुंह एकदम नीला पड़ गया। वह इस मुख-भावको बचपनसे देखती आनेके कारण बड़ी अच्छी तरह पहचानती थी।

कुछ देर बाद अपने कांपते हुए पैरोंको कुछ मजबूत करके, वहांसे जानेका उद्योग करती हुई अरुन्धतीने संत्रस्त भावसे कहा,—"यहां तुमने जो बात कही है, ऐसी बात और कहीं नहीं कहना और अगर कहीं कोई कहता भी हो उस पर ध्यान न देना। करुणा सनतकी बहन है—ये तीन भाई बहन हैं। और मीराका विवाह तो शायद उसके मामा-नाना ही करेंगे। पालने-पोसनेके साथ ही क्या उनके साथ विवाह भी किया जाता है ? यह कैसी बात है ? करुणा मेरी

लड़की है, मेरी मीराके स्थानमें है !" कहती हुई वे भण्डार-घरकी ओर चली गयीं और 'कैवर्त-बुआ' निर्वाक और निस्तब्ध भावसे अरुन्धतीको देखती हुई वहीं बैठ गयी।

९

इस घटनाके कई दिन बाद श्वसुरके भोजनके समय अरुन्धती ने बात उठाई,—"पिताजी, मीरा तेरह वर्षकी होने वाली है, सनत्‌के मुंहसे सुना है कि वह खूब लम्बी-चौड़ी हो गयी है। उसके विवाहके विषयमें क्या विचार है ?"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने भोजनसे हाथ थाम और चकित भावसे पुत्रवधूके मुंहकीकी ओर देख कर कहा,—"बड़ी हो गयी है ! कितनी बड़ी हो गयी है ? देखनेमें सुनन्दकी ही तरहकी तो हुई होगी बेटी ?"

"यह तो जानी-सुनी बात है। मीरा अपने बाप-माँसे भी अधिक सुन्दर हुई है। तेरह वर्षकी हो गयी अब तो चुप रहना ठीक नहीं है।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य क्षण भरके लिये आत्मविस्मृत होकर आज पांच वर्ष पहलेकी बात सोच रहे थे। वह सात वर्षकी बालिका आज न जाने कैसी अभेद्य वाहिनी, विद्युत्-लताकी तरह सुन्दरी हो गयी है ! उनके हृदयकी यह छोटीसी धारा, आज उनके जीवनमें आनेवाले वर्षाके दिनोंमें, न जाने कैसी कल-कल निनादिनी वर्षाका आकार धारण करनेके लिये तैयार है ! बहूकी यह 'अब तो चुप रहना ठीक नहीं है।' बात सुन कर सहसा उनको स्थान और कालका ज्ञान हो आया।

कहां उनके इस अन्तिम जीवनके इन दिनोंकी ऊषरभूमिकी स्रोत-धारा और कहां वे ! दूर—बहुत दूर हैं ! वह अब उनके लिये गैर है ! 'दूसरोंके घरमें रह कर गैर हो गयी है ।' शायद अपने बाबाकी बात उनको दिनमें एक बार भी याद न आती होगी ! आज शायद वह पहचान भी न सके । एक दीर्घ निःश्वास छोड़ कर मृत्युञ्जयने कहा,—"मैं क्या करूं बेटी, मेरे हाथमें क्या बात है ?"

"अभी तक वह एक ही बात न रखिये पिताजी ! आपके घरमें क्या लड़की कभी दस वर्षसे अधिक कुमारी रही है ? वे शायद यह सोच कर चुप बैठे हैं, कि आप स्वयं विवाह करेंगे । अब तक जो कुछ हुआ सो हुआ, अब तो मीराके नाना भी इस संसारमें नहीं हैं, अब चुपचाप बैठे रहना ठीक नहीं है । सब लोग मुझसे पूछते हैं, कहते हैं, उनको क्या गरज पड़ी है, तुम क्यों चुप बैठे हो ?"

मृत्युञ्जय कुछ देर चुप रह कर बोले,—"लोग तो न जाने कितनी बात कहते हैं और कैसे-कैसे अनुमान करते हैं ! पर चन्द्रनाथ चक्रवर्तीके न होने पर भी मीराके मामा तो हैं । वे शायद अभी मीराका विवाह करनेको तैयार न होंगे । यदि मैंने कहा भी तो अपमानित होनेके सिवा और कुछ हाथ न लगेगा । मीरा अभी तक स्कूलमें पढ़ती है न ? सनत् उसी दिन तो तुमसे बड़ा हंसता हुआ, मीरा और उसकी ममेरी बहनकी बात कर रहा था ? यदि मैंने कहीं सम्बन्ध कर दिया तो क्या उसमें वे राजी होंगे ?"

"होंगे या नहीं, इसकी चेष्टा करके तो अभी तक देखा नहीं गया ? यदि वे आपके ठीक किये हुए स्थानमें विवाह करनेको राजी

न हों, तो वे अपने आप ही कर दें । छोटी बहू किसी अपात्रके साथ तो विवाह करनेसे रही । जहां मीराके मामा कहें वहीं विवाह कर दिया जाय । पर उनके आगे आप एक बार विवाहकी बात उठाइये तो सही ।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने कुछ सोच कर कहा,—"अच्छा, अबकी बार आनन्द घर आये तो पहले उससे मालूम कर लूं, कि मीराके विवाहके विषयमें उन लोगोंकी क्या राय है, वे अभी विवाह करना चाहते हैं या नहीं । और छोटी बहूकी क्या इच्छा है । मैं ही उनके लिये गैर हूं-शत्रु हूं, पर और सबके साथ तो उनको आत्मीयता है ही ।"

श्वसुरकी अभिमान भरी वेदनाको पुत्रवधु समझ गयी, किन्तु उसके स्वामीने निरुपाय होकर ही दोनों ओर सन्धि स्थापन करनेके विचारसे मीरा और उसकी माँके साथ सम्बन्ध बना रखा है, यह बात अरुन्धती जानती थी । स्वामी और पुत्रके साथ इस विषयमें उसका भी योग था, पर श्वसुरकी वेदनाकी भी वे उपेक्षा न कर सकती थीं । कुछ देर बाद फिर कहा,—"और करुणाका भी तो अब विवाह कर देना चाहिये पिताजी, वह तो मीरासे भी एक वर्ष बड़ी है । इसमें तो अब कोई रोक नहीं है । इस बार—अरुन्धतीका स्वर क्रमशः अस्फुट होकर बन्द हो गया । क्योंकि श्वसुर एकदम भोजन छोड़ कर बहूके मुखकी ओर देखने लगे थे । उस दृष्टिके सामने अरुन्धती और कुछ न कह सकी—उसने सिर झुका लिया ।

कुछ देर बाद दबा हुआसा दीर्घ निःश्वास छोड़ कर मृत्युञ्जयने कहा,—"अच्छा, आनन्दको आने दो ।"

अरुन्धती चुप हो गयी। वह समझ गयी कि अशिक्षिता ग्राम्य-रमणीकी बातोंमें कुछ न कुछ सत्य जरूर है। यह सोच कर अरुन्धती कुछ त्रस्त और भीत हो गयी। उसको अनुमान हुआ, कि थोड़े ही दिनोंमें, इस विषयको लेकर किसी प्रकारकी वेदनाका कारण उपस्थित होनेवाला है और वह भी उन लोगोंके बिना जाने ही। उसकी इच्छा, अपने श्वसुरसे यह बात छिपानेकी नहीं हुई, इसलिये स्पष्ट रूपसे कहा,—"उस दिन कङ्गालीकी माँने इस विषयमें एक ऐसी बात कही थी, कि गांवके लोग यह अनुमान कर रहे हैं, कि करुणा और अरुणका विवाह हम लोग अपने ही घरमें करेंगे। इसीलिये अब तक मीरा और करुणाका विवाह नहीं किया गया है। हम लोगोंकी देरको देख कर ही, लोग ऐसी बात सोच सके हैं। देखिये तो कैसी आश्चर्यजनक बात है!"

"हम लोग चाहे आश्चर्यजनक समझें पर और लोग तो वैसा नहीं समझते। मुझसे भी गांवके कई लोगोंने ऐसी बात कही है। मुझको अभी तक यह पता नहीं लगा, कि मैं उनके सामने क्या आपत्ति प्रकट करूं!"

"क्यों, आपने अभी तो कहा है, कि मीराके विवाहमें मेरा कुछ बस नहीं है! हम लोग अधिकसे अधिक 'मीराका विवाह कर दो' यह कह सकते हैं, पर वर तो वे ही निश्चित करेंगे। लोगोंको क्या मालूम नहीं है, अब मीरा हमारी नहीं है जो उसका—"

"मीराके विषयमें तो मैंने यह उत्तर दे दिया है, लेकिन करुणा? उसके विषयमें लोगोंके सामने क्या आपत्ति प्रकट कर सकता हूं?

लोगोंको यह तो मालूम ही है, कि करुणाका तुम अपनी लड़कीसे भी अधिक प्रेमसे पालन कर रही हो। न तो करुणा कुरूपा है और न उसका स्वभाव·······"

अरुन्धतीने सहसा अपने स्वभावके विरुद्ध उत्तेजित भावसे श्वसुर की बात काट कर कहा,—"चुप रहिये, करुणा आ रही है।"

"मृत्युञ्जयने देखा करुणा दूधका कटोरा हाथमें लिये दरवाजेके पास स्तम्भित भावसे खड़ी है। अरुन्धतीने शान्त स्वरसे कहा,—"खड़ी क्यों हो करुणा, दूध ले आओ न !" दूधका कटोरा भट्टाचार्य महाशयके सामने रख कर करुणा धीरे-धीरे चली गयी।

अरुन्धतीने देखा, कि कटोरा रखते हुए उसका हाथ कांप रहा था और मुंहका भाव भी कुछ मलिन था। करुणाके वहांसे जाते ही उसने फिर उसी तरह उत्तेजित स्वरसे कहा,—"करुणाको मैंने जो इतने प्रेमसे पाला है, वह क्या किसी स्वार्थके कारणसे किया है ? क्या आपकी इच्छासे नहीं किया ? आपने ही तो कहा था, कि वह हमारी मीरा होकर रहेगी। मीराको खोकर हम लोग इसीको तो उसके स्थानमें समझ रहे हैं। आप लोगोंको यह दिखला दीजिये कि आपने अरुणका किसी स्वार्थके कारण पालन नहीं किया है। उन्हींकी बातोंको आप अपना कर्तव्य क्यों समझते हैं ?"

"बेटी, क्या तुम्हें इस बातका पता नहीं है, कि दस आदमियोंकी इच्छामें एक प्रकारका न्याय अधिकार होता है। पञ्चमें परमेश्वर रहते हैं, यह तो तुम जानती ही हो।"

"दस आदमियोंकी बात छोड़ दीजिये पिताजी, मेरे लिये तो

ठाकुर-पूजाकी तैयारीमें करुणा।

अकेले आपकी इच्छा ही सौ आदमियोंकी इच्छा है । पर यह तो मैं जानती हूं कि आपने इस इच्छाके कारण उनका पालन नहीं किया है । अब लोगोंकी बातोंसे आपकी ऐसी इच्छा हो गयी है शायद । लेकिन पिताजी, एक बात मैं भी अपने मनकी कहती हूं । मुझे इसमें कुछ विशेष आपत्ति नहीं हो सकती । क्या सनत्‌को बहूको, मैं करुणा से अधिक प्रेमकी दृष्टिसे देख सकूंगी, यह तो मुझे स्वप्नमें भी विश्वास नहीं होता । पर कहीं इस चेष्टामें हमारे घर पर कुछ और आपत्ति न आ जाय —इससे तो करुणा मेरी लड़की ही होकर रहे तो अच्छा है ।"

"तुम आनन्दकी असम्मतिकी आशङ्का करती हो बेटी ? अच्छा उसको आने दो । उसकी बात सुनकर ही मुझे जो कुछ करना होगा, करूंगा । तुम्हें इसमें कोई आपत्ति नहीं है, यह जानकर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ । यदि तुम्हारी भी आन्तरिक इच्छा हो तो आनन्द—अच्छा, वह पहले आ जाय—करुणाको किसी दूसरेके घर देकर 'गैर' कर देना न पड़े तो अच्छा है बेटी ! भगवान्‌ने इन लोगोंको जब हमारे हाथमें दे दिया है तो हमी ले लें तो क्या हर्ज है ?"

अरुन्धती अब चुप हो गयी । ससुरकी बातोंमें उसको कहीं अन्याय या अयुक्ति भी नहीं दीखती थी और उसका मन भी धीरे-धीरे उन्हींकी ओर दौड़ा जा रहा था । उसके लिये यह कठिन था कि वह करुणाको किसी दूसरेके घर दे दे । पर उसको जो भय हो रहा था, वह दूर नहीं हुआ । न जाने कैसी एक आशंका—मानो 'यह काम नहीं होगा'—शोर करते हुए घरपर फिर एक बार काले बादल

मंडराने लगेंगे—इस तरहकी एक भीति उसके मनमें हो रही थी। और उसको यह भी पता नहीं था, कि स्वामीकी इसमें आपत्ति या अमत है या नहीं। पर उसकी आशंका नष्ट नहीं हुई।

सनत् और आनन्दकुमारकी छुट्टी होनेमें अभी देर थी, लेकिन इस घटनाके कई दिन बाद आनन्दकुमार अचानक घर आ पहुंचा। कुछ दिन पहलेसे ही उसका शरीर अच्छा नहीं था। पिता और स्त्री सुनकर चिन्तित हो उठेंगी, इसलिये घर खबर नहीं भेजी थी। दवा खा रहे थे। पर जब बीमारी धीरे-धीरे बढ़ने लगी तो घर आना ही पड़ा।

अरुन्धती और भट्टाचार्यको आनन्दकी बीमारीमें उस विषयकी आलोचना करनेका न तो समय ही मिला और न उनके याद ही रहा। क्योंकि आनन्दके रोगका परिचय पाकर और उसकी आकृति देखकर उनकी आंखोंके सामने अंधेरा छा गया था।

भट्टाचार्य महाशयके परिवारके ऊपर विपत्तियोंके काले बादल आ-आकर इकट्ठे होने लगे। गांवके सब आदमी उत्कण्ठित हो उठे। बीच-बीचमें शहरसे बड़े-बड़े डाक्टर और कविराज आने लगे—दवा होने लगी। दिन पर दिन और महीने पर महीने विपत्तिकी मात्रा बढ़ने लगी—मेघ खूब घनीभूत हो गये। फिर एक दिन खूब गर्ज्जन तर्ज्जन करता हुआ वज्राघात हो गया। सारे गांवसे उठा हुआ हाय-हाय शब्द, वृद्ध पिता और साध्वी स्त्रीके अव्यक्त यन्त्रणामय आर्तनाद, किशोर पुत्र और आश्रित बालक-बालिकाओंकेमुक्त रुदनके बीचसे आनन्दकुमार भी मृत्युञ्जय भट्टाचार्यको पुत्रहीन करके चला गया!

———

१०

अरुन्धतीने आवाज दी,—"अरुण !"

अरुण भट्टाचार्य महाशयकी आज्ञासे शङ्कर-भाष्यकी टीकाके कई स्थानोंसे कई मीमांसाओंका समाधान, बड़े ध्यानसे एक कागज़ पर लिख रहा था। मृत्युञ्जय भट्टाचार्य आजकल संसारके सब कार्योंसे अवसर ग्रहण करके दिन-रात अपने ग्रन्थसागरमें डूब रहे थे। कभी-कभी अरुणको अपना सहकारी बननेके लिये कह देते थे। अरुण आज भी उन्हींके काममें लगा हुआ था। अरुन्धतीके आह्वानसे उसने मुख उठाकर उनकी ओर देखा। इन कई महीनोंसे अपने गृहस्थ का मेरुदण्ड टूट जानेके कारण अरुन्धतीके मुंहकी ओर कोई भी न देख सकता था। वह भी अपने नियमित कामोंको पहलेसे भी अधिक दृढ़ताके साथ करती चली जाती थी। लेकिन अपनी ओरसे बुला कर कोई बात सनत्‌के साथ भी न करती थी। आज सहसा उनके बुलानेसे, अरुणने उद्ग्रीव होकर उनकी ओर देख कर कहा,—"ताई जी !"

"अरुण, करुणाके लिये वर देखो, अब उसके विवाहमें देर नहीं की जा सकती।"

सहसा उनके इस संक्षिप्त आदेशसे अरुणने विस्मित होकर कहा—"आप मुझसे कह रही हैं, ताईजी ?"

"हां अरुण, तुमसे ही कह रही हूं। पिताजी संसारसे बहुत दूर चले गये हैं, किसी वस्तुके साथ उनका सम्बन्ध है ही नहीं। इस समय इस घरके हाथ-पैर तुम ही हो। सनत् पढ़नेके सिवा अभी तक

कुछ जानता नहीं, इन आठ महीनोंमें सब कुछ छोड़कर, घरमें पड़े-पड़े उसकी जो हालत हो गयी देख ही रहे हो। तुम्हींने तो कह-सुनकर अब दो महीनेसे उसको कलकत्ते भेजा है। इस भारके उठाने के उपयुक्त भी वह नहीं है। तुम्हें ही यह काम करना पड़ेगा और सब कामोंसे पहले यह काम करना आवश्यक है।"

कुछ देर तक स्तब्ध रहकर अरुणने कहा,—"क्या करुणाका विवाह अभी किये बिना काम नहीं चल सकता ताईजी ? अभी दो महीने हुए इतनी बड़ी··········" कहते-कहते अरुणका कण्ठस्वर धीरे-धीरे बन्द हो गया। अरुन्धतीने थोड़ी देर बाद कहा,—"नहीं अरुण बेटा, करुणाको पन्द्रहवां साल लग गया है,—हमारे समाजमें इतनी बड़ी अविवाहिता लड़की किसीके घर नहीं रहती, करुणा और मीराकी इतनी उम्र हो गयी है, न जाने इनका विवाह करनेमें हम लोगों को कैसी कैसी विपत्तियां उठानी पड़ेंगी।"

"यदि आप ऐसा समझती थीं, तो करुणाका बचपनमें ही विवाह क्यों न कर दिया ?"

"तुम तो सब कुछ समझते हो बेटा, कहीं मीराके लिये उनके मनमें कष्ट न हो, इसलिये पिताजीके सामने यह बात मैं न उठाती थी। तुम्हारे ताऊजीकी भी यही इच्छा थी, कि मीरा और करुणाका विवाह एक साथ हो—उनके कुछ बड़े होनेपर ही विवाह करना चाहते थे। फिर एक वर्ष तो—"

अरुन्धती रुक गयी। अरुणने कुछ देर रुक कर कहा,—"लेकिन बाबाजी तो कुछ भी नहीं कहते ताईजी !"

"क्या तुम्हें यह पता नहीं है, कि उन्होंने इन कई महीनोंसे घर की बातोंमें हिस्सा लेना छोड़ दिया है ? विषय—आशय और घर-बार सभी बातोंका भार तो तुम्हारे ही ऊपर पड़ा हुआ है । इस कामके करनेका भार भी अब तुम्हारे ही ऊपर है अरुण !"

"मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है, कि बाबाजी करुणाका विवाह करना कुछ आवश्यक नहीं समझते । मैं भी ऐसा ही समझता हूं, ताईजी—"

अरुणको सङ्कोचके कारण बीचमें ही रुकते हुए देखकर अरुन्धती ने सूखे हुए मुंहसे कहा,—"तुम क्या समझते हो अरुण ?"

"यह समझता हूं कि यदि करुणाका विवाह ही न किया जाय, तो क्या है ? हमारे शास्त्रोंमें ऐसी चिरकुमारी कन्याओंकी बात बहुत मिलती है, जिन्होंने तपस्विनीयोंकी तरह हमेशा धर्मचर्चा करते हुए अपना जीवन बिता दिया है । उनके द्वारा भी संसारके बहुतसे काम होते हैं । ताईजी, यह जीवन भी तो कुछ बुरा नहीं है ।"

ताईजीने क्षण भर तक स्तब्ध भावसे अरुणकी ओर देख कर, फिर मृदु स्वरसे कहा,—"किसी न किसी घटनावश होकर ही न उनको चिर-कुमारी होकर रहना पड़ा है ? हमारे शास्त्रोंमें विवाह संस्कारको क्या जीवनका एक बहुत बड़ा कर्तव्य नहीं माना है ? देखो, जो लोग कुमार-ब्रह्मचारी बन कर गुरुके पास शास्त्रोंके पठन-पाठन और धर्मचर्चामें अपनी काफी उम्र बिता देते हैं, अन्तमें गुरु उनको भी आज्ञा देते हैं, कि जाओ गृहस्थ बनो ! बहुत कुछ सोच-विचार कर ही हमारे ऋषि लोग यह व्यवस्था कर गये हैं । जब

लड़कोंके लिये यह व्यवस्था है, तब कन्याओंकी तो बात ही नहीं है। उनके लिये तो इस गृहधर्मको पालन करनेके सिवा दूसरा मार्ग ही नहीं है, ऐसी बातें तुम्हारे शास्त्र ही कहते हैं—तुम्हारे बाबाजीको मैंने अक्सर ऐसी व्याख्या करते सुना है। और आज वे ही अपने घरकी लड़कियोंकी बात नहीं सोच रहे हैं,—यह दुःख....."

"दुःख नहीं ताईजी, यह समय भी आपके घरकी लड़कियों पर घटनाक्रमसे ही व्यतीत हो रहा है। नहीं तो क्या बाबाजी जैसे आदमी इतने दिन तक चुप रह सकते थे? जब अभी तक मीरा ही का विवाह नहीं हुआ है, तो करुणाके विवाहके लिये इतना व्यस्त क्यों हो—रही हो? करुणाके विवाहकी बात उठाते ही बाबाजीको मीराके लिये कष्ट होगा, यह तो मैं किसी तरह भी नहीं देख सकता ताईजी, मुझे क्षमा कीजिये।"

अरुन्धतीने कुछ देर सोच कर कहा,—"तो क्या इस घरके लड़के-लड़कियोंको भी इसी तरह रहना पड़ेगा? किसीका विवाह नहीं होगा? नहीं जानती मीराका क्या होगा, देशके दुःख, अभाव और कुशिक्षा पर उसकी दृष्टि इतनी गहरी पहुंच गयी है, कि वह किसी दिन अपने घरकी ओर भी देख सकेगी, मेरा तो धीरे-धीरे यह विश्वास ही नष्ट होता चला जा रहा है। केवल तुम्हारा और करुणा-का भरोसा था, कि तुम लोगोंका विवाह करके....."

अरुणने शान्त स्निग्ध भावसे अरुन्धतीकी ओर देख कर कहा,—"मीरा और सनत् जो इस घरके सर्वस्व हैं, उनको एक ओर छोड़ कर, जो घटनाक्रमसे तुम्हारे पैरोंमें आकर रहने लगे हैं, उनके द्वारा

आप अपनी सांसारिक वासना मिटाना चाहती हैं ? इससे अधिक दुःख-की बात क्या हो सकती है ! मेरा और करुणाका विवाह करके तुम अपना घर-बार चलाना चाहती हो ताईजी ? जिनका अभिशप्त जीवन बचपनसे ही, कालकी कराल अग्निसे झुलस रहा है, जो यदि तुम्हारे आश्रयमें न आ जाते, तो न जाने कब उनका जीवन जल कर राख हो जाता, वे भी क्या संसारमें प्रवेश करने योग्य हैं मां ? करुणाके विवाहकी क्या आवश्यकता है ? मैं तो कमसे कम कुछ जरूरत नहीं समझता। तुम्हारे पास-तुम्हारे चरणोंमें ही उसका जीवन बीत जायगा। हम लोगोंको यदि तुम अपनी छायासे हटा दोगी, तो न जाने हम लोगोंके लिये कहां कौन विपत्ति अपेक्षा किये बैठी है !"

अरुन्धती चुप-चाप अरुणके विषाद मेघाच्छन्न मुखकी ओर देखती रही। क्षणभर बाद अरुणने कुछ संयत भावसे कहा,—"सनत्-के विषयमें आप इतनी बात क्यों सोच रही हैं ? उसके लिये सभी कुछ सङ्गत हैं। वह जिस समाजमें रहता है, उसका उस स्त्रोतमें बह जाना बहुत ही अधिक सम्भव है, मां, और वह तो कुछ झूठी बात भी नहीं कहता। वह अपनी धारणाको अपने ही जीवनमें प्रस्फुटित करना चाहता है, वह जिस रक्तसे बना हुआ है, उसके उपयुक्त यही बातें तो हैं ! मुंहसे बड़ी-बड़ी डींग हांक कर कामके समय पीठ दिखा देनेवाली धातुसे नहीं बना है। इसीलिये वह काय-मनो-वाक्यसे देशका सेवक हो उठा है। इस समय उसकी दृष्टि घर पर नहीं तमाम पृथिवी पर पड़ी हुई है। पर मैं समझता हूं, जब उसकी

दृष्टि अपने घर पर पड़ेगी, तभी उसका जीवन आदर्श और यथार्थ रूपसे सार्थक हो जायगा।"

"न जाने वह कहां जा पहुंचेगा? अब भी यदि छोटीबहू मीराको लेकर घर आ जाती, तो बहुत कुछ रक्षा हो जाती। वे क्या करेंगे और पिताजी क्या करेंगे, मैं तो बहुत कुछ सोचने पर भी इसका कूल-किनारा नहीं पाती।"

"आप इतनी चिन्तित क्यों होती हैं? मीराकी माँ, जिस कामसे मीराका मङ्गल होगा वही काम करेंगी।"

"मङ्गलको देख लेना इतना सहल नहीं है बेटा! पर तुम यह न समझना, कि वे मुझसे दूर जा पड़े हैं, इस लिये मैं इतनी बातें कह रही हूं। सनत् और मीराके पास ही तुम दोनोंका भी स्थान है अरुण, तुम लोगोंके जीवनकी गतिके सम्बन्धमें भी मुझे उतनी ही चिन्ता है।"

अरुणने स्निग्ध मुखसे कहा,—"यह जानता हूं ताईजी,—अब आप हम लोगोंके लिये और क्या करना चाहती है?"

"अभी तो किसी सुपात्रके साथ करुणाका विवाह कर दो, फिरकी बात फिर देखी जायगी। विवाह करके गृहस्थ हो जानेसे ही क्या तुम मुझसे दूर हो जाओगे, पागल लड़के! यह तुम्हारी कैसी धारणा है?"

"सुपात्र?—मैं तो किसीको पहचानता नहीं और यह भी नहीं जानता, कि सुपात्र वर कहां मिलेगा। मेरी अपेक्षा तो यह भार सनत्-को दिया जाय तो अच्छा है, वह बहुत कुछ जानता-सुनता है, बहुतसे उसके इष्ट-मित्र हैं। उसको कहनेसे...."

"उसको कहने पर वह अपनी मीरा और इलाका दृष्टान्त देकर

कहेगा, कि लिखना-पढ़ना सिखाओ, विवाह करके क्या होगा ! विवाहके सिवा क्या जीवनमें और कोई काम नहीं है ? इस तरह न जाने क्या-क्या बकेगा ।''

"तो मैं क्या करूं ताईजी, मैं तो किसीको जानता नहीं ! इस गांवमें जो लोग हमारी जातिके हैं, क्या उनमेंसे आप किसी लड़केको करुणाके लिये पसन्द करती हैं ?"

"नहीं अरुण, यह भी मैंने सोच देखा है । इस गांवमें हमारी जातिके जो दो-चार घर हैं, उनमें एक भी सुपात्र नहीं है ।"

"तो फिर ?—बाबाजीसे कहनेके सिवा तो और कोई उपाय नहीं है । पर यदि मैंने उनके सामने यह प्रसङ्ग उठाया, तो क्या मेरा यह उनको कर्तव्यकी शिक्षा देना नहीं होगा ? किन्तु····"

"अरुण, इस विषयमें तुम्हें जितना सङ्कोच है, मुझे भी उनके सामने यह बात कहनेमें उतना ही सङ्कोच है, इसी लिये मैं उनके सामने कुछ कह नहीं सकती और तुम्हारे द्वारा ही कहलाना चाहती हूं ।"

"क्यों ताईजी, आपको क्या बाधा है ? मीराके विवाहकी बात तो आप उनके सामने उठा सकती हैं । यद्यपि वे आजकल संसारके किसी झमेलेमें नहीं हैं, पर आपकी बात अवश्य ही सुनेंगे ।"

"एक वर्ष पहले उनके सामने यह बात चला कर जो उत्तर पाया था, उसको सोच कर उनके सामने फिर कुछ कहनेकी इच्छा नहीं होती । शायद करुणाके भाग्यमें विवाह होना लिखा ही नहीं है, नहीं तो ऐसी बातें क्यों होतीं ?"

"ताईजी, बाबाजीने क्या कहा था ? क्या मीरा और करुणाको अविवाहित रखनेकी उनकी भी इच्छा है ?"

अरुन्धतीने उस शिशु तुल्य सरल बीस वर्षके युवकके अम्लानोज्ज्वल मुखकी ओर देख कर कहा,—"नहीं अरुण, उनकी इच्छा है, कि सनत्के साथ करुणाका विवाह कर दें और मीराका···"

अरुणने अत्यन्त विस्मयसे चौंक कर कहा,—"सनत्के साथ करुणाका ?—यह कैसी बात है ताईजी !—यह भी क्या कभी सम्भव हो सकता है ! करुणा जैसी लड़कीके साथ सनत्का विवाह ?—यह भी क्या हो सकता है ?"

अरुन्धतीने विषादपूर्ण कंठसे कहा,—"असम्भव ही क्यों है, अरुण, लोग तो इसको ही सम्भव समझते हैं ।"

"लोगोंकी बात छोड़ दीजिये ताईजी ! हम लोगोंकी वे वास्तविक स्थितिको भूल सकते हैं और आप भी भूल जा सकती हैं, पर क्या हम लोग कभी भूल सकते हैं ? क्या हम नहीं जानते, कि हमारा स्थान कहां है ? आप कहें—तो ताईजी, इसी गांवमें नौ-कौड़ी चक्रवर्तीके लड़केके साथ—"

"बस करो अरुण, अब ऐसी बातें कह कर मुझे कष्ट न पहुंचाओ । मैं जानती हूं, कि यह बात असम्भव है, सनत् विवाहके नामसे आग बबूला हो जाता है ! पहले तो वह विवाह करेगा ही नहीं, यदि किया भी तो···"

कहते-कहते अरुन्धती रुक गयी । अरुणने कहा,—"यही तो उसके लिये सङ्गत है ताईजी ! उसका आदर्श तो बड़ा ऊंचा है, वह तो साधा-

रण लड़कोंकी तरह अपना जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। किन्तु हम लोगोंके लिये, आपके घरमें जरासा भी मनोमालिन्य न हो सके, इस बातका ध्यान रखना। यदि ऐसा हुआ, तो हम लोगोंके लिये आत्महत्या करनेके सिवा और कोई मार्ग न रह जायगा। आप आज्ञा दीजिये, कि मैं बहुत जल्द जो पत्र पाऊं उसीके साथ...”

“अरुण बेटा, हम लोगोंके लिये तुम अपात्रके साथ करुणाका विवाह कर आत्म-हत्या न करना। उससे तो यही अच्छा है, कि वह अविवाहित रूपसे ही मेरे पास बनी रहे। उसके अभिभावक तो तुम्हीं हो, तुम चाहो, तो उसको चिर-कुमारी रख सकते हो। पर कुपात्रके हाथमें करुणाको न दे देना।”

अरुणने नीचे झुक कर अपनी उदार-हृदया पालमित्री माताकी पदधूलि लेते हुए गाढ़ स्वरसे कहा,—“माता, आशीर्वाद दो, कि मैं कभी तुम्हारे इस स्नेहको न भूल सकूं। मेरा और करुणाका जीवन तो तुच्छ है, उसके लिये आपके घरमें मैं कोई अशान्ति उत्पन्न न होने दूंगा। पर करुणाके लिये तो वर ढूंढना ही पड़ेगा।”

अरुन्धतीने व्यग्र होकर कहा,—“तुम्हें इसके लिये व्यस्त होनेकी जरूरत नहीं है। मैं आज ही इसके लिये पिताजीसे कहूंगी और फिर सनत्से कहूंगी। सनत्की छुट्टियोंमें भी विशेष विलम्ब नहीं है। जब इतने दिन बीत गये, तो और दो महीने सही।”

“अच्छा, यही सही ताईजी।”

× × × ×

श्वसुरके सामने करुणाके विवाहकी बात उठाते ही, उन्होंने कहा,

"बेटी, अरुण और सनत् बड़े हो गये हैं। घरकी सारी जिम्मेदारी अब उन्हीं पर है। तुम उनसे जो चाहो कराओ। मेरा कार्य समाप्त हो गया है बेटी, अब मुझे किसी काममें न फंसाओ।"

११

गर्मियोंकी छुट्टी होनेमें अधिक विलम्ब नहीं है, अरुन्धती भी दिन गिन रही है। उस दिन उन्हें सनत्का एक पत्र मिला। उसने लिखा है,—"माँ, अब घर आनेकी इच्छा नहीं होती—पर तुम्हारे और बाबाजीके पास पहुंचनेको भी कभी-कभी मन व्याकुल होने लगता है। हमारी समितिमें इस बार काम बहुत है, घर जाना इस समय उचित नहीं है, पर मीरा बहन और चचीजीके अनुरोधसे जाना पड़ेगा। मीराकी जिदसे इस बार चचीजी घर जानेको राजी हुई हैं। माँ, मीरा हम लोगों पर बड़ा अभिमान किये हुए है, कि हमने पिताजीकी बीमारीकी बात उन लोगोंको स्पष्ट रूपसे नहीं लिखी! ऐसी दशामें वह अपने ताऊजीको अन्तिम समय एक बार देख लेती। चचीजी भी यही बात कहती हैं। पर उस समय हम लोग ऐसे हो गये थे, कि हमें किसी ओरका ध्यान नहीं था, क्यों न माँ? इला भी हम लोगोंके साथ चलेगी। गांव देखनेकी उसकी बड़ी इच्छा है। उसकी भी माँ नहीं है। वह बड़े मामाकी लड़की है, शायद तुम यह तो जानती होगी। बाबाजीसे कहना, मीरा शीघ्र ही उनके पास आयगी। माँ, मीरा बाबाजीके लिये बहुत रोती है।"

पत्र समाप्त करके अरुन्धतीने चुपचाप आंसू पोंछ लिये। इतने

दिन बाद छोटीबहू घर आनेको राजी हुई है ! पत्र अपने श्वसुरके पास पहुंचा दिया ।

"किसकी चिट्ठी है ? सनत्‌की ? वह कब आ रहा है ? " कहते हुए पत्रको मन ही मन पढ़ गये । देखते-देखते ही उनका मुंह मृत मनुष्यकी तरह विवर्ण हो गया । कांपते हुए हाथोंसे पत्रको एक ओर फेंक कर यन्त्रणापूर्ण स्वरसे एक बार 'आह !' कह कर उन्होंने अपना सिर पकड़ लिया । सुनन्द और आनन्द एक साथ उनके सामने आकर खड़े हो गये । उन्होंने आर्त कण्ठसे कहा,—अब क्या जरूरत है ?—मना कर दो, यहां अब कोई न आये ।"

अरुन्धती चुप रही । मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने कुछ देर बाद गम्भीर स्वरसे फिर कहा,—"अब उनके आनेकी क्या जरूरत है ? वे क्या देखना चाहते हैं ?—मेरी और तुम्हारी यह अवस्था ?" फिर थोड़ी देर बाद तीव्र कण्ठसे कहा,—"चन्द्रनाथ चक्रवर्त्तीकी लड़की और दोहतीकी क्या इतने दिन बाद मनोकामना पूर्ण हुई है जो आज वे, यहां घूमनेके लिये आना चाहती हैं ? सनत्‌को लिख दो उनके आनेकी जरूरत नहीं है ! यदि उसको कुछ लज्जा हो, तो वह भी अब घर न आये । अपनी समितिका काम करता रहे । तुम न लिख सको तो मैं ही लिखे देता हूं ।"

यह कहते ही भट्टाचार्य महाशयने पासमेंसे एक कागज उठा लिया । अरुन्धतीने यह देख, उनके पैरोंके पास बैठ कर कहा,—"पिताजी !"

"नहीं बेटी, मुझे न रोको । उनके इस समयके आनेसे हम लोगों

को अब किसी तरहकी सान्त्वना नहीं मिल सकती । आनन्दके साथ मेरा सब कुछ चला गया है । उनको देख कर यन्त्रणा कम होनेकी अपेक्षा बढ़ेगी ही । सनत् उनके आनेके समयको बिता कर दो दिन बाद आ जाय, मैं यह लिख दूंगा ।"

अरुन्धतीने अपने श्वसुरके पांवों पर दोनों हाथ रख दिये और उसके नेत्रोंसे आंसुओंकी कई बड़ी-बड़ी बून्दें, उनके पांवों पर गिरने लगीं । भट्टाचार्य महाशय कुछ देर स्तब्ध रह कर अन्तमें गम्भीर निःश्वास छोड़ कर बोले,—"अच्छा बेटी, तुम्हारी ही इच्छा पूरी हो ।" हाथमें उठाया हुआ कागज नीचे रख कर वे स्थिर होकर बैठ गये ।

अरुन्धतीने कम्पित कण्ठसे कहा,—"वे मीरा और छोटीबहूसे खूब स्नेह करते थे, उनको भी बहुत कष्ट हुआ है, पिताजी ।"

यन्त्रणा-विद्ध सिंहकी तरह गर्जन करते हुए मृत्युञ्जय भट्टाचार्य ने कहा,—"उनको कष्ट हुआ है ? तुम भी बेटी, सनत्की तरह बच्चा हो गयी ? उन पत्थरोंमें क्या कण हैं, जो कष्ट होगा ? मेरे आनन्द ने उन्हें किसी तरहके अभावका सामना नहीं करने दिया । आज वह नहीं है, इसीलिये संसारकी 'आबहवा' उन्हें लगने लगी है । शायद श्वसुरालमें आ रही है । यह आना बेटी, न तुम्हारे लिये है, न मेरे लिये है, अपने स्वार्थके लिये है ! सोचती होगी, अब और किसी तरफसे आशा है नहीं, किसी तरह बूढ़ेको ही खुशी करके देखूं । इसी लिये आज सात वर्ष बाद यहां आनेकी बात सूझी है !"

अरुन्धती सिर नीचा किये हुए मानो अपने श्वसुरकी इन तीव्र

बातोंको अपने सिर पर ही ले रही थी। भट्टाचार्य महाशय अपने हृदयकी बहुत दिनकी इकट्ठी हुई वेदनाको आज अग्निके रूपमें निकाल रहे थे। वे वृद्धावस्थाके कारण बोलते-बोलते हांफने लगे। यह देख कर अरुन्धतीने उनको पंखेसे हवा करते हुए कहा,—"आपके हृदयमें यदि इतना कष्ट होता है, तो उनके आनेकी कोई जरूरत नहीं है। मैं सनत्को रोके देती हूं, इस बार घर आनेकी ही जरूरत नहीं है! आप—"

"रोक दोगी? नहीं नहीं, ऐसी दशामें वे हमारी इस अवस्थाको अपनी आंखोंसे देखनेका आनन्द कैसे उठा सकेंगे? आने दो—आने दो! आकर देख जायं और दो दिन आनन्दपूर्वक रह जायं! आ जायं, लेकिन उन्हें तुम सावधान कर देना, कि मेरे सामने न आयं, समझ गयी?"

बहू चुपचाप श्वसुरको हवा करके शान्त करनेका प्रयत्न करने लगी और यह भी सोचने लगी, कि उनके आजके इस आघातके लिये मैं ही जिम्मेदार हूं। वह अभी तक यही निश्चय न कर सकी थी, कि उनको आनेके लिये मना किया जाया या नहीं। कहीं सरस्वतीको इस तरह तिरस्कृत न कर दें! मीराका यदि अनादर कर बैठें! इतने दिन बाद दूसरेके घरसे आकर यह आघात उनके लिये बड़ा ही मर्मच्छेदक होगा। फिर वह सोचने लगती थी, कि क्या उसके विद्वान् श्वसुर सचमुच ही ऐसा निर्दय आचरण कर बैठेंगे? यह भी अच्छा हुआ, कि इतने दिनकी इकट्ठी अग्निका पहला झोंका मेरे ही सामने आया है, शायद अब उनके ऊपर इसका

कोई पतङ्गा न पड़ेगा । उनको देख कर—मीराको पासमें देख कर शायद इनको कुछ शान्ति मिल जाय । यह आवेग सामयिक है, वह स्थायी नहीं होगा ।

अरुन्धती इन विचारोंमें लीन हो रही थी और भट्टाचार्य महाशय अपने अभ्यासके अनुसार शान्त सहिष्णु भावसे वेदान्तमें डूब गये थे, पर इतने पर भी उनके शोकमलिन निरानन्द गृहमें जीवनकी एक लहर उत्पन्न हो गयी थी । अरुण और करुणा उस घरके प्रत्येक कामोंमें एक प्रकारका नूतन उत्साह अनुभव करने लगे । उन्होंने तमाम घरको झाड़-बुहार और लीप-पोत कर नये रूपसे सुसंस्कृत और उज्ज्वल कर दिया । चचीजी किस कमरेमें रहेंगी, मीरा और मीराकी बहन कहां रहेंगी, किस घरमें क्या होगा, करुणा प्रतिदिन इसका नया बन्दोबस्त करके अरुणको हैरान करने लगी । अभी तक सनत् जिन दिनों घर आया करता था, वे ही दिन अरुण और करुणाके लिये उत्सवके दिन थे, पर आज मीराकी आनेकी खबरसे वह उत्सव भी ढंक गया था । अरुन्धतीके हमेशा चिन्तित रहते हुए भी अरुण और करुणाके इस उत्साहकी तरंग कभी-कभी उसके हृदयमें भी जाकर धक्का मारती थी । कभी बीच-बीचमें वे भी उनके कामोंमें अपनी सम्मति प्रकट कर अन्यमनस्क हो जाया करती थीं । गांवके आदमी आपस में कहने लगे,—"इस बार भट्टाचार्य महाशय जवान पोते-पोतियोंके विवाहकी तैयारी करने लगे हैं ।" कोई कहता था, अभी तो काला-शौच है, अभी छः महीने और बीत जाने पर सपिण्डीकरण हुए बिना विवाह नहीं हो सकता । कोई स्मृति शास्त्राभिमानी व्यवस्था देता

था—"अरे भाई, तुम लोग शास्त्रोंकी बात तो जानते नहीं, फिजूल हो-हल्ला मचाते हो। आनन्दकी सपिण्डी करनेके बाद ही तो विवाह करना पड़ेगा। कन्या तो अब विवाहकी अवस्थासे उत्तीर्ण हो गयी है न?"

"देखो न भाई, यदि हम लोग इतनी बड़ी कुमारी लड़की घरमें बैठा रखते तो हमें कभीका जातिसे वहिष्कृत कर दिया गया होता। ये समाजपति हैं न, इसलिये चाहे जो करें, कोई कुछ नहीं कह सकता।" मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी जातिके नौ-कड़ी चक्रवर्तीने यह कह कर एक निष्फल निःश्वास छोड़ा।

वह शास्त्रज्ञ विद्वान् इसी समय बोल उठे,—"अरे यह बात भी शास्त्रमें ही है—

"धर्मव्यतिक्रमो दृष्ट ईश्वरानाञ्च साहसं।

तेजीयसां न दोषाय, वन्हेः सर्वभुञ्जयथा।"

ये जो कुछ करते हैं, हम तुम क्या उसको करनेका साहस कर सकते हैं?"

एक सर्वसमाज तत्वज्ञने बाधा देकर कहा,—"अरे भाई, अब पहले केसे दिन नहीं हैं, जो दुग्ध पोष्य लड़के घरमें जो चाहें सो कर लें, आजकल—"

"अरे रहने दो भाई अपने घरकी बातें, हम लोगोंकी वैदिक-श्रेणीमें—"

"भैया सब काम हो जायंगे। आज कल सभी समाजोंकी एक दशा है। तुम्हारे वैदिकसमाजमें पहले विवाहमें रुपया लेनेकी

प्रथा नहीं थी, बल्लालसेनके प्रभावसे तुम लोग बच गये थे, इसीलिये तुम्हारे घरोंमें अभी तक लड़कीका विवाह प्रलयकाण्ड नहीं समझा जाता था। पर अब सभी लोग लुक-छिप कर चोरी करना सीख गये हैं, एक बहानेसे न सही, दूसरे बहाने ले लेते हैं। लड़कीके गहनों और लड़केकी जिद दूसरे आदमियोंके द्वारा प्रकट कराते हैं। अब हमारे-घरोंमें कोई फर्क नहीं रहा।"

नौ-कड़ी अत्यन्त क्रुद्ध होकर बोले,—"यदि ऐसी बात है, तो मृत्युञ्जय भाट्टाचार्यने किस अभावके कारण अभी तक अपनी पोतो और हरिशकी लड़कीका विवाह नहीं किया ? यह क्या समाजकी अव-हेलना करना नहीं है ?"

यह सुन कर वह समाजतत्वज्ञ महाशय, आजकल 'शिक्षा' के नामसे समाजमें जिस एक नये पदार्थने प्रवेश किया है, जिसके दौरात्म्यसे आज लड़के-लड़कियांके मातापिता भी सींग तोड़ बछड़ोंके दलमें मिल कर, समाजमें महा अशान्तिका बीज बो रहे हैं, उसका विशद वर्णन करने लगे और गांव भरके बूढ़े बड़े उत्साहसे उनकी हाँ में हाँ मिलाते हुए भट्टाचार्य महाशयकी बात एक प्रकारसे भूल ही गये।

इधर वह अपेक्षित दिन शीघ्र ही आ पहुंचा। करुणाके आनन्दातिरेक में बह कर, कभी-कभी अरुन्धती भी और सब बातें भूल जाती थी, उसको ध्यान आता था, कि आज मीरा लौट कर आ रही है ! इस घरकी वही आनन्दलता मीरा ! पर अरुन्धतीका यह देख कर मुंह सूख गया था, कि मृत्युञ्जय भट्टाचार्य उस दिन सुबहसे घरके बाहर भी नहीं आये थे।

दिन ढल गया है। शामको वे सब लोग आ जायेंगे। करुणा ठाकुरजीकी आरतीका सारा सामान मन्दिरमें रख कर अरुन्धतीके पास आकर खड़ी हो गयी,—"ताईजी, अभी तक शाम नहीं हुई, आजका दिन इतना बड़ा क्यों हो गया ?"

अरुन्धतीने कुछ हंस कर उसको अपने पास खींच कर कहा,—"अरे, तुम्हारे हाथ इतने ठंढे क्यों हैं करुणा ? ज्वर तो नहीं आ जायगा ? नहीं सिर तो गरम नहीं है। छाती धड़क रही है, क्या कुछ तकलीफ है ?"

"नहीं ताईजी, यह तो यों ही हो रहा है ! हाँ ताईजी, मैं मीरा की इला बहनको क्या कह कर बुलाऊंगी ? वह क्या मुझसे बड़ी है ?"

"पता नहीं बेटी, पहले उनको आने तो दे, फिर देखा जायगा, तू उसे क्या कहेगी।"

करुणाने मुंह नीचा करके कहा,—"सनत् भैया कहते थे, कि मेरी जितनी उम्र है,......"

"अपने सनत भैयासे ही पूछना, कि मैं उसको क्या कहा करूं ? अब चुप रहो, देखूं अरुणा क्या कह रहा है ?"

"ताईजी, आज क्या घरके दूधसे काम चलेगा ? ज्यादा दूधकी जरूरत नहीं होगी क्या ?"

"आज चुप रहो बेटी, जितना है, उतने ही से काम चल जायगा, कल देखा जायगा। बाहरसे जब तक लड़के घरमें न आ लें, तब तक कुछ नहीं कहा जा सकता। पहले वे आ तो जायं।"

"और घण्टे भरमें आ जायंगे ! हारू उनको लेने गया है।"

शामके वक्त ठाकुरजीके घरमें दीया जलानेके लिये, करुणाको बड़ी अनिच्छा होते हुए भी जाना ही पड़ा। उस समय अरुन्धती, भट्टाचार्य महाशयसे कुछ कह रही थी। ठाकुरजीके घरमें धूप-दीप जला कर, तुलसी-मन्दिरमें रखे जाने वाले दियेको हाथमें लेकर करुणाने जैसे ही घरके दरवाजे पर पैर रखा, उसी समय हवाके झोंकेकी तरह कई तरुण और सुन्दर मुख उनके चौकमें आकर खड़े हो गये ! उनकी गति-भङ्गी कैसी सुन्दर है ! और वेश-भूषा उससे भी सुन्दर है। करुणाके हाथके दीपकके प्रकाशमें उनके मुख और वसन-भूषण चमक उठे। एक दीर्घाङ्गी तरुणी कुछ देर उसकी ओर देख कर बोली,—"कौन करुणा है क्या ? हाँ, करुणा ही है, मैं पहचान गयी हूं।"

पीछेसे सनत् बोल उठा,—"करुणा कैसी हो ? तुझसे तो बड़ी है न ? सब बातें याद तो हैं ?"

"मुझसे बड़ी ? जब थी, तब थी, अब कोई मुझसे बड़ी कह तो दे। ताईजी कहा हैं भैया, बाबाजी कहां हैं ? वह आमका पेड़ यही है न ? यहां हम लोग खेला करते थे ! मुझे तो सब बातें याद हैं, कोई चीज नयी नहीं दीखती ! अरे, इस तरह काठकी तरह क्यों खड़ी हो, करुणा बहन ? किसको देख कर ऐसी अवाक् हो गयी हो, इला बहन को या मुझे ? नीचे आजा न !" कहते हुए मीरा करुणाके पास जाने के लिये ऊपर चढ़ गयी।

यह देख कर सनत् चिल्ला उठा,—"मीरा, नीचे आ, नीचे आ, उसे छूना नहीं।"

मीरा अवाक् और विस्मित भावसे सनत्‌की ओर देख कर खड़ी हो गयी और पूछा,—"क्यों, क्या हुआ ?"

पीछेसे धीरे उसकी माताने उत्तर दिया,—"इस घरका ऐसा ही दस्तूर है बेटी, धीरे-धीरे न जाने क्या-क्या देखोगी ! करुणा, अच्छी हो ? तुम्हारे भाई तो अच्छे हैं ?" मीरा अप्रस्तुत होकर इला की ओर देखने लगी ।

इतनी देर बाद करुणा दीपक लिये हुए चौकमें उतरी और तुलसी की आरती करके दीपक वहीं रख दिया । फिर तुलसी-मन्दिरको प्रणाम कर सरस्वतीके पास आकर उसके पैर छुए और कहा,—"भैया अच्छे हैं, चाचीजी ।"

सरस्वतीने अपना भ्रम संशोधन करके कहा,—"ठीक-ठीक, तेरा छोटा भाई भी तो अब नहीं है ! मुझे नरू और तेरे नितकी ही बात याद थी—छोटे भाईकी बात भूल गयी थी ! ऐसा भी भाग्य होता है ! खैर, अच्छी तो हो ?"

करुणाने मृदु स्वरसे कहा,—"हां ।"

"वाह ! तुम तो खूब हो करुणा, अपनी दीदीको भी प्रणाम नहीं किया ? मुझे न किया तो न सही—मैं तो नयी नहीं हूं, पर ये तेरी बड़ी बहनें हैं, ये भी तुझे प्रणाम करने योग्य नहीं प्रतीत हुई ? तुम इतनी हतश्रद्ध हो ?"

सनत्‌की परिहासपूर्ण बात सुन कर करुणाने कुछ हंस कर मीराकी ओर देखा—फिर एक बार सनत्‌के पैरोंमें सिर नवा कर और एक नवागता तरुणी, जो सन्ध्याके तारेकी तरह आंगनके एक

कोनेमें खड़ी थी, उसकी ओर बढ़ते ही सनत 'हा, हा' करके हंस पड़ा।

तरुणी कुछ पीछे हट कर त्रस्त भावसे लेकिन मधुर कण्ठसे बोली,—"मुझे प्रणाम न करो भई, मैं तो तुम्हारे बराबर ही की हूं ?"

फिर थोड़ी देर बाद कहा,—"क्या अब मैं तुम्हें छू दूं ?"

करुणाने ऐसा मधुर कण्ठ और ऐसा रूप कभी नहीं देखा था! इसलिये वह अवाक् होकर उसकी ओर देख रही थी। इलाके इस प्रश्न से वह उसकी ओर बढ़ी। यह देख कर इलाने आगे बढ़ कर उसका हाथ पकड़ लिया।"

"मां कहां है, करुणा ? क्या उन्हें अभी तक पता नहीं लगा, कि हम लोग आ गये हैं ?"

सरस्वतीने कुछ खेदपूर्ण स्वरसे सनत्‌को कहा,—"शायद उनसे बाहर नहीं निकला जाता। चलो, हम लोग उनके पास चलें सनत्।"

शुभ्र और रूक्ष विधवा वेशमें अरुन्धती आकर जब सरस्वतीके सामने खड़ी हुई, तो सरस्वती भी चुप-चाप मुंह ढांक कर उनके पैरोंके पास बैठ गयी। मीराकी स्मृतिमें भी आजसे सात वर्ष पहलेकी लाल किनारीदार साड़ी पहने हुए जो ताईजी थीं, आज उनके साथ किसी तरह भी मेल नहीं खाता था, इस लिये मीरा भी स्तब्ध होकर खड़ी रह गयी!

अरुन्धतीने सरस्वतीका हाथ पकड़ कर मृदु कंठसे कहा,—"चलो बहन घरमें चलो।" फिर पासमें खड़ी हुई अवाक् मुखी मीराको दोनों हाथोंसे पकड़ कर अपनी छातीसे लगा लिया।

इसी समय मीराको अपने ताऊजीकी बात याद आ जानेके कारण उसकी आंखोंमें आंसू आ गये थे। घर आनेके आनन्दमें वह यह बात भूल गयी थी। कुछ देर तक सब लोग चुप-चाप रहे। फिर एक और तरुणीको चुप-चाप संकुचित भावसे अपने पैरोंकी धूलि लेते हुए देख कर अरुन्धतीने सरस्वतीकी ओर देख कर कहा,—"यही इला है न, छोटीबहू?" फिर आशीर्वादके तौर पर उसके सिर पर हाथ फेरने लगी। इला, उनके पैरोंमें सिर नवा कर मीराके पास आकर खड़ी हो गयी।

मीराने इतनी देर बाद भग्न कंठसे कहा,—"ताईजी बाबा कहां हैं?—चलो मां, उनके पास चलें।"

यह सुन कर अरुन्धतीने कुछ इधर-उधर करके कहा,—"वे आन्हिक कर रहे हैं, पहले तुम अपने इन कपड़ोंको उतार डालो।"

मीराने अबोधकी तरह कहा,—"उसमें तो बहुत देर लगेगी, अभी तो इसी तरह हो आऊं—इसमें क्या दोष है?"

"नहीं बेटी, वे गुरु लोग हैं। उनके पास इस तरह नहीं जाना चाहिये।"

मीराने, अप्रस्तुत और क्षुण्ण भावसे उनकी आज्ञाका पालन किया। उसने अपना जूता उतारते हुए, इलाके पैरोंकी ओर ध्यान दिया तो देखा, कि वह पहले ही अपने जूते उतार चुकी है।

१२

गांव भरमें एक तरहका खासा शोरसा मच गया था। आनन्दकुमारकी मृत्युके बाद गांवकी बड़ी-बूढ़ी, युवती-प्रौढ़ा और छोटे-मोटे बाल-बच्चोंने भट्टाचार्य महाशयके घर रथ-यात्राकी

जैसी भीड़ लगा दी थी, इस समय उससे भी अधिक उत्साहके साथ, सुबहसे शाम तक उन्होंने भट्टाचार्य महाशयके घर और उसके बाहर एक प्रकारके तूफानकी सृष्टी कर डाली। अरुन्धतीको उनकी खातिर-तवाजह करनेमें कुछ दिन तक इतना व्यस्त रहना पड़ा, कि वह मीरा आदिको देखने-भालनेकी भी फुरसत न पा सकी।

मीराकी मां इन बातोंको जानती थी, इस लिये वह भी अरुन्धतीके साथ आने-जानेवालियोंके आदर-यत्न करने और उनकी खातिर-तवाजहमें लग गयी थी। लेकिन मीरा धीरे-धीरे क्रोधसे पागल हुई जा रही थी और उसका गुस्सा देख कर सनत् हंसते हुए पागल हो रहा था। सनत् कहता,—"राम राम, बड़ी भूल हो गयी, यदि मैं ऐसा जानता, तो थोड़ेसे टिकट छपा लाता। उनके दो-चार पैसे दाम भी रक्खे जाते तो श्रीमती मीरादेवीके घर आनेके बहाने हम लोगोंको कुछ आमदनी हो जाती।—क्या कहती हो, करुणा? भारी भूल हो गयी है न?"

करुणाने मीराके आरक्त मुखकी ओर देख कर थोड़ासा हंस दिया, पर कुछ कहा नहीं। मीराने दोनोंकी ओर देख क्रुद्ध होकर कहा,—"क्यों मैं बकरा हूं या भालू? जो मेरे नाकमें रस्सी डाल कर अपने देशमें नचानेके लिये लाये हो? मैं यह कहे देती हूं, कि यदि छोटे-मोटे बन्दर-बन्दरी इस तरह फिर मेरे पीछे पड़े तो अच्छा नहीं होगा भैया!"

मीराका क्रोध देख कर सनत्‌ने और भी हंसते हुए कहा,—"मां, मीरा क्या कह रही है, जरा आकर सुन तो लो! जो लोग इसे देखनेके

लिये आते हैं, उन्हें बन्दर बताती है और अपनेको बकरा और भालू ! कहती है —अच्छा नहीं होगा—मैं भी तो सुनूं, तुम उनका क्या करोगी ?"

"मैंने क्या भले आदमियोंके लिये यह बात कही है ? यह बात तो जिनका शरीरतो न हिस्से कहीं है ?—और एक हिस्सा कहीं है, कही हैं यह जो तुम्हारा हरि-नरू भूत प्रेतका दलका दल है, जिनका शरीर खुला हुआ है, उन्हींके लिये है। किसी-किसीका तो जुलाहेके साथ बिलकुल ही असहयोग है, वे क्यों दल बांध कर आते हैं और आंख फाड़ कर देखते रहते हैं ? क्या हम तमाशा हैं ? कहो तो करुणा बहन ?—क्या बुरा नहीं मालूम होता ?"

करुणाने मृदु स्वरसे कहा,—"यहां किसीके घर बहू आने पर भी इसी तरह देखने जाते हैं—और—"

"मीरा इस बार सप्तम स्वरमें करुणाकी बात काट कर बोली,— "हम लोग क्या गांवमें बहू बन कर आई हैं ?"

उसकी आवाजकी तीव्रतासे करुणाको चुप होते हुए देख कर, इलाने कुछ हंस और मीराके शरीर पर हाथ रख कर कहा,—"तो तुम इतनी नाराज क्यों होती हो ? बड़े आदमियोंसे थोड़ी बहुत लज्जा होनी चाहिये और वह भी मुझको, तुम्हें तो उतनी भी नहीं होनी चाहिये ! लेकिन इन निरीह लड़कोंका दल—जो चुप-चाप खड़े हुए देखते रहते हैं, उन पर तुम्हें क्रोध आता है !"

"नहीं तो क्रोध नहीं होगा ? मनुष्यको भी आंख फाड़-फाड़ कर देखा जाता है ? हम चतुर्भुज हैं या षट्पद ?"

मीराके क्रोध पर सनत् और इलाको हंसते देख कर करुणाने कहा,—"इन्होंने ऐसी बात कभी नहीं देखी थी, इसी लिये इस तरह देखते हैं। मोहल्लेमें जितनी बहू आती हैं या कोई नया आदमी आता है, उसको भी तो ये लोग देखने जाते हैं, फिर—"

सनत्‌ने और भी ज्यादा हंस कर कहा,—"करुणा, इनमें ऐसी क्या बात है, जो और लोगोंमें नहीं है? ये क्या बड़ी तमाशेकी वस्तु हैं?"

करुणा सिर नीचा करके चुप हो गयी।

"कहो न, क्या बात आश्चर्यकी है?"

सनत्‌के दो-तीन बारके प्रश्नसे, लाचार होकर करुणाने कहा,—"ऐसा तो मैंने कभी देखा नहीं था।"

सनत् हास्यपूर्ण मुखसे मीरा और इलाकी ओर देख कर कुछ कहना चाहता था, पर इलाके मुंहकी ओर देख कर सहसा सहम गया। लज्जाके साथ और एक न जाने किस वस्तुकी आभा पड़नेसे वह मुख सचमुच ही मनुष्यका मुख नहीं प्रतीत होता था। देवताको किसीने नहीं देखा, किन्तु शिल्पीके मानस दर्पणमें, दया, स्नेह, ममता और प्रेम इत्यादि मनोवृत्तियोंके मुखके आदर्शकी छाया होती है, इस मुख पर भी वैसा ही आभास पड़ रहा था। तरुण युवक सनत्‌की अन्तरात्मा, सहसा निर्वाक होकर उसको देखने लगी। इलाको मानों आज उसने नयी तरहसे देखा है। मीराने भी चञ्चल हो करुणाकी पीठ पर एक चपत जमा कर कहा,—"अहा! मुझको इसने सचमुच अभी देखा है। हाँ, इला बहनको,—"

करुणाने सिर ऊपर उठा मीराकी ओर देख कर कहा,—"नयी तरहसे ही मालूम होता है मीरा ! और इला बहनको तो इतने दिन तक सोचती हुई भी अनुमान न कर सकी थी। तुम्हें तो पहले देखा था, इसलिये कुछ आश्चर्य नहीं होता—पर इला बहनको तो मोहल्लेके इन लड़कोंकी तरह ही मेरी इच्छा भी घूर-घूर कर देखनेकी होती है।"

अबकी मीराके हंसनेका पाला था। वह अपने मधुर कण्ठसे हंसती हुई बोली,—"क्या घूर कर देखनेकी इच्छा होती है री जङ्गली ? कपड़े-लत्ते, साज-सज्जाको या मनुष्यको ?"

करुणाने सिर नीचा कर अम्लान वदनसे कहा,—"सभी ! इनका सभी सुन्दर है !"

"अच्छा ? इनका सभी कुछ सुन्दर है ? मालूम होता है, इनकी यह स्तुति करनेके लिये ही अब तक मुझे भी इस दलमें शामिल कर रखा था, अब बातोंका सिलसिला अपने ठिकाने पर पहुंचते ही मैं कुछ नहीं रही ?" मीराके स्फुरित ओष्ठाधरों पर अभिमानका भाव घनीभूत हो उठा।

करुणाने चुपचाप मीराका एक हाथ अपने दोनों हाथोंमें दबा कर उसके कानमें आदरपूर्वक कहा,—"तुम तो मेरी मीरा हो ही।"

"जाओ, तुम्हारा सूखा आदर मुझे नहीं चाहिये।" यह कह कर, करुणाके हाथोंको बनावटी क्रोधसे झटकते ही, उसने सामने देखा, कि माँ और ताईजी सामने खड़ी हैं।

सनत्‌ने कहा,—"माँ, मीरा हम लोगोंके देशके आदमियों पर बड़ी नाराज हैं।"

माँने रोक कर कहा,—"नाराज होनेकी बात पीछे होगी। हां, क्या यह देश मीराका नहीं है, जो हमारा देश कहता है?"

"वाह वाह! तुम एक बार यह बात कह देखो न, अभी तुम्हें बता देगी।"

"अरुन्धती मीराकी ओर देख कर स्नेहपूर्वक बोली,—"नाराज हो गयी है, पगली? ये लोग समय न होते हुए और अच्छी तरह बात करना न जानते हुए भी, तेरे देशके आदमी हैं—अपने घरके पड़ोसी। तुम्हें यह बात नहीं भूलनी चाहिये।"

मीराको फिर बोलनेका मौका मिल गया। उसने कहा,—"देशके आदमी और पड़ोसी हैं, यह तो मैंने मान लिया, पर इसीलिये चाहे जो कुछ कर सकते हैं?"

"कहेंगे तो हैं ही। यही देखो न, हमने अभीतक करुणाका विवाह नहीं किया है, इसलिये इसीके मुंह पर न जाने क्या-क्या कहते हैं! करुणा तो तुमसे भी बड़ी है। क्या करूं, अनेक तरहकी विपत्तियोंमें दिन बीत रहे हैं। लोगोंकी बात सहनेके सिवा दूसरा उपाय नहीं है।"

सनत्ने हंसकर कहा,—"ओ! ये बातें होती हैं शायद! इसीलिये मीरा इतनी नाराज हो रही है।"

सरस्वतीने कहा,—"चाहे जो कुछ हो बहन, पर छोटे-छोटे गाँवों में लोग बड़ी अनधिकार चर्चा करते हैं। शहरमें ये सब झगड़े नहीं हैं। कोई किसीकी बातमें नहीं है, जिसकी जैसी इच्छा हो, वह उसी तरह चले। सब अपनी इच्छाकी बात है।"

"हां, यह तो ठीक है, पर उससे भलाई-बुराई दोनों ही होती हैं।

खैर, जाने दो। बेटी मीरा, करुणा पर क्या इसीलिये नाराज हो रही है ? मीरा, यह बड़ी डरपोक है, इसको···"

"नहीं-नहीं, तुम्हारी इस डरपोक लड़कीको मैंने कुछ नहीं कहा। आओ तो इला-करुणा बहन और भैया, थोड़ी देर बैठ कर खेलें, मैं तो इन बातोंसे विरक्त हो उठी हूं। उठो न करुणा दीदी, उठ कहती हूं।"

अरुन्धतीने हंसकर कहा,—"कौन कह सकता है, कि करुणा, मीरासे बड़ी है ? फिर तुम क्यों कहती हो बेटी।"

"तुम्हीं लोगोंके डरसे। नहीं तो यह मुझसे कैसे बड़ी है ? देखने में सुननेमें या जोरमें ? अच्छा, इला बहन, चलती हो या नहीं ?"

अरुन्धतीने उसको रोक कर कहा,—"मीरा, तुम्हारे बाबा इस समय लेटे हुए हैं। जाओ उनके पास बैठ कर थोड़ी देर तक बात-चीत करो।"

मीराने फिर होठ फुला कर कहा,—"वाह ! ऐसे भी बाबा होते हैं, जो आज कई दिनसे आई हूं, अच्छी तरहसे बात भी नहीं करते। मुंह नीचा किये रहते हैं, मानों मेरा मुंह नहीं देखेंगे। क्या बात करूंगी ? शायद पहले दिनकी तरह मुझसे बात ही न करें। इतने दिन बाद आई हूं, अच्छी तरह बात तो कर लेनी चाहिये थी ! अपनी बहूसे तो कुछ 'हां ना' कहा, और प्रणाम करने पर सिर पर हाथ भी फेरा, परन्तु मेरे लिये कुछ भी नहीं ! मैं नहीं जाऊंगी। तुम्हारे बाबा तुम्हारे ही रहें।"

अरुन्धतीने वेदना-विद्ध कंठसे कहा,—"नहीं पगली जा, वे तुमसे

बात नहीं करते, तो तुम उसका कारण नहीं समझती ? जब तू अपनी माँके साथ उनके पास गयी थी, तब वे कितने अस्थिर हो गये थे, यह नहीं देखा ? कुछ अपने बचपनकी बात याद नहीं है ?"

"क्यों याद नहीं है ? पर आजकल क्या वे तुम्हारे देशकी बहू हो गये हैं ?"

इलाने इस बार असहिष्णु भावसे कहा,—"मीरा, तुम पागलोंकी तरह कैसी बात बक रही हो ? जाओ न !"

सरस्वतीने भी कहा,—"हां मीरा जा, अब तू बड़ी हो गयी है, कुछ बुद्धिपूर्वक बात कहनी चाहिये। सभी जगह जो मनमें आए वह कह डालना ठीक नहीं है।"

मीरा लज्जित होते हुए भी पहलेकेसे ही स्वरमें बोली,—"वाह वे तो अपनी पुस्तकमें ध्यान लगाये पड़े रहेंगे और मैं अकेली बैठी रहूंगी ? अच्छा, करुणा बहन भी मेरे साथ चलें।"

ताईजीने स्नेह मिश्रित स्वरसे कहा,—"जाकर 'बाबाजी' कह कर आवाज देना और जबरदस्ती बात करने लगना। करुणा जाय या न जाय, तुझे अकेले जाते हुए लज्जा क्यों आती है ? बहू होकर तो तूही आई है, नहीं तो अपने बाबाके पास जाते हुए लज्जा होती ?"

सनत्‌ने ताली बजा कर कहा,—"खूब हुआ, कैसी फंसी हो।" कह कर मीराकी ओर देखते ही मीराने भाईके साथ नियमानुसार युद्ध का सूत्रपात करते हुए कहा,—"वाह! कैसे साधु बने फिरते हो ? कह दूं सबको तुम्हारे साहसकी बात ? अपने बाबाका नाम

'विश्वम्भर रखा' है और उनके सामने जाकर न जाने कैसा जाड़ासा चढ़ जाता है ? अरुण भैया क्या उनके....”

यह सुनकर असहिष्णु भावसे मीराको रोक कर सनत्‌ने कहा,—“चुप रहो हनूमानी, कुछ उलट-पलट न कर बैठना । अरुण भैयाकी तरह गुरुजनोंका मान करनेकी ताकत मुझमें नहीं है, यह बात मां और चची बहुत दिनसे जानती हैं ।”

“तो करुणा बहनकी तरह मुझमें इतना साहस नहीं है, कि चुप-चाप उनके पैरोंके पास बैठी रहूंगी । मैं ही यह बात कहती हुई क्यों डरूं ।”

मीराके इस अपूर्व वीरत्वकी बात सुनकर सब हंस पड़े । ताईजीने हंसते हुए कहा,—“पर एक दिन उनकी गोदमें बैठकर, उनके बाल खींचनेका तेरे अन्दर साहस था और सनत्‌में नहीं था, यह तो याद है न ? अभी तक सनत्‌में वह डर बना हुआ है । इसने उन्हें अभी तक नहीं पहचाना ।” अरुन्धती सबके अलक्ष्यमें एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर चुप हो गयी ।

“ताईजी !” बाहरसे अरुणकी आवाज सुनकर सनत्‌ने चौंक कर कहा,—“यह क्या अरुण भैया, भीतर आओ न, तुम इतने दूर-दूर क्यों रहते हो ? आह तुम तो हमेशासे एक जैसे ही हो । बाबाजीके सिवा और किसीसे तुम्हारी राशि नहीं मिलती ।”

ताईजीने कहा,—“भीतर आकर जो कहना चाहते हो, कह दो अरुण ।”

सरस्वतीने अपनी जेठानीका समर्थन करते हुए कहा,—“भीतर

आओ न बेटे, ये तो तुम्हारी बहनके जैसी ही हैं। हमारे शहरके लड़कोंमें इन मामलोंमें खूब सहज अप्रतिम भाव होता है। तुम लड़के होकर इनसे लज्जा करोगे, तो ये भी तुमसे लज्जा करने लगेंगी। तुम करुणाके भाई हो तो इनके भी भाई हो।"

सबके एक साथ बुलानेसे अरुण लाचार होकर भीतर जाकर एक कोनेमें खड़ा हो गया और इस तरह भीतर बुलानेके कारण वह जिस कामके लिये आया था, उसको भूलसा गया।

परन्तु मीराको ये बातें अच्छी नहीं लगीं। उसने अपनी पहलेकी बातोंका सिल-सिला चलाते हुए कहा,—"भैया, देखो मैं तुम्हारे अपवादको दूर किये देती हूं। मैं यह पहले ही कहे देती हूं कि वहां जा कर बाबाके जितने बाल बचे हुए हैं, उन्हें उखाड़ दूंगी। बैठी रहो करुणा भी, तुम्हें मेरी सहायता करनेकी आवश्यकता न पड़ेगी।"

सारे कमरेको झंकृत करती हुई मीरा चली गई। उसके रोकनेसे करुणाने भी उठनेकी चेष्टा नहीं की और अरुणके आते ही उठ जाना ठीक नहीं है, यह सोचकर इला भी चुप-चाप बैठी रही।

अरुन्धती मीराको उद्देश्य करके स्नेहपूर्वक बोली,—"अभी तक वैसी ही जबां-दराज है और दुष्टता कुछ और भी बढ़ गयी है। अभी तक सबका आदर पा रही थी न, बाबाके अभावका ध्यान नहीं आ सका।"

सरस्वतीके मुंहपर अन्धकारकी छाया आ पड़ी। उसने औदास्य मिश्रित स्वरसे कहा,—"हां, सबका आदर पानेसे इसका ऐसा ही

स्वभाव हो गया है। पर अब इसका यह अभिमान कौन रखेगा, इसका ठिकाना नहीं है।"

अरुन्धती सरस्वतीकी बातोंके ढंगसे समझ गयी थी, कि उसको अपने पितासे बहुत कुछ शिकायत है और भाईके ऊपर भी वैसा प्रसन्न-भाव नहीं है। पिता-भ्राताने कन्या या बहनकी कोई स्वतन्त्र व्यवस्था नहीं की है, इसलिये सरस्वतीका मन टूट गया है, अरुन्धतीको यह संदेह था। अब उसकी बातोंसे यह संदेह दूर हो गया। उन्होंने कहा,—"छोटी बहू, इतना दुःख क्यों करती हो। जबतक पिताजी हैं, सनत् और मीराको किस वस्तुका अभाव है? इनके सिवा उनका भी तो और कोई नहीं है।"

सरस्वती इस बातका उत्तर न दे कुछ देर तक चुप रहकर बोली,—"अब हम लोग जांय बहन, और कबतक रहेंगे?"

अरुन्धतीने विस्मय और वेदनापूर्ण भावसे अपनी देवरानीकी ओर देखा। सरस्वती उस दृष्टिके सामने आंख नीची कर लेनेके लिये बाध्य हो गयी। फिर गाढ़ स्वरसे कहा,—"तुम्हें मैं जानती हूं बहन, तुम्हारे मनमें सनत् और मीराके लिये जरा भी फर्क नहीं है। मीरा बड़ी मन्दभाग्य है, जो उसने अपना ऐसा ताऊ भी खो दिया!"

"फिर किसके अनादरका भय करती हो बहू? पिताजीका? अरी मेरे मनमें सबसे अधिक दुःख इसी बातका है। मुझे तो तुम अपने मनमें चाहे जैसा समझो, पर यह पाप नहीं करना, मीराका इससे मंगल न होगा छोटी बहू। इसको उसके बाबाकी गोदमें अब भी लौटा दे।"

"पर बहन, इसको यहां रखनेसे तो काम नहीं चलेगा, मैं इसका पढ़ना-लिखना तो छुड़ा नहीं सकती। अगले साल मीरा परीक्षामें बैठेगी, यह तो तुम जानती ही हो। सनत् ही क्या घरमें बैठा रहता है? उसको भी तो पढ़नेके लिये दूर भेजना पड़ता है। मीराका भी दूर रहनेसे यदि उनकी गोदमें रहना न हो सके तो बतलाओ, मैं क्या करूं?"

"मीरा चौदह वर्षकी हो गयी है, तुम्हें यह तो ध्यान है? क्या इसका विवाह नहीं करोगी? इसका और करुणाका इस बार विवाह करना ही पड़ेगा, नहीं तो पिताजी समाजमें मुंह नहीं दिखा सकेंगे।"

चन्चीके उत्तर देनेसे पहले ही सनत् अपनी मांके पास खिसक कर बोला,—"मां, तुमने यह बात नहीं सुनी है, कि मीरा विवाह न करेगी? इनकी भी एक छोटीसी समिति है। मीरा और इला उसकी सभ्या हैं। ये बड़ी होकर देशका काम करेंगी, विवाह नहीं करेंगी, यह प्रतिज्ञा कर चुकी हैं।"

इतनी देरसे इन लोगोंके घरके सुख-दुःखकी बातें सुनते हुए इलाको बड़ा सङ्कोच हो रहा था, पर अरुणको इन्होंने जिस तरह अनुरोध कर भीतर बुलाया था, उसको देख कर उठते हुए भी कुण्ठित हो रही थी। अब करुणाके उठते ही सुयोग पाकर वह भी उठ खड़ी हुई। उनको उठते हुए देख कर सनत्‌ने कहा,—"अरे ये इतनी देरसे यहां बैठी थी, मुझे तो इस बातका ध्यान ही नहीं था। अभी ये लोग मीराके सामने जाकर नालिश करेंगी। चलो अरुण भैया, हम लोग भी चलें।"

अरुन्धतीने रोक कर कहा,—"देखो सनत्, कामकी बातोंके वक्त इस तरह भागनेसे काम नहीं चलेगा। बैठ जाओ, अरुण तुम भी बैठो। अब तुम बड़े हो गये हो। घरकी बातोंका खयाल नहीं करोगे, तो कैसे काम चलेगा। आज इस बातका फैसला हो जाना चाहिये, ताकि मैं पिताजीसे कुछ कह सकूं।"

"तो मां, इनको भी तो बैठाओ न। जिसका विवाह है उसको ध्यान भी नहीं और पड़ोसीको नींद नहीं आती! करुणा भाग नहीं सकेगी। यह तो बङ्गबालिका-समितिकी सभ्य नहीं है।"

सनत्की यह बात सुनकर इला जाते-जाते भी औरोंकी दृष्टि बचा कर कुछ भृकुटी-कुटिल कर चली गयी, पर करुणाकी पांडु-मुख छवि एक बार भी उन्नमित नहीं हुई, वह उसी एक भावसे चली जा रही थी। यह देखकर सनत् दौड़कर दरवाजा रोक कर खड़ा हो गया और कहा,—"वाह फिर भी भागती हो? देखो मां, देखो।"

अरुन्धतीने गम्भीर होकर कहा,—"क्या करते हो सनत्, रास्ता छोड़ दो।। क्यों उसको दिक् करते हो?"

"कष्ट देता हूं या इसके भविष्यके बहुतसे कष्टोंको कम करना चाहता हूं? इसी लिये तो ठहरनेके लिये कहता हूं और मीराको यहीं बुलाये लाता हूं।"

"तुम जो कहोगे सो मैं समझ गयी हूं सनत्। करुणाको भी अपनी उस 'बङ्ग-बालिका-समिति' की सभ्य बननेकी राय दोगे न? जो कुछ कहना हो, मुझसे कहना और इसका रास्ता छोड़ दे।"

"वाह। इसके भविष्यके हर्ता-कर्ता मालूम होता है, तुम्हीं हो—

इसीलिये शायद, अपने विषयकी बात यह न सुन कर तुम सुनोगे ?"

"हां, ये चौदह-पन्द्रह वर्षकी लड़कियां हैं, इनके भविष्यकी चिंता ये तुम लोगोंकी देखा-देखी चाहे जितनी समितियां बनाएं—हमीं लोगोंको करनी पड़ेगी। रास्ता छोड़ दे पाजी, लड़की गिरी जाती है।"

माताके अग्रसर होते ही सनत्‌ने देखा, कि सच-मुच ही करुणा गिरनेके लिये तैयार है। यदि वह पासकी दीवारका सहारा न लिये हुए होती, तो शायद उसका कम्पित और क्षीण शरीर कभीका नीचे गिर पड़ता। कुछ अप्रस्तुत और लज्जित होकर सनत् दर-वाजेके सामनेसे हट गया और चुप-चाप बैठे हुए अरुणकी ओर देख कर बोला,—"अरुण भैया, तुम भी हमेशासे इन्हीं लोगोंके दलमें मिले हुए हो, मुझे इस बातका अत्यन्त दुःख है! करुणाकी तरह मालूम होता है, तुम भी मेरे ऊपर खूब विरक्त हो रहे हो न ? जो इस तरह अनर्थक अनधिकार चेष्टा करता है।"

श्वेत-पत्थरकी मूर्त्तिकी तरह अभी तक निश्चल भावसे अरुण सनत्‌की बातें सुन और उसका कांड देख रहा था। इस बार कुछ सचेत होकर क्षोभ मिश्रित स्वरसे कहा,—"नहीं भाई, तुम्हें पूरा अधिकार है। पर यह जो तुम अनर्थक कह रहे हो सो तो सभी बातें अनर्थक हैं।"

सनत्‌ने उसकी ओर घूम कर कहा,—"कैसे अनर्थक हैं ? यदि तुम मेरी बातोंको समझो, तो तुम्हें सार्थक ही प्रतीत होंगी। और यदि गतानुगतिककी धारामें बहना चाहो और प्रत्येक जीवनका कुछ

मूल्य न समझ कर इसी तरह नष्ट होने देना चाहते हो, तो दूसरी बात है।"

सनत् इस बार फिर बड़े तेजसे अरुणकी इस संक्षिप्त बातको न समझ सकनेके कारण उत्तर देना चाहता था, परन्तु अपनी माताकी विरक्तिपूर्ण आज्ञाका स्वर सुनकर करुणाकी ओर देखा, कि वह अभी तक उसी तरह दीवारका सहारा लिये हुए एक टक सनत्‌की ओर देख रही है। उसके निष्प्रभ करुण नेत्र न जाने कहांसे आभा प्राप्त कर उज्ज्वल हो उठे हैं, गालों और होठों पर एक तरहका लोहित राग धीरे-धीरे अपना अधिकार जमा रहा था। वह स्तब्ध होकर सनत्‌की ओर देख रही थी और उसकी बातोंको ऐसे ध्यानसे सुन रही थी, जैसे उन्हें मन लगाकर पी रही हो। यह देखकर अरुन्धतीने कहा,—"करुणा, तुम्हें मीरा कबसे बुला गयी है, तू इनकी बातें क्या सुन रही है ? जाओ न !"

क्षणभरमें मानों हवाके झोकेसे दीपक बुझकर उसका प्रकाश न जाने कहां चला गया। करुणा कुछ चौंक कर उस कमरेमेंसे चली गयी, पर उस प्रकाश बुझनेके समयकी दृष्टि एक बार सनत्‌की दृष्टि-के साथ मिल कर बुझ गयी। माताकी इस विरक्तिसे या और न जाने किस चीजसे सनत्‌के हृदयमें व्यथा हुई है, वह इसको स्वयं नहीं समझ सका।

अरुन्धतीने देवरानीकी ओर देख कर कहा,—"इसकी बात तो हमेशासे ही सुन रही हूं, पर अब तुम बतलाओ छोटीबहू, कि मामला क्या है ? इनको बाल—समितिकी बात—छोड़ दो, मैं तो

केवल तुम्हारे हृदयकी बात सुनना चाहती हूं। क्या सच-मुच मीराका विवाह न करोगी ?"

सरस्वती अभी तक सनत्‌के द्वारा अपना वक्तव्य प्रकट होते देख और स्नेहमयी जेठानीके साथ अपने अप्रिय मतभेद्‌के प्रसङ्गको दबा देनेके लिये चुप थी, पर अब उनके हाथसे निस्तार न पाकर उत्तर देनेको मजबूर होना पड़ा,—"विवाह न करनेकी बात तो मैं कह नहीं सकती, पर हां, वर अच्छा होना चाहिये। जब तक अच्छा वर नहीं मिलता तबतक लड़की चाहे जितनी बड़ी हो जाय, मुझे परवा नहीं है और बहन, यह भी बात है, कि लड़कियां पढ़-लिख गयी हैं और उनमें सोचने-समझनेकी शक्ति आ रही है, यह अच्छा है या बुरा ? विवाह तो होगा ही उससे पहले जितना पढ़ा-लिखा जाय अच्छा ही है। और थोड़ी उम्र बढ़ जाने दो, दो-एक परीक्षा दे ले। जानती हो बहन, इलाने इस साल मेट्रिक दिया है। यह जैसी बुद्धिमती लड़की है उसको देखते हुए तो 'स्कालर-शिप' भी मिल जाना चाहिये। इसीके साथ रह कर तो मीरा इतनी जल्दी, इतना पढ़-लिख सकी है। यहां तो सात वर्ष तक·······"

अरुन्धतीने असहिष्णु भावसे उसको बाधा देकर कहा,—"खैर, तुम लोगोंकी इतने आदमियोंसे जान-पहचान है, क्या अभीतक तुमने अपनी श्रेणीका कोई ऐसा लड़का नहीं देखा, जिसके साथ मीराका विवाह कर दिया जाय ? क्या कोई लड़का पसन्द नहीं आया ?"

"अभी देखा ही कहां है ? अगले साल मीरा परीक्षा दे ले, फिर विवाहकी बात होगी। तुम सोचती क्यों हो बहन, कलकत्तामें तो

मैंने अपनी जातिमें इससे भी बड़ी-बड़ी कितनी ही लड़कियां कुमारी देखी हैं। आजकल इन बातोंसे जाति नहीं जाती ! और यदि चली भी गयी, तो मैं परवा नहीं करूंगो। मीराके ताऊने भी तो इसको पढ़ानेमें कभी अपनी असम्मति प्रकट नहीं की थी। यह तो तुम जानती ही हो, कि इसको पढ़ानेकी साध मेरी बहुत दिनकी है।"

"हां जानती हूं, पर पिताजीके मुंहकी ओर भी तो थोड़ा बहुत देखना पड़ेगा बहन, वे मीराका विवाह नहीं कर सके हैं, इसलिये करुणाका विवाह भी रोक रखा है ! गांवके सब आदमी उन्हें आ-आकर दिक् करते हैं ! बहन, उनका मुंह नीचा न कराओ।"

"तो तुम लोग करुणाका विवाह कर देना, उसमें क्या बाधा है ? करुणा तो मीरा और सनतकी सगी बहन नहीं है, जो उसका विवाह हुए बिना इसका विवाह नहीं हो सकता ? हम लोग मीराको चाहे जितनी बड़ी करें, चाहे जितने दिन तक विवाह न करें, इससे करुणा के विवाहमें क्या बाधा हो जाती है ? अरुणको उसका प्रबन्ध करना चाहिये।"

यह कह कर सरस्वतीने अरुणकी ओर तीव्र दृष्टिसे देखा। अरुण ने मृदु स्वरसे कहा,—"हां, हो तो रहा है।"

सरस्वतीने कौतूहली होकर कहा,—"क्या सचमुच हो रहा है ? यह क्यों नहीं कहती बहन ? ऐसी अवस्थामें क्या हम लोग जा सकते है ? करुणाका विवाह हो जाय, तभी जायंगे, क्या कहते हो सनत् ? हां बहन, वर कहांका है ?"

"इसी गांवका।"

"इसी गांवका ? इस गांवमें लड़की देने योग्य पात्र कौन है ? कोई है क्या ?"

"करुणा जैसी लड़कीके लिये है ही ।"

माताका कण्ठस्वर और मुखकी आकृति देख कर सनत्को भी कुछ कौतूहल हुआ, वह विस्मित भी हुआ ! वह सोच रहा था, कि इस गांवमें कन्यादान करने योग्य पात्र कौनसा है ? जब उसकी कुछ समझमें न आया, तो पूछा,—"कौन और किसका लड़का है ? किसके साथ तुम लोग करुणाका विवाह करना चाहते हो ?"

माताने उत्तर दिया,—"नौकौड़ी भट्टाचार्यका लड़का अविनाश। उसीके साथ ।"

सनत्ने प्रबल विस्मयसे चौंक कर कहा,—"माँ तुम क्या कह रही हो ? तुम लोग क्या 'विवाह-विवाह' करके पागल हो गये हो ? अविनाशके साथ ? वह तो आधा पागल और गांजाखोर है ? सुनूं तो सही, यह सम्बन्ध किसने निश्चय किया है ?"

"अरुणने—करुणाके भाईने ।"

"अरुण भैया, माँ कह रही हैं, इसलिये तुमसे पूछता हूं, क्या यह बात सच है ?"

अरुणने स्तब्ध भावसे अरुन्धतीके मुंहकी ओर देखा। वह अपनी ताईकी उस दिनकी बातोंके साथ आजकी बातोंका मिलान कर रहा था, पर उसकी समझमें कुछ नहीं आया । फिर भी सनत्के प्रश्नके उत्तरमें उसने सिर नीचा करके कहा,—"हां, सच है ।"

१३

सनत् माताके पास जाकर खड़ा हो गया । उसके मुखका भाव देख कर अरुन्धती समझ गयी, कि वह कुछ कहने आया है । वे अपने कामको और भी ध्यान लगा कर करने लगीं । सनत्ने आवाज दी "माँ !"

माँने मुंह ऊपर उठाये बिना ही कहा,—"क्या है ?"

"क्या यह बदला नहीं जा सकता ?"

"क्या नहीं बदला जा सकता ?"

"नौ-कौड़ी भट्टाचार्यके घर ही करुणाका विवाह करोगी ?"

"न किये बिना काम भी तो नहीं चलता ! वह सोलह वर्षकी होनेवाली है, इतने दिन तक मीराके लिये ही रुके हुए थे—पर जब उसका विवाह वे लोग नहीं करना चाहते हैं, तो फिर इसको क्यों रोक रखा जाय ?"

"और यह शायद उसका उपकार ही किया जा रहा है माँ ?"

"बचपनसे भगवान्ने उनके लिये जैसा विधान किया है, उसका जैसा अदृष्ट और जैसी अवस्था है—उसीके अनुसार यह व्यवस्था भी हो रही है ।"

"यदि तुम्हारा ऐसा ही विचार था, तो उसको अपने घर लाकर अपनी लड़कीकी तरह क्यों पाला-पोसा था ? क्यों उसे अपनी ही अवस्थामें नहीं रहने दिया गया ? क्यों—"

"अन्याय हो गया है सनत्, तब मैंने यह बात नहीं समझी थी, पर भाग्य-रेखाको कोई नहीं मिटा सकता ।"

"माँ, यह तो और भी अन्याय हो रहा है! अरुण भैया भी तो करुणाके भाई हैं, उनके साथ तो कोई लङ्गड़ी-लूली, अन्धी-कानी लड़की, यह कह कर कि तुम्हारे भाग्यके अनुसार तुम्हारे योग्य यही लड़की है, नहीं बांधी गयी? वह लड़का है—पुरुष है, इसीलिये शायद अदृष्ट उसके पास नहीं फटक सका। भाग्यकी सारी बहादुरी गरीब लड़कियोंके ऊपर ही चलती है?"

"हां सनत्, ऐसा ही होता है! यह भगवान्के बनानेका दोष है। जातिके दोषसे ही, बहुतसे आदमी अपने भाग्यको अपने जीवनमें खींच लाते हैं।"

"वे लाते हैं या उनके अभिभावक इसी तरह उनके कर्ममें प्रारब्ध को जोड़ देते हैं? क्या यह भी भगवान्का दोष है? यह तो मनुष्यों का ही अत्याचार है! यह अन्याय तुम करुणाके ऊपर नहीं कर सकोगे। इससे अधिक उसके लिये अमङ्गल की और क्या बात हो सकती है?"

"नौकौड़ी भट्टाचार्यके लड़केके साथ विवाह करनेसे भी ज्यादा अमङ्गल उसका होगा, यदि वह और कुछ दिन इस घरमें रह गयी तो!"

सनत्ने स्तम्भित होकर माताकी ओर देखा! यह उसकी वही माता हैं, जो करुणासे अपने पेटकी कन्यासे भी अधिक स्नेह करती हैं! सनत् अपने ऊपर माताका जितना स्नेह अनुभव करता था, वह समझता था, कि माता उससे भी अधिक करुणासे स्नेह करती हैं, आज उसी माँको सनत् समझ सकनेमें असमर्थ था। मानों यह उस

की और कोई माँ है । स्नेहकी बात छोड़ देने पर भी जिस माताके विषयमें, वह हमेशासे अत्यन्त उच्च धारणा बनाये हुए था, आज उसी माताके आचरणसे सनत् अवाक् हो गया । जिस घरने करुणा को अपनी गोदमें लेकर उन लोगोंके जीवनके सब ताप-शाप धो डाले हैं, उसी घरमें अधिक दिन रहनेसे अमंगल होगा ? यह कैसा रहस्य ! और यह बात कौन कह रहा है ? उसकी माँ ! जो आज तक घरकी केन्द्र स्वरूपा होकर करुणाको अपनी छातीसे लगाये हुए थी ! सनत् विस्मयके समुद्रमें गोते खाने लगा । कुछ देर बाद उसने अपनी बातों पर जोर देकर कहा,—"माँ, तुम मुझे बच्चोंकी तरह समझाती हो ? इस घरमें रहनेसे करुणाका अमंगल होगा ? इस बात पर मुझे विश्वास करनेके लिये कहती हो ? क्या दुनियां यह नहीं जानती, कि वह तुम्हारे लिये मीरासे भी अधिक हो रही है ? क्यों तुम उसका सर्वनाश करना चाहती हो ?—क्यों तुम……"

"उसका भाग्य करा रहा है, सनत्, मैं क्या करूँ ? मीरासे अधिक होते हुए भी तो वह मीरा नहीं—वह तो मेरे पेटकी लड़की नहीं है—तेरी सगी बहन नहीं है । यही तो उसके लिये अदृष्टका खेल है ।"

"मां, मैं ये बातें कभी नहीं सुनूंगा और उसका यह विवाह नहीं होने दूंगा ।"

अरुन्धतीने कुछ देर तक पुत्रकी ओर स्थिर दृष्टिसे देख, फिर कुछ अनिच्छाकी हंसी हंसते हुए कहा,—"तू तो कुछ ही दिनमें कलकत्ते चला जायगा, तब इस विवाहको कौन रोकेगा ?"

"क्यों, तुम !"

अरुन्धतीने पुत्रके ऊपरसे दृष्टि हटाकर कहा,—"समाजमें रहते हुए, मैं उसके साथ विरोध न कर सकूंगी, सनत् !"

"मां, तुम्हारे लिये समाज करुणासे भी बड़ा हो गया ? अच्छा तो लाओ, इसको हम लोग अपने साथ कलकत्ता ले जायें।"

"कलकत्ता ले जाकर उसकी क्या गति करोगे सनत् ?"

"क्यों ? इला और मीराके पास रह कर पढ़ेगी, फिर यदि विवाह करनेका ही तुम्हारा और अरुणका विचार होगा, तो कोई अच्छा पात्र देख कर विवाह कर दिया जायगा।"

"अच्छा पात्र ?—अभी तो उस दिन तुम्हारी चची कह रही थी, कि इला और मीराके लिये अच्छा लड़का ढूंढ रहे हैं, पर अपनी जातिमें कोई नहीं मिलता ! ये बड़े घरकी लड़कियां हैं, पढ़ी-लिखी हैं, आजकल ऐसी लड़कियोंका खूब आदर होता है, जब इन्हींके लिये अच्छा वर नहीं मिलता, तो करुणाके लिये कहांसे ले आओगे, जिसके·······"

"अपनी जातिमें न हो, केवल ब्राह्मण होना चाहिये मां !"

"नहीं सनत्, तुम करुणाको मेरे और उसके भाईके लिये 'गैर' न कर सकोगे। जिस समाजमें हम लोग हैं, उसको भी उसीमें रहना पड़ेगा।"

"खैर, एकबार इसी तरहकी चेष्टा करके देख लूंगा।"

"मैं कहती हूं सनत् कि करुणा जैसी लड़कीके लिये नौ-कौड़ी भट्टाचार्यके लड़के जैसा लड़का नहीं मिल सकता। तुम लोगोंकी शिक्षा-दीक्षा और उच्च भावोंकी बातें यहां आकर इसी कीचड़में

दब जाती हैं । इला और मीराके लिये तुम जो पात्र पाओगे, करुणाके लिये नहीं पा सकोगे । फिज़ूल, उसका रहा-सहा भी क्यों नष्ट करना चाहते हो सनत् ?"

"चची और मीराके साथ कलकत्ते भेजनेसे उसका कुछ भी नष्ट नहीं होगा । पर उसको यहां रख कर मैं घड़ी-घड़ी लड़की दिखानेके लिये पात्रोंके साथ न आ सकूंगा । यदि इसको मेरे साथ भेजो, तो मैं भी एक बार चेष्टा कर देखूं ।"

अरुन्धतीने कुछ देर सोच कर कहा,—"मेरी बात पीछे होगी, पर पहले तुम अपनी चचीको बुला कर ये सब बातें कहो, देखो वे क्या कहती हैं ।"

सनत् बड़े उत्साहसे अपनी चचीको बुला लाया । उसको पूरा विश्वास था, कि मेरी सम्मतिके साथ अवश्य ही उनकी सम्मति मिल जायगी, पर दो-चार बात होते ही, उसे अपना भ्रम मालूम हो गया ।

चचीने उसकी बात सुनते ही रुष्ट होकर कहा,—"ना बाबा, यह भी क्या कोई बात है ! दूसरेकी बला सिर पर लेकर मैं वहां न जा सकूंगी । एक तो·······" कह कर न जाने कहते-कहते रुक कर, जेठानीकी ओर देख कर बोली,—"बहन, तुम इस पागलकी बात पर ध्यान न देना ! हम लोगोंकी जातिमें अच्छे पात्र हैं ही कहां ? मीराके लिये, कभी-कभी बिचली भाभीकी बहनके लड़केकी बात उठती है । पर वे पूछते हैं, कि दहेजमें मीराको क्या दिया जायगा और अपने पिताकी सम्पत्तिका हिस्सा उसको मिलेगा या नहीं ! यदि इतना दहेज दिया जाय तो मीराका उनके लड़केके साथ विवाह किया

जा सकता है, यह बात भाभीकी बातोंसे मालूम होती है। और इलाकी बात छोड़ देनी चाहिये, बाप पढ़ा रहा है, जैसे-तैसे काम भी चल ही रहा है। मां तो है नहीं, सौतेली मां है, इस बेचारीकी बाबत कौन सोचता है। बड़ी होने पर उसकी इच्छा होगी, तो विवाह कर लेगी, नहीं तो उस समितिकी सेवामें ही जीवन बिताना पड़ेगा! ऐसी दशामें बहन, मैं तुम्हारी करुणाके लिये अच्छे वरका प्रबन्ध न कर सकूंगी, यह मैं कहे देती हूं।"

सनत्‌ने आहत होकर कहा,—"तुम्हें प्रबन्ध न करना पड़ेगा चची, मैं ही·······"

"बेटे, संसार तो तुम लोगोंकी इच्छाके अनुसार नहीं चल सकता! तुम्हें योग्य वर कहां मिलेगा? इला-मीराकी अपेक्षा करुणा न तो अधिक सुन्दर ही है और न कुछ पढ़ना-लिखना ही जानती है, बाप-मां, घर-बार, उसके पास है ही क्या? तुम उसको ऐसा क्या दे सकते हो, जो तुम लोग अच्छा वर पानेकी आशा करते हो! सनत्‌के लड़कपन पर बहन, तुम कभी ध्यान न देना।"

अरुन्धतीने सनत्‌की ओर देखा। सनत् द्विगुण आहत होकर वहांसे चला गया।

दो दिन बीत गये। इन दिनोंमें उसके पुत्र-पुत्रियोंने एक प्रकारसे उसका बायकाटसा कर रखा था। सनत् तो पासमें भी नहीं आता था, मीराका भी वैसा ही ढंग था, पर कभी-कभी वह अपनी माताके ऊपर उत्तेजित हो उठती थी। सरस्वतीसे मानो बड़ी विरक्त और अभिमानयुक्त है, अपने प्रत्येक व्यवहारसे वह ऐसे भाव प्रकट

कर रही थी। इला शङ्कित और विषण्ण थी—मानों अपने अस्तित्वसे स्वयं लज्जित है—इनके इस घरके झगड़ेमें, दूसरेकी लड़कीको कहीं छिपनेकी जगह नहीं मिलती थी। करुणा भी घरके किसी कोनेमें दुबकी बैठी रहती थी, दिन भर उसका पता ही न लगता था। अरुन्धती समझ गयी, कि सनत्‌से करुणाके विषयमें सब बातें सुन कर ये लोग मुझसे दूर-दूर हो रहे हैं। लड़कियां उसको शायद व्याघ्रोसे भी अधिक भयानक समझती हैं। यह देख कर अरुन्धतीको बड़ा कष्ट हुआ।

यदि किसीका भावान्तर नहीं था, तो अरुणका नहीं था। वह धीरे-धीरे गम्भीर होकर अरुन्धतीको आज्ञासे घरके काम-काज किये चला जाता था। इस विद्रोहहीन शान्त-सहिष्णु युवककी ओर देख कर अरुन्धती और भो अधिक अधोर हो रही थी। अरुणको देख कर यह प्रतीत होता था, कि मानो वह इस घरकी शान्तिके लिये अपना सर्वस्व देनेको तैयार है।

सिर्फ सरस्वती ही इस घटनासे नहीं दबी थी। वह अनर्गल भावसे अपने पिताके घरकी वर्तमान स्थितिका वर्णन जेठानीके सामने करती रहती थी। 'इलाकी मां, सिर्फ मनुष्य थी और भौजाइयां किसी कामकी नहीं हैं!' उसकी इच्छा पिताके घर रहनेकी क्षण भरके लिये भी नहीं होती—केवल मीराकी शिक्षाके लिये ही वहां पड़ी है। बिचली-भाभीकी बहू भी अच्छी शिक्षित है। मीरा एक दो परीक्षा दे ले तो अच्छा है। बिचली भौजाईके भानजेकी भी ऐसी ही इच्छा है। लड़का इस साल बी० ए० में पढ़ रहा है। उसको बहुतसे मेड्ल मिले

हुए हैं और, स्कालरशिप तो प्रतिवर्ष ही पाता है। पर अगर कुछ-दोष है, तो यही कि लड़का धनका बड़ा लोभी है, विलायत जाना चाहता है। इलाके पिता, उसकी पढ़ाईमें अब बहुत रुपया खर्च न कर सकेंगे, लड़कीको पढ़ाना मुश्किल हो रहा है! मीराके ऊपर ही उनका अधिक ध्यान है। यदि मीराके बाबा,—इत्यादि इत्यादि। अरुन्धती सरस्वतीकी बातों पर बिशेष ध्यान नहीं देती थी और कभी-कभी उसकी हांमें हां मिला दिया करती थी।

१४

सनत्का अभिमानाहत भाव अरुन्धतीको सहन करना कठिन हो रहा था। इस लिये, उस दिन उससे सब बातें स्पष्टरूपसे कहनेके लिये सुबह-सुबह उसके सोनेके कमरेमें पहुंची। वहां जाकर देखा, खाट खाली पड़ी थी। वह यह सोच कर उसी शय्या पर बैठ गयी, कि सनत् प्रातःकाल उठते ही घूमने चला गया होगा। पर उसी समय अरुन्धतीने देखा, कि उसके नामकी एक चिट्ठी रखी हुई है! उसकी छाती धड़कने लगी!—यह क्या? सनत् क्या मुझसे नाराज होकर कलकत्ते चला गया! घबरा कर चिट्ठी खोल कर पढ़ने लगी। चिट्ठीमें लिखा था,—

"मां!

तुमसे पूछे या कहे बिना यह काम मैंने पहला ही किया है और ईश्वर करें यही अन्तिम भी हो! पर पहले कलकी घटना सुनो!

कल सुबह मुझे करुणाकी वह कैवर्त-बुआ मिली थी। उसने

न जाने क्या-क्या पागलपनकी बातें कहीं, कुछ ठिकाना नहीं ! उसकी बातों पर तो मैंने ध्यान ही नहीं दिया था, परन्तु शामको जब घूमने गया, तो रमेशके मुंहसे भी वही बातें सुनीं ! बात क्या है, जानती हो ? क्यों भई, अब और कितने दिन तक घरमें लड़की रख कर 'कोर्ट-शिप' करते रहोगे ? विवाह कर डालो और हम लोगोंका मुंह मीठा करा दो भाई । और अब बहनको ही कितनी बड़ी करोगे ? बर तो घरमें है ही—नहीं तो और कहींसे ढूंढ-ढांढ कर बहनका विवाह कर डालो ! समाजका भी तो कुछ मूल्य है !—चाहे तुम 'इङ्गलिशमैन' हो समाजकी परवा नहीं करते, पर जब तक बूढ़ा बैठा है'—इसी तरहकी बहुतसी बातें कही थीं ! यद्यपि मैंने उसको कुछ उत्तर नहीं दिया, पर मुझे यह समझनेमें भी देर नहीं लगी, कि ये सिर्फ कैवर्त-बुआ ही की बातें नहीं हैं ! गांवके आदमी यही सोच रहे हैं, कि करुणाके···

"खैर माँ, इन बातोंको छोड़ दो, पर बाबाजीने आज क्या किया है ! शामको लौटकर देखा, तो उनके कमरेमेंसे दर्जनों पकी हुई खोपड़ियां एक-एक करके बाहर निकल रही हैं । इसके साथ ही उन्होंने मुझे बुलाकर क्या कहा, जानती हो ? कहा,—'करुणाके साथ तुम्हें विवाह करना पड़ेगा । तुम्हारी मां और मेरी ऐसी ही इच्छा और आदेश है । यह विवाह बहुत शीघ्र हो जाना चाहिये ।'

"मां, तुम्हारी भी यही इच्छा और आदेश है ? करुणा—जिस करुणाको हमेशासे मैं बहन समझता हूं । बचपनमें, तुम्हारे दोनों तरफ दोनों जन भाई-बहनकी तरह सोया करते थे—उसी करुणाके साथ विवाह ? छि मां, छि !—

"तुम्हारी ऐसी आज्ञा कभी नहीं है, नहीं तो तुम स्वयं मुझसे कहतीं। पर अब मालूम होता है, और सब लोगोंकी इच्छा और बाबाजीकी इच्छा देख कर तुम्हारा विचार भी ऐसा ही हो गया है। इसीलिये तुम उस दिन करुणाके अदृष्ट और वह मीराकी तरह मेरी बहन नहीं है, ये बातें कह रहीं थीं। पर मैं अपने मुंहसे यह बात नहीं कह सकता था, कि मेरी इच्छा या सम्मति इसमें रत्तीभर भी नहीं है। और यही समझ कर शायद तुम करुणाको नौ-कड़ीके घर भेज रही थीं!

"मुझे तो मां भागना ही पड़ता, क्योंकि बाबाजीके साथ इन बातों को सामने रख कर मुझसे झगड़ा न हो सकता। पर मैंने सोचा, ऐसी अवस्थामें करुणाको यहां कैसे छोड़ जाऊं? मेरे जाते ही, तो तुम लोग उसका नौरकौड़ी भट्टाचार्यके आधे पागल लड़केके साथ विवाह कर डालते! मैं उसको अपने साथ ले जा रहा हूं माँ! तुम इस बात-का भय न करना, कि करुणाको किसी अपात्र या समाजसे भिन्न मनुष्यके हाथमें देकर मैं उसको तुमसे पृथक् कर दूंगा। यदि वर मिलने में कुछ देर हुई तो अपने किसी मित्रकी माँ-बहनके पास उसको रख दूंगा। हमारी समितिका यह भी एक काम है। पर उसमें हमारी श्रेणीका अच्छा या बुरा कोई लड़का नहीं है। यदि होता, तो कुछ चिन्ता ही नहीं थी। ढूंढ़ना पड़ेगा। अब न जाने कितने दिन तक मैं तुम्हारे पास न आ सकूंगा, यह सोच कर हृदय फटा जा रहा है! लेकिन क्या करूं? अपने आप भाग कर करुणाका सर्वनाश तो नहीं होने दे सकता। मां, तुम मुझ पर क्रोध नहीं करना—मेरा उद्देश्य समझना। और मेरा प्रणाम स्वीकार करना। इति— सेवक सनत्।"

हाय-हाय ! क्रोध करनेकी बात तो पीछे होगी, पर तैंने यह क्या सर्वनाश कर डाला—अपना, मेरा और करुणा—तीनों ही का ! यदि यह बात गांव भरके लोग जान गये, तो क्या कहेंगे ? मैं लोगोंको कैसे मुंह दिखाऊंगी ?

अरुन्धती ज्ञानहीन मनुष्यकी तरह उस पत्रको लिये हुए कमरेकी छतकी ओर देख रही थी, कि इसी समय सरस्वतीने बड़े वेगसे उस कमरेमें आकर आवाज दी,—'सनत्-सनत् !' जब उत्तर न मिला तो जेठानीकी ओर देख कर बोली,—"सनत् क्या घूमने गया है ? उसको बुला दो बहन, हम लोग आज ही कलकत्ता जायेंगी। बड़ेजीकी इस बातको सुनकर क्या मैं एक क्षण भर भी यहां रह सकती हूं ? उनकी बात सुनी है ? वे समझते हैं, कि उनके अरुणके समान दुनियां में और कोई अच्छा लड़का नहीं है। मीराको चाहे जितने दिन तक कुमारी रखना पड़े, वह अच्छा, पर बिना लिखे-पढ़े, घरबारहीन दूसरे के घर पड़े रहनेवाले गंवार लड़केके साथमैं मीराका विवाह नहीं कर सकती ! तुम सनत्को बुला दो बहन, हम लोग आज ही चले जायेंगे।"

यह सुनकर अरुन्धतीने चुप-चाप सनत्का पत्र सरस्वतीके हाथमें दे दिया। क्षण भरमें उनके घरमें यह कैसी आग लग गयी— यह कैसा विप्लव उपस्थित हो गया, वह यही बात नहीं समझ सकी थी। केवल व्याकुल भावसे चारों ओर देखकर आवाज दी,—"करुणा-करुणा ! मीरा, करुणा कहां है ?" वह सोच रही थी, कि शायद सनत्का यह पत्र झूठा है—करुणा कभी सनत्के साथ नहीं ज

सकती । वह कहीं घरके किसी कोनेमें लज्जित होकर छिपी बैठी है। उनकी आवाजसे मीरा आकर दरवाजेके पास खड़ी हो गयी—भीतर नहीं गयी। उसको देख कर अरुन्धतीने आर्त कण्ठसे कहा,—"मीरा मीरा, करुणा कहां है ?" मीराने 'मालूम नहीं।' 'ढूंढ़ देखूं' 'बुला दूं' नहीं जाने कहां है। उसने झल्लाकर कहा,—"पता नहीं, तुम्हारी करुणा कहां है। दिन-रात करुणा-करुणा करती रहती हो—हम लोग मानों कुछ हैं ही नहीं।"

अरुन्धतीने सोचा, कि ये लोग क्या इसी बीचमें सब कुछ जान गये हैं—अथवा—

सरस्वतीने पत्र समाप्त करके तीव्र कण्ठसे कहा,—"लड़केके काम तो देखो। इसीको कहते हैं, अपने सोनेकी तो जगह है नहीं, शंकर-को बुलाओ। अपना क्या होगा, इसका तो ठिकाना नहीं और करुणा को लेकर निकल पड़ा। लेकिन मैं कहे देती हूं, करुणाका भार नहीं ले सकूंगी, चाहे वह नाराज ही क्यों न हो जाय।"

दरवाजेके पाससे मीराने उत्तर दिया,—"देख लेना, वह करुणाको लेकर तुम्हारे पास जायगा ही नहीं।"

"राक्षसी, तू भी क्या इसी दलमें शामिल है ? बतला, करुणाको वह क्या कह कर ले गया है ? करुणाने क्या हम लोगोंकी और अपने भाईकी बात क्या एक बार भी नहीं सोची ?"

अरुन्धतीके आर्तकण्ठसे आघात पाकर फटे हुई स्वरसे मानों त्रस्त भावसे मीराने कहा,—"अरुण भैयाने करुणाकी बात क्यों नहीं सोची ? वह तुम लोगोंकी बात पर क्यों राजी हो गया था ? भैयाने

तो ठीक ही किया है । इसके सिवा और उपाय ही क्या था ? करुणा क्या जाना चाहती थी ? भैयाने और मैंने जोरसे—"

सरस्वतीने अपनी कन्याको धमकाते हुए कहा,—"बड़ा भारी काम किया है ! इतनी बड़ी, पन्द्रह-सोलह वर्षकी लड़की एक युवकके साथ अकेली चली गयी है, लोग सुन कर क्या कहेंगे ? अब हम लोग मुंह कैसे दिखा सकेंगे ? तुम लोगोंने यह क्या कर डाला ?"

"वाह ! भैयाके साथ हम लोग क्या कहीं जाती नहीं है ? इसमें क्या दोष हो गया ?"

सरस्वती मीराको फिर धमकाने लगी । अरुन्धतीने उसको रोक कर कहा,—"अब इसको बकने-झकनेसे क्या होगा छोटीबहू ? इन्होंने जैसा ठीक समझा वैसा किया है । जब सनत्को ही इतना ख्याल नहीं हुआ, तो इनसे क्या कहा जाय ? छोटी बहू, मैं पिताजी और अरुणसे क्या कहूंगी ?"

मीराने कहा,—"तुम्हें कुछ नहीं कहना पड़ेगा—मैं उनसे अच्छी तरह कह दूंगी ताईजी !"

"हां, जाकर कह दे । तुम्हारे लिये, तुम्हारे बाबाने क्या व्यवस्था की है, जाकर देख ले ! बहन, मैं उनका यह हुक्म किसी तरह नहीं मान सकती । मैं अरुणके साथ अपनी लड़कीका विवाह नहीं करूंगी हम लोग आज ही कलकत्ता चले जायंगे । इला भी कई दिनसे घर जानेके लिये छट-पट कर रही है ।"

अरुन्धतीको मानों समुद्रमें बहते हुए किनारा मिल गया । उसने त्रस्त होकर कहा,—"हां, जाओ छोटीबहू, घरके और मोहल्लेके लोग-

को इस काण्डकी खबर होनेसे पहले ही चली जाओ । गांवके लोग समझेंगे, वर ढूंढ़नेके लिये करुणाको तुम्हारे साथ कलकत्ते भेजा गया है । तुम वहां जा सनत्‌के हाथसे करुणाको लेकर मेरे पास भेज देना। मैं उसका विवाह नहीं करूंगी, अरुण जैसे कह रहा था, इसी तरह हमेशा कुमारी रखूंगी !"

"पता नहीं सनत् मेरी बात सुनेगा या नहीं । शायद गुस्सेके मारे मुझसे मिले भी नहीं । पर मैं अब जाऊं किसके साथ ?"

मीरा अपनी माताकी बात सुन कर पहले तो अवाक् हो गयी थी, पर अब कुछ अश्वस्त होकर बोली,—"और किसके साथ जाती, हम लोग तीन आदमी हैं—हम लोग क्या नहीं जा सकते ? हारूको अभी गाड़ी जोड़नेको कहती हूं । और यदि गाड़ी न भी मिले तो क्या हम इस कोस-डेढ़ कोसके रास्तेको पैदल तै नहीं कर सकते ? खूब अच्छी तरह जा सकते हैं । तुम सब सामान ठीक कर लो मां, हमें इसी वक्त चलना चाहिये ।"

यही हुआ । इस दिनके भोजनका इन्तजार किये बिना ही, वे चलनेको तैयार हो गये । नौकर-नोकरनी सब आश्चर्यमें पड़ गये । अरुन्धतीको प्रतिवाद करनेकी न तो इच्छा ही हुई और न उसकी वैसी ताकत ही थी । वृद्ध मृत्युञ्जय भट्टाचार्यके पास जाकर जब उन लोगों ने सिर झुकाया, तो पहले तो वे अवाक् हो गये, पर बाहर आकर जब उन्होंने जानेके लिये तैयार खड़ी हुई बैलगाड़ी देखी, तो सब मामला समझ गये । उन्होंने एक बार पूछा—"सनत् कहां है ?" पर किसीने उत्तर नहीं दिया । नौकर-चाकर इधर-उधर देखने लगे । अरु-

न्धतीने अपने श्वसुरके सामने आकर कहा,—"वह कलकत्ता चला गया है।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्य और कुछ न कह अपने घरमें चले गये। अरुन्धतीको प्रणाम करके वे लोग एक-एक करके गाड़ी पर सवार होने लगे। जब इलाने अरुन्धतीके पैर छूनेको हाथ बढ़ाया, तो इसने इलाका हाथ पकड़ लिया और कम्पिता बालिकाको अपने पास खींच उसके कानके पास मुंह ले जा कर कहा,—"बेटी, सनत्से कहना, कि अब तुमसे करुणाके साथ विवाह करनेके लिये कोई नहीं कहेगा और अपात्रके साथ उसका विवाह करनेका डर भी नहीं दिखाया जायगा, इसलिये करुणाको वह मेरे पास भेज दे।"

इलाने अरुन्धतीके पैर छू कर कहा,—"माता, आप विश्वास करें, मैं इस मामलेमें नहीं थी।"

अरुन्धतीने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा,—"समझ गयी हूं, यह मीरा और सनत्का काम है!"

"मुझसे छिपा कर न जाने उन्होंने कब यह काम कर डाला।" कहती-कहती वह देखने लगी, कि अरुन्धती उसकी बातों पर विश्वास कर रही है या नहीं।

"तुम्हारी तरह स्थिर बुद्धि मेरी करुणाकी भी थी बेटी, वही करुणा—यही तो उसके अदृष्टका फेर है। सनत्की इच्छाको ही उस ने सबसे अच्छी और बड़ी समझा। हतभागिनी—हाय हतभागिनी!"

इला शुष्क मुख और स्थिर नेत्रोंसे उनकी ओर देखती रही।

अरुन्धतीने फिर कहा,—"मैं अरुणको कैसे मुंह दिखाऊंगी?

उसको अभी तुम्हारे साथ भेजती हूं—पर यह बात मैं उससे इस समय नहीं कह सकूंगी। वह समझेगा, पिताजीकी बातसे नाराज होकर सनत् पहले ही चला गया है और वह तुम्हें पहुंचाने जा रहा है। घर पहुंच कर तुम्हीं अरुणको यह खबर देना—मैं इस समय उससे नहीं कह सकती !"

फिर इलाके दोनों हाथ पकड़ कर अरुन्धतीने रुद्धकण्ठसे कहा,—"देखो बेटी, कहीं मैं करुणा और अरुणाको न खो बैठूं। सनत्के भाग्य में जो होना हो, हो। पर ऐसा प्रबन्ध करना, जिससे अरुण, करुणाको लेकर मेरे पास पहुंच जाय।"

इलाने एक बार फिर अरुन्धतीके चरण छू कर कहा,—"आशीर्वाद दो बुआजी कि मैं आपकी यह आज्ञा पालन कर सकूं।"

इस घरका बहुत पुराना नौकर हारू गाड़ीमें बैल जोड़ते हुए बोला,—"मेरे भैया कहां हैं ? वे शायद मेरी गाड़ीसे डर कर पहले ही स्टेशन पर चले गये हैं ? इन नये बैलोंकी चाल तो उन्होंने देखी ही नहीं क्षण भरमें पहुंचा दूंगा, समझी बहन !"

हारूके व्याख्यानको एक धमकीमें बन्द करके मीराने गाड़ी चलानेके लिये कहा। हारूने लाचार होकर गाड़ी हांक दी। यह यात्रा उन लोगोंको कैसी विष सदृशसी मालूम हो रही थी !

रेल-स्टेशनके पास पहुंच कर हारूने गाड़ी रोक दी और बोला,—"आप पैदल ही आ रहे हैं भैया, मुझे आवाज क्यों न दे ली, मैं आपको अपने पास बैठा लेता !"

यह सुन कर गाड़ीमें बैठी हुई तीनों सवारियोंने न जाने किस

आशासे मुंह बाहर निकाल कर देखा। पर सनत्‌के बदले धूलमें लिपटे हुए पैर और हाथमें छाता लिये हुए अरुणको देख कर मीराकी माँने विरक्त होकर मुंह फेर लिया—इला चुपचाप देखती रही। मीराकी माँके मुंहसे विरक्ति जरूर प्रकट हुई थी, पर उसके मनमें यह जान कर सन्तोष भी हुआ, कि हम लोगोंको अकेले नहीं जाना पड़ेगा। लड़कियोंकी बातसे उनको पूरा भरोसा नहीं हुआ था। वह अभी तक सोच रही थी, कि क्या करना चाहिये, जिससे अकेले न जाना पड़े।

अरुण उन लोगोंके पास नहीं आया—दूर-दूर रह कर ही अपना कर्तव्य पालन करने लगा। उसका यह भाव देख कर वे लोग समझ गये, कि अरुण चाहे करुणाकी बात न जानता हो, पर और सब बातें जानता है। एक बार वह किसी कामसे उनके नजदीक गया था, तो मीराने नाक-भौं चढ़ा कर कहा,—“टिकट तो लिये ही जा चुके हैं, अब आप हम लोगोंके साथ न जायं तो भी काम चल सकता है। हम तीनों रेलसे उतर गाड़ी करके घर चले जायंगे—आपके जानेकी जरूरत नहीं है।”

सरस्वतीने मीराको रोकनेके लिये उसका हाथ पकड़ कर खींचा। इला निर्वाक् तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगी। मीराने अप्रतिभ होकर मुंह नीचा कर लिया।

अरुणने सिर्फ यही कहा,—“ताईजीजी ऐसी ही इच्छा है।

अरुण जब उन लोगोंको गाड़ीमें बैठा कर स्वयं दूसरे कमरेकी ओर गया, तो इलाने खिड़कीसे मुंह निकाल कर देखा, कि अरुण गाड़ीमें बैठा है या नहीं।

१५

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने कहा,—"बेटी !"

अरुन्धती कुछ देरके लिये बाहर गयी थी। रोगी श्वसुरकी आवाज से व्यस्त होकर आंख-मुंह पोछती हुई उनके पास आकर बोली,—"क्या है, पिताजी ?"

"कुछ नहीं, थोड़ी देर मेरे पास बैठो, मुझसे अकेले नहीं रहा जाता।" चिर दिनके संयत-वाक् शोक-मौन वृद्धकी यह आर्तवाणी सुन कर अरुन्धतीके हृदयमें तीव्र आन्दोलन होने लगा। वह पङ्खा हाथमें लेकर अपने श्वसुरके पास बैठ तो जरूर गयी, पर उसके शरीरका कम्पन रोगी व्यक्तिसे भी छिपा नहीं रहा।

कुछ देर तक दोनों चुप रहे। मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने एक बार कर-वट बदल कर पुत्रवधूकी ओर देख कर कहा,—"हारूने तुम्हें किसकी चिट्ठी दी है ? अरुणाकी है क्या ?"

"नहीं, इलाकी है।"

"उसने अरुणाकी कोई बात लिखी है ?"

"लिखी है।"

"क्या लिखा है बेटी, जरा मुझे पढ़ कर सुनाओ।"

अरुन्धती पत्र लानेके बहानेसे एक बार फिर अपनी आंख-मुंह पोंछ आई। फिर लिफाफेमेंसे चिट्ठी निकाल कर श्वसुरकी आज्ञानुसार पढ़ने लगी,—

"माँ, अरुण बाबूको सन्तकी खबर तो मिल गयी है, किन्तु अभी

तक उसके साथ मिलना नहीं हो सका, इसलिये सनत्‌ने करुणाको लाकर कहां रखा है, इसका पता नहीं लगा। अपनी समितिके किसी कामसे मालूम होता है, वे उसी दिन चांदपुर चले गये हैं—देशका काम सब कामोंसे पहले करते हैं। चांदपुरकी कुछ न कुछ खबर आप लोगोंके पास भी पहुंची होगी। उनकी समिति वहांके पीड़ित कुलियोंका दुःख दूर करनेके लिये गयी है। इसालिये इन आठ-दस दिनोंमें हमें सनत भैयाकी खबर नहीं मिली। वे ही अपने दलके प्रधान हैं, इसीलिये—"

वृद्धने रोक कर कहा,—"इन सब बातोंको छोड़ कर अरुणकी क्या खबर है, यही पढ़ो। यदि अरुण और करुणाके विषयमें कुछ लिखा हो—"

कहते-कहते वृद्धका उग्र स्वर क्रमशः क्षीणतामें परिणत हो गया। अरुन्धती कुछ देर चुप रह कर मानो सम्भल कर फिर पढ़ने लगी,—

"अरुण बाबूको उनकी समितिके आदमियोंसे मालूम हुआ है, कि सनत्‌के आ जाने पर भी मैं उससे करुणाकी बात न पूछ सकूंगा अथवा उसको सनतसे छीन कर उसके बड़े भाई होनेका उनका अधिकार न नष्ट कर सकूंगा। करुणाके भाग्यमें चाहे जो हो। आपके मुंहसे यह आदेश सुन कर ही, कि करुणाको लेकर चले आना, वे कलकत्ताके रास्तोंमें घूम रहे हैं। न तो वे करुणाको सनतके हाथमेंसे लेना ही चाहते हैं और न घर लौटाना ही। आपने जो मुझसे चलते समय यह कहा था, कि करुणा और अरुणको मेरी गोदमें वापस कर देना, सो मुझसे नहीं होगा माँ! वे हमारे घर नहीं

रहते । यदि रहते, तो मैं बुआजीकी बातों पर कभी ध्यान न देती। पर वे जबसे हम लोगोंको यहां पहुंचा कर और मुझसे आपकी आज्ञा सुन कर गये हैं, तबसे मेरे विशेष आग्रह करने पर केवल एक दो बार आये हैं। मैं नहीं जानती वे कहां रहते हैं और क्या खाते हैं ! मेरे बहुत कुछ प्रार्थना करने पर आज उन्होंने अपना ठिकाना बतलाया है, उससे....”

अरुन्धती भग्न कण्ठसे, पत्र समाप्त होनेसे पहलेही चुप हो गयी। स्तब्ध वृद्ध, सहसा कुछ सजग होकर सरल भावसे बोले,—“रहने दो बेटी, एक काम करो, जरा मेरा चशमा और उसके पास जो कागज रखा है, वह दे दो ।”

अरुन्धतीने अर्द्ध समाप्त पत्रको रख कर अपने श्वसुरकी आज्ञा का पालन किया और उस कागजमें उनको ध्यान लगाये हुए देख कर, अपनी चिन्ता शान्त करनेके लिये बाहर चली गयी। कुछ देर बाद मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी आवाज आई,—“बेटी, जरा एक बार इस कागजको तो देखो ।”

चिर दिनसे सब कुछ भलाई-बुराई सहनेवाली बहू, उनकी आज्ञा से जब पासमें आई तो मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने कहा,—“अच्छा, आज रहने दो। सब लोगोंका एक साथ देखना ही ठीक है।”

अरुन्धतीने धीरे-धीरे मुंह ऊपर उठा कर, अपने क्लिष्ट स्वरको यथासाध्य सहज रूपमें लाकर कहा,—“पिताजी, कुछ आज्ञा है ?”

“आज रहने दो, तुम जहां जा रही थी, जाओ बेटी। मेरे ऊपर का कपड़ा—”

"क्यों क्या कुछ ठंढ मालूम हो रही है ?"

"हाँ, पर बहुत मामूली है—यह कुछ नहीं है। तुम जाओ बेटी, मैं जरा सो रहूं।"

उनके ऊपरका कपड़ा ठीक करके थोड़ी देर तक उनकी ओर देखती रही। फिर चिन्तित भावसे बाहर आकर हारूको वैद्यजीको बुलानेके लिये भेजा। सनत-अरुण-करुणा—इन सबकी चिन्ताओंसे भी अधिक उनको एक चिन्ता हो रही थी। मन कह रहा था, कि कुछ खराबी होनेवाली है। मानो उनके सामने और कोई भयङ्कर व्यापार आने या होनेवाला है।"

"बेटी !"

अरुन्धती दौड़ कर अपने श्वसुरके पास गयी और पूछा,—"क्या है पिताजी ?"

"जानती हो, 'देवत्र' किसे कहते हैं ?"

"आप ही बतलाइये।"

"जैसे पुष्पसे देवताकी पूजा होती है,—हृदयके रक्तसे खिला हुआ वह फूल—देवताके सिवा जिस पर और किसीका अधिकार नहीं होता—उसीका नाम देवत्र है, समझ गयी बेटी ?"

अरुन्धती यद्यपि कुछ नहीं समझी थी, पर उसने सिर हिला कर स्वीकार किया, कि समझ गयी है।

"और देवता कौन हैं, जानती हो ?"

"नहीं।"

"जो दुखी हैं—जो भगवन् और मनुष्यके दिये हुए, दोनोंके

दुःखोंको सिर नीचा करके स्वीकार कर लेते हैं, वे ही देवता हैं, उनकी सेवा ही देव-पूजा है, अब तो समझ गयी ?"

"हाँ।"

इसी समय हारूने आकर कहा,—"कविराज महाशय आ गये हैं।"

"कविराज ! क्यों बेटी, मैं तो बहुत अच्छा हूं। पर वे आ गये तो अच्छा ही हुआ। जाओ हरू, उन्हें भीतर ले आओ।"

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यका हाथ देख कर कविराज महाशयका मुंह भारी हो गया। भट्टाचार्यने यह देख कर,—"अरे भई, मुंह गम्भीर करना भी क्या आप लोगोंका व्यवसाय है ? सभी जगह क्या ऐसा ही करना होता है ? क्या तुम्हें मालूम नहीं है, मेरा नाम क्या है ? मृत्युञ्जय ! अब बैठो भाई, बात-चीत करें। बहू, भूख लग रही है, थोड़ा कुछ बना तो लाओ बेटी !"

"अरुन्धतीने बाहर आ कागज कलम लेकर पहले एक चिट्ठी लिख डाली।

"बेटी इला, अरुण कहां है, उसको शीघ्र यहां भेज दो। मालूम होता है, हम लोगोंके सामने बड़ी भारी विपत्ति आनेवाली है। पिताजी का शरीर शायद अब बहुत दिन तक न रहेगा ! उन अभागे और अभागिनियोंको अभी यह खबर नहीं देना। यदि वे इस समय यहां आ गये, तो पिताजीकी शान्ति नष्ट हो जायगी। केवल अरुणको आना चाहिये—और कोई नहीं, उसीको जितनी जल्दी हो सके, भेज दो। कहना, उसको किसीके लिये प्रतीक्षा करनेकी जरूरत नहीं है।

मैं उसको बुला रही हूं, जितनी जल्दी हो सके, वह मेरे पास आ जाय।"

पत्र डाकमें भेज और श्वसुरके लिये पथ्य तैयार करके जैसे ही उनके पास पहुंची, तो देखा, कि गांवके बहुतसे प्रतिष्ठित आदमी वहां बैठे हैं। सब मृत्युञ्जयके कहनेसे उस कागज पर हस्ताक्षर कर रहे थे—सभीके मुंह पर एक प्रकारको चञ्चलता थी! प्रत्येक आदमीके मुंह से, सन्तोष, असन्तोष और विमूढ़ता, इनमेंसे कोई न कोई भाव स्पष्ट प्रकट हो रहा था। परन्तु फिर भी किसीकी शक्ति प्रतिवाद करनेकी न थी। मृत्युञ्जय भट्टाचार्यके कामोंमें वाद-प्रतिवाद करनेका सामर्थ्य किसीमें न था।

सबके चले जानेपर मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने अरुन्धतीको बुला कर भोजन किया। फिर शान्त मुखसे बहूके उद्विग्न मुंहको ओर देख कर कहा,—"बेटी यह कागज सबसे पहले तुम्हें ही दिखाना उचित था, परन्तु बेटी, मनुष्य दुर्बल है, कहीं मैं अपनी शक्ति खो बैठूं इस डरसे सब काम ठीक किये बिना तुम्हें दिखानेकी हिम्मत नहीं हुई। अब तुम मेरी अन्तिम इच्छा देखो।"

अरुन्धतीके हाथमें कागजको कांपते हुए देख कर, मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने सहज भावसे कहा,—"अपने मनको मजबूत करो बेटी! हम लोगोंका उत्तराधिकारी दुखी मनुष्यके सिवा और कोई नहीं हो सकता। मुझे विश्वास है तुम्हें इसमें कोई अन्याय न दीखेगा।"

अरुन्धती पढ़ने लगी,—

"आजसे मेरी स्थावर-अस्थावर जितनी सम्पत्ति है, सब 'देवत्र'

समझी जायगी । इससे केवल देवताका ही काम किया जायगा । देवताकी सेविका मेरी पुत्रवधू अरुन्धतीदेवी इसकी एक मात्र अधिकारिणी हैं । उनके बाद उनका पालित पुत्र श्रीमान् अरुणकुमार चक्रवर्ती और पालिता कन्या करुणादेवी इस 'देवत्र' सम्पत्तिके अधिकारी रूपसे इस गांवमें रहते हुए, गांवकी कल्याणकर देवसेवामें इसको खर्च करेंगे । उनके मरनेके बाद भी यदि इस सम्पत्तिमेंसे कुछ बची हुई हो, तो उनके उत्तराधिकारियोंको यथानियम प्राप्त होगी । अपने हाथसे, अपनी इच्छासे, मैंने अपनी इस अन्तिम इच्छाको लिखा है । इति—(हस्ताक्षर) श्रीमृत्युञ्जय भट्टाचार्य ।"

इसके बाद गवाहोंके हस्ताक्षर थे । अरुन्धतीको कागजसे दृष्टि हटाकर चुप-चाप खड़ी हुई देखकर मृत्युञ्जयने कहा,—"तुम्हें इसमें मध्यस्थ रखा है, इसलिये असन्तुष्ट न होना । तुम्हारे बादकी ही मुझे चिन्ता थी, सो मैंने उसको दूर कर दिया है ।"

अरुन्धतीने कुछ देर बाद कहा,—"लेकिन आपने मुझे संसारके सामने कुण्ठित और लज्जित कर दिया है ।"

आधिव्याधि पीडित वृद्धने गरजकर कहा,—"तुम्हें लज्जित करनेकी किसमें ताकत है बेटी ? मेरी यह सम्पत्ति विलास और लोगोंके ख्यालोंके पूरा करनेके काममें नहीं लग सकती—यह 'देवत्र' है, हमेशा देवताके ही काममें लगेगी ।"

"मीराकी मांकी भूलसे मीराको क्यों त्याग दिया ? वह तो अभी छोटी बच्ची है, उसके लिये—"

"सदा-सर्वदासे अपने मां-बापका प्रायश्चित्त उनकी सन्तानोंको

ही करना पड़ता है। पर इसके सिवा जिसकी अवस्था अपने कर्म-फल भोगनेकी हो चुकी है, पिताके पुण्यसे वह भी तो इसको भोग न कर सका। उसको भी मैंने—"

"वह चाहे जो कुछ करे पिताजी, उसके लिये मुझे कुछ नहीं कहना है, पर मीराको इस तरह आप त्याज्य न कीजिये।"

"इसीलिये मैंने पहले सब काम पूरा करके यह 'विल' तुम्हें दिखाया है। बेटी, मुझे अपने ये अन्तिम दो-चार दिन शान्तिसे बिता लेने दो, अबतक हमेशासे जैसे तुमने सब कुछ सह कर मुझे शान्तिसे रखनेका प्रयत्न किया है, ठीक उसी तरह रहने दो बेटी! मेरा यही अन्तिम आदेश, या अनुरोध-उपरोध—चाहे जो कुछ समझो—है। इन दिनोंमें मुझे जरा भी दुःख न देना! मेरी देव-सेवा पहले तुम करोगी, फिर अरुण और यदि वह अभागिनी लड़की मिल जाय—वे ही मेरी आत्माका तर्पण करेंगे—उनके हाथके जलसे ही मेरी तृप्ति होगी! जैसे वे अभागे हैं, मैं और तुम भी वैसे ही हैं। ऊफ़! नारायण। मैं सोऊँगा बेटी, मुझे सुला दो। इस बूढ़ेके सिरको क्या अपनी गोदमें न ले सकोगी? तुम तो मेरी सच-मुच ही बेटी हो!"

अरुन्धती चुप-चाप शान्त भावसे उस व्यथित, आर्त और देवता तथा मनुष्योंके द्वारा निगृहीत वृद्धकी ओर करुण दृष्टिसे देख-कर, अपनी सेवासे प्रसन्न करनेका प्रयत्न करने लगी। उसके हृदयके भीतर मानों देवता अपनी करुण दृष्टिसे देख रहे थे। संसारके कानों-में उसकी कोई बात, कोई व्यथा, न तो कभी एक रत्तीभर पहले पहुंची थी और न आज ही पहुंची।

१६

दो दिन बाद ही शीर्ण-मलिन कान्ति, सूखे हुए मुखको लेकर अरुण अपनी ताईजीके पैरोंके पास आकर बैठ गया। अरुन्धतीने केवल एक बार उसके मुंहकी ओर देख नजर नीची कर ली। कुछ देर अरुणने सावधान और शान्त होकर कहा,—"ताईजी यह कैसी खबर है ?"

"खबर चाहे जो हो—सबसे पहले तुम पिताजीके पास चलो। यही इस समय तुम्हारा कर्तव्य है। शायद तुम्हें देखनेके लिये ही, अबतक—"

"लेकिन ताईजी, मैं इसको सहन नहीं कर सकता। गांवमें प्रवेश करते न करते हो, यह मैं क्या सुन रहा हूं ? सब लोग यह क्या कह रहे हैं ? सनत्‌को—मीराको—यह कैसी भयानक बात है ? बाबाजीने सनत्‌को—क्या यह बात सच है ?"

अरुन्धतीने शान्त स्वरसे कहा,—"ये सब बातें फिर होंगी अरुण, पहले तुम पहला काम करो।"

"आप क्या कह रही हैं ? सबसे पहले तो यही देखना होगा। आप क्या इस अन्यायके हो जाने पर भी चुप बैठी हैं ? बाबाजीने सनत्‌को त्याज्य कर दिया है—इतने बड़े अविचारकी बात आप कैसे सहन किये बैठी हैं ?"

"शायद यही ठीक विचार हुआ है अरुण ! जिनके हृदयके रक्तसे उनका पालन-पोषण हुआ है, उस रक्तकी अवहेलना करनेसे उनको जो पाप लगा है, उस पापका शायद यही प्रायश्चित्त है।"

"मैं यह नहीं मान सकता, उन्होंने सनत्‌की यह भूल ही देखी है ! और यह नहीं समझा, कि उनका सनत्‌ कितना बड़ा महान्‌ है ? उन्होंने इस ओर दृष्टि नहीं डाली ! दो-एक दिनमें ही सनत्‌ कलकत्तेमें आ रहा है । मैं बाबाजीकी बीमारीकी खबर उनकी समितिके आदमियोंको दे आया हूं, उसके आते ही वे यहां भेज देंगे—मीराकी मांको भी मैं अभी चिट्ठी लिखे देता हूं, वे भी आ जायं, आकर—"

अरुन्धती रोगीका पथ्य तैयार कर रही थी, उसने उंगुलीसे ससुरका घर दिखाकर कहा,—"सबसे पहले अपना काम तो करो । पिताजीके पास एक गैर आदमीको बैठा कर आई हूं, अपने घरके इतने आदमियोंके रहते हुए अन्त समयमें उनके पास बैठनेवाला कोई नहीं है ! पहले उनके पास जाओ, घर-बारकी बातें फिर होंगी । "

अरुणको देख कर न जाने किस प्रत्यांशासे, मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने उसके मुंहकी ओर देखा और कुछ अस्फुट स्वरसे कहा भी । अरुण उनके पैरोंके पास बैठ गया था । वह केवल पन्द्रह दिन बाहर रहा था । इतने कम समयमें वह तेज पुञ्ज शरीर, जिसने वृद्धावस्थाके अधिकारको पराजित करके अब तक अपनी बलिष्ट कान्ति अक्षुण्ण बना रखी थी, उसका यह शोचनीय परिवर्तन देखकर अरुणके नेत्रोंमें जल भर आया । उस आधि-व्याधि मलिन, पके हुए केश, दाढ़ी, सुदीर्घ शुभ्र कान्तिवाले महामहिम वृद्धकी ओर देख कर अरुणको महाभारतके भीष्मदेव याद आए । मानों अपने हृदयके रक्तसे पोषण किये जानेवाले स्नेह पात्रोंके विद्रोह-वाणोंसे जर्ज्जरित होकर शर-शय्या पर सोए हुए हैं ! उसके मुंहसे सहसा कोई बात नहीं निकली,

उसने चुप-चाप उनके चरणों पर सिर रख दिया। कुछ देर बाद मृत्युञ्जयने स्पष्ट उच्चारण किया,—"करुणा-आ!"

अरुणने धीरे-धीरे उत्तर दिया,—"उसके लिये आप चिन्ता न करें, वह अच्छी तरह है—सनत्‌ने उसको—"

हाथके इशारेसे उसको मना कर मृत्युञ्जयने कहा,—"गीता लाओ।"

अरुण गीताकी पुस्तक ले आया। भट्टाचार्य महाशयने फिर कहा,—"एकादश।"

अरुण चुप-चाप उनकी आज्ञा पालन कर एकादश अध्यायमेंसे अर्ज्जुनके 'विश्वरूप दर्शन' का पाठ करने लगा। ध्यानातीत और ज्ञानातीत भगवान्‌के स्वरूपको प्रत्यक्ष कर, अर्जुनकी उस सुप्रसिद्ध स्तुतिके बाद जब अर्जुन उनको सौम्य-शान्त रूप धारण करनेके लिये अनुरोध कर रहा था, अरुण जिस समय पढ़ते हुए उस स्थान पर आया, तो मृत्युञ्जयने सिर हिलाकर कहा,—"नहीं, भय काहेका है? पढ़ो—"

"वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशंति, दंष्ट्रा करालानि भयानकानि।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु संदृश्यते चूर्णितैरुत्तमांगैः॥
यथा नदीनां बहवोऽम्बु वेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
तथा तवामी नरलोकवीरा, विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥
यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः॥
लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकासमग्रान् वदनैर्ज्वलद्भिः।
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं भासस्तवोग्रा प्रतपन्ति विष्णोः॥"

अरुण निर्वाक् होकर मुमूर्षु वृद्धके यह अन्तिम उच्छ्वास सुन

रहा था, अरुन्धती भी उनके सिरहाने उसी तरह बैठी थी । अबतक जो एक शब्द भी कष्टपूर्वक न उच्चारण कर सकते थे, वे इस समय सहसा अपनी मृत्युकी जड़ता और वेदनाच्छन्न अवस्थाको अतिक्रम करके जीवनकी स्वस्थ और शान्त अवस्थामें जा पहुंचे थे । लेकिन इस तरह वे किसका अनुभव कर रहे थे ? भीषण कालका ? सौम्य शान्त भगवान्‌का नहीं ? क्या वे मधुर और सुन्दर होकर ऐसे दिन उनके पास नहीं पहुंचेंगे ? क्या इसी कालमूर्तिसे प्रकट हुए हैं ! अरुण के नेत्रोंमें जल भर आया । पिछले पन्द्रह दिनके आघात-प्रतिघातसे, और फिर बाबाजीकी बीमारीके समाचारसे, उसके विध्वस्त जीवन पर—उसके हृदयसे शोकका जो काला बादल उठा था, गांवमें प्रवेश करते ही, गांवके लोगोंके मुंहसे, विचित्र ढंगसे जो विचित्र समाचार मिले थे, उनसे वह बादल न जाने कहां नष्ट हो गया था और उसके स्थानमें, विस्मय, लज्जा, दुःख, भय इत्यादिकी आंधी उठ खड़ी हुई थी । इस समय फिर उसको मालूम होने लगा, कि हमारे अभिशप्त और ज्वालामय जीवनका मेरुदण्ड, इस बार उनके जीवनको मरुभूमिमें छोड़ कर अपनी शान्ति और घनी छाया हटा रहा है ।

और भी दो दिन बीत गये । इस बीचमें अरुणने अधीर होकर कई बार भट्टाचार्य महाशयके सामने दिलकी बात उठानी चाही, पर उनके इशारेसे चुप हो जाना पड़ा । उसने कई बार कहना चाहा, कि "यदि आप सनत् और मीराको क्षमा नहीं कर सकते, तो हे मेरे प्रत्यक्ष देवता, हम लोगों पर भी दया कीजिये । मेरा इस लज्जासे उद्धार कीजिये । जन्म भरमें हम लोगोंको पाल—पोष कर अन्तमें हमारे

सिर पर इस कलङ्ककी डालीको न रख जाइये ! हमारी आप इससे रक्षा कीजिये ।" पर हमेशा उसको मुमूर्षुके वेदना जड़ित आर्त कण्ठ स्वरके निमेषसे चुप हो जाना पड़ा। और अरुन्धतीके रोकनेसे वह सनत् और मीराकी मांके पास भी पत्र न लिख सका था। अरुन्धतीकी यह दृढ़ धारणा थी, कि मेरे ससुर जो कुछ कर चुके हैं, वह बदल नहीं सकता, इसलिये इस विषयमें कुछ कहना-सुनना उनको मृत्युके समय कष्ट पहुंचानेके सिवा अन्य कुछ नहीं हो सकता। परन्तु अरुणने उनकी यह बात नहीं मानी। उसने मीराकी मांको पत्र लिख दिया और उनके आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। वह समझता था, कि उन लोगोंके आने ही से सब काम ठीक हो जायगा।

चार दिनके बाद, एक दिन बड़ा भयानक आया। वह कटना ही नहीं चाहता था। गांवके बड़े बूढ़े, मृत्युञ्जय भट्टाचार्यको गंगातट पर ले जानेकी व्यवस्था कर रहे थे। उस दिन भी सनत् नहीं आया। केवल मीरा और उसकी मां ही आई। मीरासे समाचार मिला, कि पुलिसके साथ तकरार करनेके अपराधमें, कुछ निर्दोष मनुष्योंको सतानेमें वाधा पहुंचानेके कारण, सनत् और उसके कई साथी गिरफ्तार कर लिये गये हैं। शान्ति-रक्षामें बाधा पहुंचाना तथा और भी कई बड़े-बड़े अपराध उनके ऊपर लगाए गये हैं। सनत्के छूटनेकी इस समय कोई तरकीब नहीं हो सकती। यह सुनकर अरुन्धतीने एक बार अरुणकी ओर देखा। इस रक्तहीन, विवर्ण पांडु मुखकी नीरव भाषा अरुण अच्छी तरह समझ गया। मानों वह कह रही थी, कि,—"देखा अरुण, सनत्के ऊपर भगवान् भी नाराज है।"

लेकिन अरुण, अरुन्धतीकी तरह शान्त नहीं रह सका। मीरा जिस समय अपने भाईके आर्त-पीड़ितोंके लिये अपना जीवन उत्सर्ग करने, दुखी, निर्यातित दरिद्रोंके दुःख दूर करनेके लिये दो सप्ताहसे भी अधिक कष्ट सहने और उनको अपना आत्मीय समझकर देश-वासियोंके सताए जानेको देखकर स्वेच्छासे कैदमें जानेका वर्णन कर रही थी, और अपने वेदनारुद्ध कंठसे अरुन्धतीको सुना रही थी और जब मीराके मामा बिल इस समय भी बदला जा सकता है या नहीं इस विषयमें गांवके आदमियोंको बुलानेके लिये भेज रहे थे, मीराकी मां हताश भावसे ससुरकी अवस्था देख कर निराश हो चुकी थी, तब भी अरुणने उस मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए वृद्धके कानके पास अपना मुंह ले जाकर कहा,—"देखा, आपने किसका त्याग किया है ? अपने देवता सनत्‌को छोड़ कर, उसकी एक छोटीसी भूलपर ध्यान देकर यह देवत्र सम्पत्ति किसको दिये जा रहे हैं ?"

"मृत्युञ्जयने धीरे-धीरे उत्तर दिया,—"देवताको !"

"आपके रक्तसे पुष्ट-आपका वंशधर सनत ही आपका देवता है, बाबाजी आपने उसे क्यों नहीं पहचाना ? और अपनी मीरा—"

गांवके दो-चार आदमियोंने उसको रोक कर कहा,—"बस इस समय नहीं अरुण, देखते नहीं हो, इनका क्या हाल हो रहा है। अब तो इनके अन्त समयकी व्यवस्था करो। उठो, इस समय तुम्हीं इनके पुत्र हो ।"

अरुणने दोनों हाथोंसे अपना मुंह ढांक लिया। अरुन्धती उनके मुंहमें गंगाजल देने लगी। यह देखकर मीरा रोती हुई अपने बचपनके

बाबाके पास जाकर गिर पड़ी और रोती हुई बोली,—"बाबा—मेरे बाबा! हम लोगोंका तो अब कोई भी न रहा! तुम मेरे ऊपर नाराज होकर न जाना—"

संपूर्ण ज्ञानयुक्त मृत्युञ्जय भट्टाचार्यने, बहुत दिन बाद स्तब्ध नेत्रोंसे मीराके मुंहकी ओर देखा। न जाने उनके मनमें क्या-क्या बातें आ रही थीं। उन्होंने धीरे-धीरे कहा,—"बेटी, अब क्यों?"

"तुम्हारी ओर जो खुशी हो, वही करो बाबा, पर सिर्फ यह कह दो कि हम तेरे ऊपर नाराज नहीं हैं। यदि मैंने तुम्हें दुःख दिया है, तो मेरा वह अपराध क्षमा कर जाइये बाबा! बोलो क्षमा किया है?"

"क्षमा? ओह! बड़ा—हां, आशीर्वाद करता हूं। देवताका देवत्र—"

"खैर, यही सही। तुम मुझे और भैयाको आशीर्वाद ही दो और हम लोगोंका अपराध क्षमा कर दो। बोलो भैयाको भी क्षमा किया?—"

भट्टाचार्य महाशय मीराको उत्तर न दे सके। लोगोंने उनको उठा कर गङ्गाजी ले जानेके लिये बाहर किया। भट्टाचार्य महाशयने अन्त समयमें अपने घर और पुत्रवधूकी ओर देख कर सिर्फ यही कहा,—"बेटी, देवताके देवत्रकी बात याद रखना। मीरा, तेरी मां और तुम—सुनन्दके हो, तुम लोग—सुखी रहो। अरुण और बहू कहो—"ओं गङ्गा नारायण ब्रह्म ओं राम।"

गङ्गा पर जानेवाले आदमियोंके मुंहसे तारक ब्रह्म नामकी अभय-वाणी सुनते हुए, मृत्युञ्जय मानो मृत्युको जीत कर ही वहां तक पहुंच

गये । दोनों पुत्रवधु, अरुण, पौत्री मीरा सभी उनके साथ थे । मीरा रो-रो कर जमीन आसमान एक कर रही थी—अपने बचपनके बाबा उसको आज याद आ रहे थे । सनत्‌के लिये वह अपने बाबाके मुंहसे क्षमा या आशीर्वादसूचक वाक्य नहीं सुन सकी—यह शोक भी उस समय अपने बाबाकी यह अवस्था देखकर भूल गयी ।

श्मशानमें खड़े होकर अरुणको एक दिन पहलेकी बात याद आई । इस लिये जब पुरोहित मन्त्र पढ़ रहे थे—

"धर्माधर्म समायुक्तं लोभ-मोह समावृतं
देहे यं सर्वं गात्राणि, दीव्यान् लोकान् स गच्छतु ।"

तब अरुणने सिर नीचा कर लिया । यह पवित्र देवदेह, जो अनाथ और दीन-दुखियोंका आश्रय था—जो शोकाग्निसे जर्जर हो चुका था—उस शरीरको भस्म करनेकी इस श्लोकमें ताकत कहां है ! लोभ-मोहने तो इस शरीरको जीवनमें भी स्पर्श नहीं किया था ! यह तो दयाका आगार और स्नेहका तीर्थ था ! इसके साथ ही अरुणका पुरोहितके इस पद पर ध्यान गया,—"कृत्वातु दुष्करं कर्म्म जानता वान्यजानता ।" ठीक ! बिना जाने हुए इस देवताने भी एक दुष्कर्म किया था ! पुराने और नयेके इस संग्राम—दो महाप्राणोंके संस्कार विरोध—इसके फलसे आज उनका वंशधर संसारकी दृष्टिमें अपने अधिकारको खो चुका है ! अरुण सोच रहा था, कि इस पवित्र अग्नि से दग्ध होकर, उनका आत्मा मनके इस मोह और इस संस्कारको छोड़ कर, सत्यको अवश्य ही पहचान गया होगा । संसारकी सामान्य त्रुटियों पर इस समय उनकी दृष्टि नहीं है, इस समय तो

सिर्फ आत्माका परिचय ही उनके लिये प्रामाण्य है । इस समय वे कभी सनत्को अश्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं देख रहे होंगे । अरुणने अपने आप ही एक शान्तिका निःश्वास छोड़ दिया ।

१७

मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी मृत्युसे अगले दिन ही, अरुणने अरुन्धतीसे कहा,—"मैं आज ही जाना चाहता हूं, ताईजी !"

"सनत्को लानेके लिये ?"

"हां ।"

"लेकिन यह क्या सहज बात है ? मीराके मामाने क्या कहा है, कुछ सुना है ?"

"वह कठिन उपाय ही करना पड़ेगा । मैं उनके साथ ही जाऊंगा । जमानतके लिये मुझे कुछ रुपया देना होगा ।"

"वह तो थोड़े रुपयोंका काम नहीं है और कल पिताजी जिसको अपनी सम्पत्तिसे त्याज्य कर गये हैं, उसके लिये उनकी सम्पत्तिमेंसे, इतने रुपये देनेका मुझे क्या अधिकार है अरुण ?"

अरुणने स्तब्ध भावसे ताईजीकी ओर देख कर कुछ देर बाद कहा,—

"अच्छा, यह देव-ऋण मैं अपने शरीरसे उतार दूंगा, मुझे रुपये दीजिये !"

अरुन्धतीने चुपचाप, अरुणने जितने रुपये मांगे ला दिये । सर-

स्वतीने शुष्क मुखसे कहा,—"हम लोग भी भैयाके साथ चली जायं ?"

अरुन्धतीने नीचा मुंह करके कहा,—"तुम्हारी इच्छा !"

"इच्छा अनिच्छाकी बात नहीं है बहन, हम लोगोंको यहां रहने की अब न तो जरूरत ही है और न अधिकार ही।"

"अच्छा, जाओ।"

अरुण चुपचाप देवरानी-जेठानियोंकी बात सुन रहा था। वह यह समझ कर, कि सरस्वती हम लोगोंसे नाराज है, न तो कभी उनके पास खड़ा होता था और न बात ही करता था। आजकल तो विरक्ति का एक विशेष कारण भी हो गया था। लेकिन आज अरुणने स्वतः प्रवृत्त होकर सरस्वतीसे कहा,—"बाबाजीका श्राद्ध हुए बिना आप कैसे चली जायंगी चाचीजी ?"

सरस्वतीने अभिमानके मारे कुछ नहीं कहा। मीराने कहा,— "नहीं माँ, अभी नहीं जायंगे ! बाबाजीको हम लोगोंने बहुत कष्ट पहुंचाया है, माँ, उनके श्राद्ध होने तक यहां रहनेकी हम लोगोंको जरूरत है। और जब तक मेरी ताईजी जीवित हैं, तब तक हम लोगों को हर तरहका अधिकार है।"

अज्ञात भावसे अरुणकी कृतज्ञ दृष्टि मीराके ऊपर जा पड़ी। अभि-मानिनी बालिकाने उसी वक्त मुंह फेर लिया। सरस्वतीने अपने मनमें सोचा, जो अपने लड़केके लिये रुपये देनेमें इस तरह कर रही है, उस से अधिकारकी क्या आशा है ? सरस्वतीने अपनी जेठानीके मुंहकी ओर देखा तो, उसने देखा, कि मीराकी बात सुन कर उसके अस्त्रा-

भाविक सफेद मुंह पर कुछ लालिमा दौड़ गयी है। अरुन्धती उसी वक्त अपने शरीरके गीले कपड़े सुखानेके लिये धूपमें जाकर बैठ गयी। अरुणके जाते समय अरुन्धतीने कहा,—"इस नियमके समय एक कपड़ेमें स्नान-भोजन करते हुए तुम्हें विशेष कष्ट उठाना पड़ेगा अरुण, जब तुम परदेशमें जा रहे हो, तो नियमों पर विशेष ध्यान नहीं रखना।"

"मुझे कुछ कष्ट नहीं होगा ताईजी, आशीर्वाद दीजिये, मैं सनत् को अपने साथ ला सकूं।"

"मुझे इसमें भी सन्देह है अरुण, पर जब तुम मेरी बात नहीं सुनते और जाना ही चाहते हो, तो जाओ। वह मिले या न मिले, पर करुणाको अवश्य लेते आना।"

"आशीर्वाद दो ताईजी, कि मैं दोनों ही को लेकर आ सकूं।"

मीराके मामा भी सनत्को कुछ दिनके लिये जमानत पर छुड़ा लानेको अरुणके साथ गये। उनके उपदेशसे सरस्वतीने भी जेठानीके पास रहना ठीक समझा। गांवके लोगोंकी सहायतासे अरुन्धती श्वसुर के श्राद्धका आयोजन करने लगी। कोई-कोई उनको परामर्श देने लगे कि मृत्युजंय भट्टाचार्यका समाजमें जैसा स्थान था, उसीके अनुसार उनका श्राद्ध भी होना चाहिये। कोई सहृदय सज्जन कह रहे थे,— "पता नहीं, असली श्राद्धाधिकारी आकर श्राद्ध कर सकेगा या नहीं। और जो लोग न्यायसे उनके अधिकारी थे, वे ही वंचित हो गये! इस श्राद्धमें क्या सौष्ठव आ सकता है? इस समय तो जैसे-तैसे अपना कर्तव्य पूरा कर डालना चाहिये।"

परन्तु अरुन्धतीने किसीकी बात नहीं सुनी। उसने जैसा उचित समझा वैसा ही काम करने लगी।"

अशौचान्तके एक दिन बाद अरुण अकेला लौट आया, तो तीनों जने चुपचाप उसके हताशाछन्न मुंहकी ओर देखने लगे। पहले मीराने ही पूछा,—"भैयाको नहीं ला सके ?"

"नहीं।"

"जमानत पर दो चार दिनके लिये भी नहीं छोड़ा ?"

"जमानत तो उसने देने ही नहीं दी। बोले, मैं अत्याचारियोंसे दयाकी भिक्षा नहीं ले सकता !"

कुछ देर बाद सूखे हुए मुंहसे अरुन्धतीने कहा,—"उसने अपने बाबाका श्राद्ध करना भी उचित नहीं समझा ?"

"उसने कहा है कि मेरी अपेक्षा माँके वह काम करनेसे बाबाजी विशेष प्रसन्न होंगे। मैंने उनको कष्ट पहुंचाया है, इसलिये वे मेरे ऊपर नाराज होकर गये हैं ! उधर यदि मैंने कुछ अकर्तव्य किया है, तो इस ओर तुम लोग मुझे अपना कर्तव्य पालन अच्छी तरह कर लेने दो। दिन पर दिन हमारे देशकी जैसी भयङ्कर अवस्था होती चली जा रही है, उसको देखते हुए, तो मैं घरमें हाथ-पांव सिकोड़ कर बैठा नहीं रह सकूंगा, मेरे साथियोंके साथ मुझे जो कुछ होना होगा, होगा। इसके बाद भी मेरा यही मार्ग रहेगा, यह मैं दिव्य-नेत्रोंसे देख रहा हूं, अरुण भैया ! घरमें अब मेरा मन नहीं लगेगा ! तुम्हीं माँके बेटे होकर रहो, माँसे कह देना, कि वे मेरे ऊपर विशेष स्नेह न करें। यदि जेल भी हो गयी, तो हम लोग वहां भी बहुत प्रसन्न रहेंगे।"

"क्या उसने दिलकी बात सुन ली है ? शायद उसने इसीलिये ऐसी बात कही है ।"

"नहीं, उससे यह बात नहीं कही गयी ।"

अरुन्धतीने कुछ देर चुप रह कर कहा,—"लेकिन अरुण,—करुणा ?"

"उसको लेने तो नहीं जा सका ताईजी ! सनत्‌ने अपने जिस मित्रके घरमें उसको रख रखा है, वह भी सनत्‌के साथ हवालातमें हैं, और उसकी माँ-बहन, उसके पकड़े जानेके बाद अपने देश चली गयीं हैं। आज बाबाजीका श्राद्ध था, यदि और देर करता तो मैं पहुंच नहीं सकता था। कुछ दिन बाद लानेसे भी काम चल जायगा। माँ, वह अच्छी ही जगह है ।"

"उनका घर कहां है ?"

"वर्द्धमान जिलाके एक गांवमें ।"

"पिताजीके श्राद्धके समय भी वह नहीं आ सकी ! हाय, अभागिनी !"

सरस्वतीने जेठानीको धमका कर कहा,—"बहन, तुम भी धन्य हो। वंशका जो दीपक है, उसके न आने पर तो तुमने कुछ कहा नहीं और करुणाके न आने पर तुम इतनी चिन्तित हो रही हो ?"

"हां, यही छोटोवहू यही बात है ! मैं जानती हूं, कि सनत्‌के दिये हुए पिण्डोंसे उसके बाबाको तृप्ति नहीं होगी ! और सनत्‌ किसी बुरी जगह तो है ही नहीं। वह अपने घरसे देशको बड़ा समझता है, इसलिये स्वेच्छासे कैद हुआ है, शायद उसने अपनी शिक्षा-दीक्षाके

अनुसार ही काम किया है। और करुणा ? वह किस सुख और किस सार्थकतासे वहां पड़ी है ? उसके प्रारब्धमें यह घटना कैसे हुई ? जिसके लिये हुई है, वह क्या अब—"

"चुप रहो बहन, मुझे लोगोंके सामने मिथ्यवादिनी न बनाओ—घरमें कलङ्क न लगाओ। सब लोग यही समझते हैं, कि उसको विवाह करनेके लिये हम लोग साथ ले गये थे। पिताजीकी बीमारीमें भी जब वह हमारे साथ नहीं आई, तो लोगोंके पूछने पर मैंने यही कहा है, कि उसका विवाह हो गया है—वह अपनी ससुरालमें है। हम लोगोंके मनमें अशान्ति थी—इस लिये उसको खबर नहीं दे सके। अब कहना पड़ेगा, कि उसको ससुरालवालोंने भेजा नहीं। इसके सिवा और क्या कहा जा सकता है, तुम्हीं कहो ? सनत्ने जो कुछ किया है, वह तो किसीसे कहा नहीं जा सकता—लाचार होकर झूठ बोलना पड़ा। इस कम्बख्त कैवार्तिनीने तो 'करुणा बेटी-करुणा बेटी' करके मुझे हैरान कर दिया। करुणाको जब अरुण घर लाये, तो उसको ये बातें समझा देना। इसके सिवा और उपाय ही क्या है ? अपना मान बचानेके लिये झूठ बोलनेसे पाप नहीं होता।"

अरुण चुप रहा। अरुन्धतीने आंचलसे आँसू पोंछ कर अरुणसे कहा,—"जाओ, नायीसे बाल कटा कर स्नान करके श्राद्धका जल्दी उद्योग करो—"

यथाविधि मृत्युञ्जय भट्टाचार्यका श्राद्ध हो गया। पौत्रके बदले पुत्रवधूको शास्त्र-सम्मत और्द्ध्व-दैहिक-क्रिया सम्पन्न करते हुए देख कर पण्डित लोग समयको दोष देने लगे और उसी दोषसे सनत्

अपने पैतृक-अधिकारसे वंचित हुआ है, इसकी एक स्वरसे घोषणा करने लगे। यह सुन कर अरुण सोच रहा था, कि यह दुर्भाग्य क्या अकेले सनत्‌का ही है ? उसके हाथके श्राद्धसे वंचित रहकर स्वर्गगत भट्टाचार्य क्या तृप्त हो रहे हैं ? देशमें ऐसा कौन महाप्राण है, जो इस प्रश्नकी मीमांसा कर सकता है !

सब काम पूरा होने पर अरुणने सनत्‌की मांसे कहा,—"अब मैं जाता हूं, ताईजी !"

"जाओ।"

सरस्वतीने कुछ तीव्र स्वरसे कहा,—"लेकिन करुणाको लानेसे पहले लड़केका क्या हुआ है, यह देखना क्या उचित नहीं है बेटा ?"

अरुणने कुछ कहे बिना ही एक बार अरुन्धतीकी ओर देखा। अरुन्धतीने कहा,—"तो यह इतना व्यस्त होकर और कहां जा रहा है ?"

"अच्छा, तब तो ठीक है। तुम लोग जितने कर्त्तव्यपरायण हो, उसके अनुसार क्या तुम्हारा सनत्‌के प्रति और कुछ कर्त्तव्य नहीं है ?"

"अरुणका यह जाना, केवल जाना-आना ही रहेगा, जो होना है, सो तो होगा ही। हवालातसे छूटने पर तो वह खुद ही आ जाता, सिर्फ करुणाको लानेमें देर हो रही है। लेकिन अरुणको मैं रोक नहीं सकती।"

"तुम भी अच्छी मां हो। और चाहे जो कुछ हो, पर अरुणमें थोड़ासा कर्त्तव्यज्ञान देख कर मैं बड़ी खुशी हुई हूं।"

मीराने कहा,—"यदि भैयाके मुकदमेकी अच्छी तरह पैरवी न हुई ? चलो मां, हम लोग चलें, मामाजीसे कह कर अच्छी तरह पैरवी करायेंगे। हमारे गये बिना न जाने क्या होगा ?"

सरस्वती इतने दिनोंमें कुछ समझने-सोचने लगी थी। उसने कहा,—"नहीं बेटी, अरुण जा रहा है, तो सब ठीक हो जायगा। भैया हैं—"

"बड़े मामाकी बात कहती हो ? वे तो थोड़ी देरमें ही सब कुछ भूल जाते हैं। उनके पीछे एक आदमी लगे बिना, बड़ेसे-बड़े काममें भी—"

"वहां इला तो है ही, तू जितना करेगी, इला उससे कुछ कम नहीं है ! तेरी ताई अकेली रहेगी बेटी, इस समय तेरा जाना नहीं हो सकता।"

मीराने फिर कोई आपत्ति नहीं की और यह सोच कर कुछ लज्जित हो गयी, कि इतनी देर तक ताईजीकी बात उसको याद क्यों नहीं आयी थी। चलते समय अरुणने अरुन्धती और सरस्वतीको प्रणाम किया। सरस्वतीने कहा,—"मीरा, तूने अपने मामा और इलाको जो चिट्ठी लिखी है, वह अरुणको दे दे।" दूसरे घरमेंसे मीरा ने उत्तर दिया,—"डाकसे भेज दूंगी।"

"क्यों जब लिखी जा चुकी है, तो अरुणको देनेमें क्या हर्ज है ? अरुण, ले तो आओ भैया दोनों चिट्ठियां। डाकसे भेजनेमें एक दिनकी देर होगी।"

अरुण 'डाकसे ही भेज देना' कहकर जाने ही वाला था, कि

उसको मीराका शब्द सुन पड़ा,—"जब कह दिया डाकसे भेज दूंगी, फिर भी एक बातको सौ बार कहती हो।"

"खैर जो तेरी इच्छा हो सो कर।" कह कर सरस्वतीने अपने मनसे कहा,—"लड़कीकी सभी बातें विचित्र होती हैं।"

अरुणके चले जाने पर सरस्वतीने एकान्तमें मीरासे पूछा,—"अरुणके नामसे तू इतनी चिढ़ती क्यों है?"

मीराने क्रूर दृष्टिसे अपनी मांकी ओर देखा। फिर दांतपर दांत रखकर कहा,—"और आज-कल तुम ही उसके नामसे इतनी नम्र क्यों हो जाती हो?"

लड़कीकी बात सुन कर सरस्वती स्तब्ध हो गयी। लेकिन एक ही बातसे हार न मानकर उसने कहा,—"तू क्या हमेशा ही बच्ची बनी रहेगी मीरा? तुझे कभी ज्ञान नहीं होगा?"

"अर्थात् दूसरोंकी रोटी खानेवाला समझकर पहले हमने जिसका काफी तिरस्कार किया है, अब उसीको सर्वस्वका मालिक समझ कर उसकी खुशामद किये बिना क्या बुद्धिका परिचय देना नहीं हो सकता माँ!"

सरस्वतीका मुंह आरक्त हो गया। उसने क्रोधपूर्ण स्वरसे कन्या-से कहा,—"लिखी-पढ़ी लड़कीसे ऐसा ही व्यवहार पानेकी आशा है! मैं क्या तुझे खुशामद करनेको कहती हूं? साधारण व्यवहार करनेका अर्थ क्या खुशामद होता है? अब जो यह करुणाको लेने गया है, जब वह आ जायेगी, तब उसको इस सम्पत्तिकी स्वामिनी समझ कर, उसके साथ भी बात नहीं करोगी? एक जगह रहते हुए—"

"कौन कहता है, मैं एक जगह रहूंगी? करुणाके आते ही मैं चली जाऊंगी। तुम यह स्वप्नमें भी न सोचना, कि मैं उनके सामने हाथ जोड़े खड़ी रहूंगी—इससे तो मैं हमेशा मामाके घर पड़े रहना अच्छा समझूंगी। लेकिन—"

सरस्वती क्षोभसे गुन-गुनाती हुई बोली,—"जानेको कहती है पर जायगी कहां जरा बतला तो? वहां तेरा बड़ा आदर है न, इसी-लिये—"

मीराने अपनी माताके नेत्रोंकी ओर देख कर कहा,—"चाहे जो कुछ हो, पर मां हम लोगोंका गुजारा वहीं होगा। तुम यह नहीं समझना कि मैं तुम्हारे मनके भाव नहीं समझती। पर क्षमा करना, एक बात कहती हूं। अन्तमें जब तुम्हारा ऐसा विचार था, तो तुमने बाबाजीको इतना कष्ट क्यों दिया? क्यों उनको इतना रुलाया? इस घरको छोड़ कर क्यों चली गयी थी? उन्होंने जैसा ही बदला लिया, वैसे ही तुम्हारी राय बदल गयी और सम्पत्तिके लिये—छिः मां, इतने नीच वंशमें मेरा जन्म नहीं हुआ है? बाबाजी जिनको अपनी सम्पत्ति दान कर गये हैं, हम लोग उन्हींके पीछे, उस सम्पत्तिकी आशामें कुत्तेकी तरह लगे रहेंगे? देखना, भैया भी इसके लिये जरा दुखी न होंगे। हम लोगोंने जो वस्तु उनको दान करके दे दी है, घुमा-फिरा कर उसी वस्तुको भोग करनेका विचार छोड़ दो मां। छिः! तुम्हें यह शोभा नहीं देता! करुणा आजाय और यह पता लग जाय, कि भाईके विषयमें क्या होता है, फिर हम लोग इस मकानसे चले जायेंगे और इस दान की हुई सम्पत्तिको

लात मार देंगे । हमारे भाग्यमें जो लिखा होगा, सो ही होगा इसके लिये तुम चिन्तित न हो मां !"

मीरा धीरे-धीरे वहांसे चली गयी और उसकी माता चुप-चाप अपनी लड़कीकी ओर देखती हुई खड़ी रही ।

१८

वर्षा ऋतु समाप्त होकर शरद्-श्री—जल-स्थल और अन्तरिक्षमें परिस्फुट हो उठी थी । मृत्युञ्जय भट्टाचार्यके घरसे जो लोग वर्षाके प्रारम्भ या मध्यमें चले गये थे, उनमेंसे कोई भी अभीतक वापस नहीं आया है । ताईको अकेली छोड़ कर मीराने वहांसे जाना नहीं चाहा और सरस्वतीकी तो ऐसी इच्छा ही नहीं थी । बल्कि वह मीराकी इच्छासे अपनी इच्छाको ढकनेका सुयोग पाकर कुछ निश्चिन्तसी ही हो रही थी । इसलिये वे दोनों अरुन्धती-देवीके पास ही रह रही थीं ।

अरुणका इन्तजार करते हुए जब इन लोगोंके दिन कटने मुश्किल हो रहे थे और मीराने जब सनत्के समाचार पानेके लिये पत्र लिखते-लिखते अपने मामा और इलाको अस्थिर कर रखा था, तब उनके भेजे हुए एक समाचार-पत्रमें मीराने देखा, कि चांदपुरके कुलियोंके सम्बन्धके मामलेमें, आसामियोंके अनेक तरहसे कुलियोंका पक्ष लेनेके अपराधमें उनको कैदकी सजा मिली है । उसकी अवधि दो माससे लेकर एक वर्ष तक थी । सनत्कुमार भट्टाचार्य तथा और भी एक-दो नामोंके साथ अधिकसे अधिक दण्ड जुड़ा हुआ है । यद्यपि अरु-

न्धतीको किसीने यह समाचार नहीं दिया, पर मीराके रोनेसे लाल हुए नेत्र और सरस्वतीके शुष्क मुखने उनको सब कुछ कह दिया। उन्होंने धीरेसे पूछा,—"कितने दिनकी हुई है?"

"एक साल। उसका नाम दो-तीन मामलोंमें था न।" अरुन्धतीने कुछ नहीं कहा।

इस घटनाके प्रकाशित होनेसे दो-तीन दिन बाद एक दिन मीरा ने असहिष्णु होकर अपनी ताईसे कहा,—"तुम्हारे ये लोग अब कितनी देर करेंगे ताईजी? करुणा कब आयगी? भैया तो अभी आते ही नहीं हैं! पर वे लोग आ जायं तो हम······" कहती हुई, मीरा अपनी ताईके मुंहको देख कर चुप हो गयी।

अरुन्धतीने धीरे-धीरे कहा,—"अरुणाका भी तो कुछ पता नहीं है! उन लोगोंके आनेका अभी तो कोई निश्चय नहीं है।"

सरस्वती मीराकी आवाज सुन कर कुछ झगड़ा हो जानेकी आशङ्का कर रही थी। उसने मध्यस्थ होकर कहा,—"तू तो उसकी खबर इलासे मालूम कर सकती है। हाँ, कमसे कम उसको तो लौट आना चाहिये था।"

मीराने एक बार क्रूर नेत्रोंसे माँकी ओर देख कर फिर शान्त भावसे अरुन्धतीकी बातका उत्तर दिया,—"करुणाकी खबर भी क्या इला बहनसे मिल सकती है? ताईजी, इलाको चिट्ठी लिखूं?"

"लिख दो।"

मीराको चिट्ठी लिखनेकी जरूरत नहीं रही। कुछ देर बाद ही

एक बैल गाड़ी उनके दरवाजेके सामने आकर रुकी। सरस्वती और मीराने एक साथ कहा,—"यह देखो, करुणा आ गयी!"

अरुन्धतीने अपने कमरेके जंगलेसे बाहर देख कर कहा,—"नहीं, तो अरुण कहां है? यह तो तुम्हारे मामाकी लड़की इला है शायद।" यह कह कर अरुन्धती घरसे बाहर निकली। सरस्वती और मीराने सहसा भय चकित होकर एक दूसरीके मुंहकी ओर देखा। क्या फिर कोई नया समाचार है? सनत् जेलमें अच्छा तो है? करुणा और अरुणका तो कुछ अमङ्गल नहीं हुआ?

अरुन्धतीके पीछे-पीछे इला चुपचाप उनके पास आ और सरस्वतीको प्रणाम क॰ खड़ हो गयी। अरुन्धतीको वह पहले ही प्रणाम कर चुकी थी। मीराकी बोली उस वक्त भी बन्द थी। वह चुपचाप इलाकी ओर देखने लगी।

सरस्वतीने सूखे हुए मुंहसे कहा,—"क्या खबर है इला, सब लोग अच्छी तरह तो है?"

"हां।"

"तुम लोगोंको सनत्‌की खबर मिलती रहती है न? वह अच्छी तरह तो है?"

"हां, अच्छी तरह हैं।"

"अरुण कहां है? वह तो करुणाको लेने गया था, क्या उसे करुणाका पता नहीं लगा?"

"लग गया है।"

"कहां है, करुणा? क्या अरुण उसको कलकत्तामें अपने पास ही ले गया है?"

इलाने अपनी बुआके ऊपर विस्मित दृष्टि डाल कर कहा,—"वहां क्यों ले जाता ? सनत् भैयाने करुणाको जहां रखा था, वह वहीं है।"

"सनत्ने उसको कहां रख रखा है ? करुणा कहां है ?"

"सुन तो चुकी हो, वर्द्धवान जिलेके किसी गांवमें।"

इस बार अरुन्धतीने कहा,—"चलो इला, पहले हाथ-पैर धो लो, छोटीबहू, अपनी भतीजीके हाथ-पैर धुला कर जलपान कराओ। मीरा चुप क्यों खड़ी है जा न !"

"जाती हूं बहन—मीरा तू जा, हां, क्या अरुण, करुणाको लेने नहीं गया ?"

"लाया क्यों नहीं था ? करुणा खुद ही नहीं आई। उसने वहीं रहना चाहा, इसलिये अरुण वहीं छोड़ आया। सनत् भैयाका मित्र वह प्रमथ है न,—उसीको माँ और बहनके पास है, करुणा।"

"उसी प्रमथके घर। राम-राम, वे तो बड़े गरीब हैं, वे कैसे···"

अरुन्धती इलाका हाथ पकड़ कर बाहर खींच कर ले गयी, लाचार होकर सरस्वतीको भी जाना पड़ा। मीरा भी कठपुतलीकी तरह इला के पीछे-पीछे चल पड़ी।

इलाने अपनेको, अरुन्धतीकी आज्ञानुसार रास्तेकी थकावट मिटानेमें लगा दिया। अरुन्धतीके शान्त और पाण्डु मुखकी ओर देखनेका भी उसका साहस न होता था। उस विषण्ण वेदनानत दृष्टिके सामने रहनेसे उसका मन न जाने कैसा हो रहा था। उस निर्वाक् और सहनशीला स्त्रीके हृदयकी बात समझनेवाला वहां

कोई नहीं था। इलाके पास बैठे-बैठे अरुन्धतीने मृदु स्वरसे पूछा,— "अरुण कहां है इला ?"

इलाने एक बार चारों ओर देखा। उसने देखा, कि मीरा म्लान मुंहसे उसके पीछे बैठी है और सरस्वती भी व्यग्र भावसे उन्हींकी ओर आ रही है। इलाने उत्तर दिया,—"उन्होंने न्यायशास्त्रकी परीक्षा देने तथा और भी न जाने क्या-क्या पढ़नेके लिये एक पाठ-शाला ठीक कर ली है।"

"और वह रहेगा कहां ?"

"यह तो मुझे मालूम नहीं है माँ।"

"करुणाको भी नहीं लाया और खुद भी छोड़ कर चला गया ! ऐसी दशामें इला···"

इलाने एक बार व्यथित भावसे अरुन्धतीकी ओर देख कर कहा, "करुणाने तो स्वयं ही नहीं आना चाहा ! इसके भी कई कारण हैं, आप शायद समझती····"

"समझती हूं, और अरुणने भी इसीलिये घर छोड़ दिया ? पिता-जी, ऐसी ही व्यवस्था कर गये हैं !"

सरस्वती इस समय तक उनके पास ही बैठ गयी थी। यहांकी प्रायः सभी बातें उसने सुनीं थी। कहा,—"अरुणने वह बात करुणासे कही क्यों थी ? जब घर आ जाती, तो सब मालूम हो जाता ! दूसरे के घरमें इतनी बड़ी लड़की—"

इलाने रोक कर कहा,—"यह बात छोड़ दो बुआजी, सनत् भैयाने उसको अच्छी ही जगह रखा होगा।"

"रहने दे बेटी, अपनी अच्छी जगहको—उसी प्रमथके घर तो ? प्रमथ—उसकी माँ, बहन खुद धान कूटती हैं, जल लाती हैं, हम लोग क्या यह बात नहीं जानतीं ? वही तो हम लोगोंके सामने बड़ा प्रसन्न होकर ये बातें कहा करता था।"

"करुणा भी उनके साथ इसी तरह आनन्दमें होगी बुआजी। प्रमथ बाबू भी तो सनत्के साथ जेलमें हैं। पुरुष नामको तो कोई उनके घरमें है नहीं—दो विधवा, एक कुमारी लड़की और करुणा है। सनत् भैयाके आ जाने पर करुणाको जोर करके भी ला सकते हैं, वह इस समय तो कुछ दुखी मनुष्योंके साथ बड़े आनन्दसे रह रही होगी ! यहां आने पर उसका वह सुख शायद न रहे।" अपनी बुआ और बहनको सुना कर उनके सामने यह बात कह कर उसने देखा, कि मेरे सामने एक और वेदना और सहिष्णुताकी मूर्ति बैठी है। यह देख कर उसने सिर नीचा कर लिया।

सरस्वतीने कुछ देर रुक कर व्यस्त भावसे कहा,—"और अरुण ? उसने भी क्या सनत्को जेल हो जानेसे किसीको मुंह न दिखानेकी प्रतिज्ञा की ?"

"छोटीबहू, सनतके इस कैद हो जानेमें तो लज्जाकी कोई बात नहीं है। उसने अपना जैसा जीवन बनाया है, उसके अनुसार तो जेल उसके सौभाग्य और प्रार्थना की वस्तु है—बहुतसे आदमियोंके दुःखके अंशको उसने अपने सिर पर लिया है। उसके लिये तो किसी को व्यथाका अनुभव नहीं हो सकता, अरुण क्या यह बात नहीं समझता ? पर इस तरह अरुण क्यों चला गया ? यदि वह मुझसे कहता,

कि मैं यहां नहीं रह सकता, तो क्या मैं उसको जबरस्ती रोक लेती ? एक बार मुझसे कह भी नहीं गया !"

इलाने विषण्ण मुखसे कहा,—"आपके पास आनेके बाद शायद वह फिर न जा सकता, उन्होंने अपने मनकी दुर्बलता समझ कर ही शायद ऐसा किया है और सनत् भैयाके बिना भी उनको घर रहना अच्छा न लगता था। कहते थे, पढ़नेके सिवा तो मुझे और कुछ मालूम नहीं है। सनतका साथी तो बन नहीं सका। इस समम किसी बातमें मन नहीं लगता, देखूं, पढ़नेमें कुछ ध्यान लगता है, या नहीं ?"

सरस्वतीने जेठानीके पुत्र गौरवसे आरक्त मुंहकी ओर देख कर कहा,—"सभीने अपनी-अपनी बातें सोची हैं, घरकीबात भी किसीने सोची ! हम लोगोंके सुख-दुःख और देख-भालकी भी यदि उन लोगों को आवश्यकता नहीं थी तो पिताजी इतनी बड़ी सम्पत्ति 'देवत्र' कर गये हैं, यह बात भी क्या अरुणने नहीं सोची ? इसको देख-भाल कर पिताजीकी इच्छानुसार इसकी व्यवस्था कौन करेगा ? वे क्या इसीलिये उनको यह सम्पत्ति दे गये हैं ?"

इलाने बुआकी ओर देख कर क्षुब्ध स्वरसे कहा,—"आप लोग अपने मनमें ऐसा ख्याल करते हैं, यह सोच कर ही शायद अरुण बाबू नहीं आये हैं। बाबा तो कुल भार बड़ी बुआको दे गये हैं। ये ही हमेशासे देखती-भालती और करती-धरती हैं। अरुण बाबू क्या जानें ? वे घरकी बातें क्यों सोचें, सोचेंगे बाहरकी बात। घरका भार तुम लोगों पर है, बुआजी।"

इस बार सरस्वती अपनी भतीजीके आगे लज्जासे सिर झुकाने के लिये मजबूर हो गयी। कुछ देर बाद एक निःश्वास छोड़ कर बोली,—"किन्तु करुणा ? आह, उस बेचारीकी सबने मिल कर क्या दुर्दशा कर डाली है ! उसको क्य ..

"जाओ इला, थोड़ी देर आराम कर लो ! छोटीबहू, भोजनकी जरा अच्छी तरह व्यवस्था करना, जिसमें लड़कीको खानेमें कोई कष्ट न हो। दूधकी थोड़ीसी खीर बना लो—और कुछ मिठाई भी जरूर बना लेना—मीरा, बना सकेगी न ? उस दिन जैसे पिताजीके लिये बनाई थी।"

मीराने गर्दन हिला कर स्वीकार किया।

इलाने खड़ी होकर कहा,—"इस समय आराम करनेकी जरूरत नहीं है, आप कहां जा रही हैं ?"

"जाती कहीं नहीं, हारूको मोहल्लेके दो-चार आदमियोंको बुलाने भेजा था, देखूं वे अभी आये हैं या नहीं ?"

"किस लिये माँ ?"

"कई वर्षसे गांवमें प्रवेश करनेका रास्ता बारिशसे खराब हो जाता है। पिताजी, पार साल ही, उसको मरम्मत कराना चाहते थे, पर कई कारणोंने न हो सकी। इस समय वह काम हो सकता है या नहीं और कितना खर्च बैठेगा, यही मालूम करना है।"

इलाने उनके मुंहकी ओर देख कर मृदु स्वरसे पूछा,—"इस समय—?"

"यही ठीक वक्त है बेटी !"

इला उनके साथ चलते-चलते व्यस्त भावसे बोली,—"बातों ही बातोंमें मैं आपसे एक बात कहनी भूल गयी हूं। अरुण बाबूने मेरे द्वारा कुछ रुपये भेजे हैं—मेरे ट्रङ्कमें रखे हैं। सनत् भैयाके मुकदमेके लिये उन्होंने 'देवत्र' मेंसे जो रुपये लिये थे, वे खर्च नहीं हुए—वैसे के वैसे ही रखे हैं। सनत् भैयाने न तो जमानत ही देने दी और न वकील-बैरिस्टर ही करने दिये। वे रुपये अरुण बाबूने आपको देनेके लिये कहा है, चलो ले लो।"

"अच्छी बात है, इस समय काममें भी लग जायंगे।"

उनके साथ सरस्वती भी उठनेके लिये बाध्य हुई। केवल मीरा उसी तरह स्तब्ध भावसे बैठी रही।

दो दिन बाद सरस्वती इलासे सनत्का कुल हाल विस्तृत रूपसे सुन रही थी। ऐसे समय अरुन्धतीको किसी कामके बहाने वहांसे उठते हुए देख कर उसने धीरेसे कहा,—"वाह, अच्छी माँ है!"

इला सरस्वतीकी ओर देखने लगी।

"आज ही नहीं, हमेशासे ही लड़केके विषयमें इनके ऐसे भाव हैं! माँको क्या इतना सख्त होना शोभा देता है?"

"वे सख्त हैं? नहीं बुआजी। मुझे तो इनका यह ढंग बड़ा सुन्दर लगता है।

"कौन ढंग?"

"सभी। तुम क्या नहीं समझती बुआजी? ये हमेशासे ही ऐसी संयत और गम्भीर हैं—न? देखा नहीं, सनत् भैयाके नामसे मुंह कैसा हो रहा था?"

सरस्वतीने कुछ झेंप कर कहा,—"पर हम लोगोंको मात्रा कुछ विशेष प्रतीत होती है। माँको इतने संयमकी क्या दरकार है? अच्छा इला, तुम बतला सकती हो, कि अरुण घर क्यों नहीं आया?"

"बुआजी, सब हाल सुन तो चुकी हो।"

"तो क्या उसने और कुछ नहीं कहा? उसने और कुछ तो नहीं समझा?"

"और क्या समझता?"

इलाका सरल प्रश्न और दृष्टि देख कर सरस्वतीने इस प्रसङ्गको छोड़ देना चाहा। उसने मुंह नीचा करके कहा,—"नहीं वैसे ही पूछ रही थी।"

कुछ दिन तक अरुन्धतीके पास रह कर इलाने घर जानेके लिये आज्ञा मांगी, तो अरुन्धतीने कहा,—"और कुछ दिन रह जाओ बेटी, तुम्हारे रहनेसे मुझे करुणाका अभाव नहीं खटकता।"

एक दिन मीराने इलाको एकान्तमें देख कर कहा,—"बहिन, तुमसे मुझे सलाह करनी है। पर मैं यह पहले ही कहे, देतो हूं कि मेरी ओर तुम्हें पहले देखना होगा।"

इला कई दिनसे मीराकी हर वक्तकी बेचैनी, सूखा हुआ मुंह, बहुत कम बातचीत करना देख कर समझ रही थी कि मीरा अचानक बदल गयी है। इस समय उसके पहलेके स्वभावके अनुसार अनुरोध, चंचल स्वर और बातोंसे आश्वस्त होकर इलाने कहा,—"वाह, परामर्श करनेसे पहले ही पक्ष-समर्थन करनेका हुक्म!"

"हाँ, तो सुनती हो या नहीं?"

"कह डालो !"

"तू और थोड़े दिन तक ताईजीके पास रह ले, मैं और माँ नन्नु भैयाके साथ एक बार बर्द्दमान जायेंगी।"

इलाने चौंक कर कहा,—"बर्द्दमान जायगी ? करुणाको लेनेके लिये ?"

"हाँ।"

"बुआजीसे कहा है ?"

"माँसे तो कह दिया है, उन्होंने स्वीकार कर लिया है।"

"और अपनी ताईजीसे ?"

"नहीं कहा।"

"तो कैसे जा सकती हो ?"

"कैसे जा सकनेकी क्या बात है ? तूने अरुण बाबूसे जो ठीक पता मालूम किया है, वह हमें बतला दे, हम लोग ढूंढ़ते-ढूंढ़ते चले जायेंगे।"

"खैर, मान लिया, कि तू पूछती हुई चली जायगी, पर ताईजीके कहे बिना जाना क्या अच्छा है ?"

इलाकी ओर क्षण भर स्थिर दृष्टिसे देखकर मीराने कहा,—"मैंने क्या तुमसे पहले ही नहीं कहा था, कि मेरा पक्ष समर्थन करना पड़ेगा।"

"तो क्या मैं उससे, हटती हूं भाई ? लेकिन अरुणबाबू तो उसको लाए नहीं और तुम्हारी ताईजीने भी कुछ नहीं कहा, बीचमें हमलोगों-के इस तरह पड़नेसे यदि····"

"इसमें बदीकी कुछ बात नहीं है ? तुम समझती नहीं हो कि इन लोगोंने करुणाको क्यों निर्वासित कर रखा है ?"

इलाने क्षणभर मीराके विषण्ण और गम्भीर मुंहकी ओर देख कर कहा,—"तू क्या ऐसा ही समझती है, मीरा ?"

"सिर्फ समझना ही नहीं है बहन, निश्चय समझ लो, इसी लिये ऐसी दशामें करुणाको वहां रखा गया है। इसी लिये ताईजी भी चुपचाप सह रही हैं ! यह सब हम लोगोंके लिये ही है।"

"नहीं मीरा, तुम जितना समझती हो, उतना नहीं है। मैंने सुना है, कि करुणा बाबाजीके बिलकी बात सुन कर जितनी रोई है, उनके मर जाने या सनत् भैयाके जेल हो जानेकी बात सुन कर भी उतनी नहीं रोई। शायद उसने लज्जा और शर्मसे खुद ही मुंह दिखाना नहीं चाहा। और इसके सिवा सनत् भैयाने उसका—"

"खैर, चाहे जो हो कुछ बहिन, पर क्या हम लोग भी कारण नहीं हो रहे हैं ? यह हम लोगोंके लिये कितने दुःख और लज्जाकी बात है, जरा एक बार यह तो सोचो !"

"तो सचमुच जायगी ?"

"हां, हम लोग कल ही जायंगी।"

उनके जानेका इन्तजाम देख कर अरुन्धती मामला समझ गयी। उन्होंने सिर्फ यही कहा,—"व्यर्थ कष्ट उठा रही हो मीरा, वह नहीं आयेगी। जोर लगानेसे कोई लाभ नहीं है, जो जिस तरह चल रहा है, उसको मान कर चलना ही अच्छा है। जब अरुण भी उसको न ला सका, तो शायद उसका वहीं रहना उचित होगा। यदि तुम इसमें

कुछ गड़बड़ करना चाहोगी तो शायद जितना इस समय है उतना भी न रहे । इस लिये यह विचार छोड़ दो ।"

सरस्वती कुछ कहना चाहती थी, पर उसके बात शुरू करनेका मौका दिये बिना ही मीरा उसको दूसरी तरफ खींच ले गयी । जब सब यात्राकी तैयारी हो गयी और वे दोनों प्रणाम करने आईं, तो अरुन्धतीने चांदनी रातमें चमकनेवाली बिजलीकी तरह निष्प्रभ हँसी हंस कर कहा,—"इस बार तुम्हारे जानेकी बारी है न मीरा ? एक-एक करके सभी चले गये, फिर तुम्हीं मेरे पास क्यों रहोगी ? क्या कहती हो छोटीबहू ?"

मीरा कुछ उत्तर न दे सकी । अपनी जेठानीके मुंहकी ओर देखकर सरस्वतीकी आंखोंमें आँसू आ गये । वह तो जाना नहीं चाहती थी, पर मीराकी जिद करनेसे जा रही थी । सरस्वतीने जेठानीके चरणोंमें हाथ लगा कर कहा,—"नहीं बहन, इतने दिन तक मैं चाहे जैसे रही हूं, पर अब तुमसे पृथक् नहीं रहूंगी । मैं जरूर आऊंगी ।"

रास्तेमें जाती हुई मीरा सोच रही थी,—"ताईजी क्या भविष्य-की बात भी बतला सकती हैं ? क्या सच-मुच इस बार उनके पाससे मेरे जानेकी बारी है ? बाबाजी, जिनको अपना सर्वस्व दे गये हैं, उनमेंसे यदि कोई भी घर न आया, तो हम लोग किस मुंहसे उनके स्थान पर अधिकार किये रहेंगे ? लोग क्या हम लोगोंको देख कर हँसते नहीं होंगे ? क्या वे यह नहीं सोचते होंगे, कि यह प्रेम इतने दिन तक कहां चला गया था ?"

१९

मालूम होता है, प्रकृति देवी गरमीके सञ्चित किये हुए धनको अच्छी तरह खर्च न कर सकनेके कारण इस साल कुछ अप्रसन्न थीं। इसी लिये वे शरदृऋतुके मध्य भागमें अपनी त्रुटिका संशोधन करनेके लिये इस तरह अपने काममें लग गयीं थीं कि इस असमयकी वर्षासे लोग दिक हो गये थे।

वर्द्धमान जिलेके एक छोटेसे गांवमें, ऐसी ही वर्षाके समय एक बैल गाड़ी जा रही थी। गाड़ीमें मीरा और सरस्वती बैठी थी। और उसके पीछे-पीछे टूटा-फूटा, सैकड़ों जगहसे फटा हुआ छाता लगाये हुए अरुण उनके साथ जा रहा था। गाड़ी जब कीचड़में फंस जाती, शीर्ण कङ्काल-सार मूर्तिवाले दोनों बैल जब मार खाते-खाते अपने सारथीको जवाब दे देते, तो अरुण पहियोंमें हाथ लगाकर उनको चलनेमें सहायता देता चला जा रहा था।

सरस्वतीने इलासे अरुणका जो पता ठिकाना पाया था, उसी ठिकानेसे अरुणको ढूंढ़ कर, उसको अपने साथ चलनेके लिये मजबूर किया था। अरुणने रास्तेमें कष्ट होनेका अनुमान करके इलाके भाईको रास्तेसे ही लौटा दिया था, इस समय उससे चौगुना कष्ट हो रहा था। अरुणके सिरतोड़ मेहनत करने पर भी वह कष्ट बहुत ही कम मात्रामें कम हो रहा था। फिर भी सरस्वती बारबार मीराको याद दिला रही थी कि,—"देख तो सही, तू जो गुस्सेके मारे पागल हुई जा रही थी, पर यदि अरुण हमारे साथ न आता, तो न जाने हम लोगोंको कितना कष्ट उठाना पड़ता?"

मीरा दो-एक बार तो चुप रही, पर अन्तमें कहा,—"तुम चुप रहो बाबा, क्या अभी कुछ कम कष्ट हो रहा है?"

"फिर भी तो तू गाड़ीमें बैठी है, पहुंचनेमें कुछ देर हो जायगी, नहीं तो हम लोगोंको और क्या कष्ट है?"

"ठीक है! इस तरह आदमियोंसे पहिये उठवाते हुए और बैलोंको मार खाते हुए देखते जाना—यह क्या कम सुख है?"

सरस्वतीने कुछ झेंप कर कहा,—"यही बात तो मैं भी कह रही हूं। जो कुछ कष्ट हो रहा है, वह हम लोग तो उठा नहीं रहे हैं, बेचारा अरुण ही पहिये उठाते-उठाते अधमरा हो रहा है।"

"तुम्हींने तो—" अपनी बात पूरी किये बिना ही मीरा चुप हो गयी। सरस्वती फिर कहने लगी,—"पर जब हमें यहां आना ही था, तो अरुणको साथ लाये बिना काम नहीं चल सकता था। नन्दू होता तो क्या वह इस तरह हम लोगोंकी सहायता कर सकता था? शायद अभी तक स्टेशनके पास ही पड़े हुए होते और तू तो 'यह करना होगा' कह कर 'मार्शल-ला' जारी कर देती और तो कुछ ज्ञान है नहीं। यही—जिस कामके लिये हम लोग इतनी दूरसे आये हैं, अरुण न होता, तो वही कैसे पूरा होता? यदि वे कहते, कि 'हमारे पास सनत् करुणाको रख गया है, तुम लोग कौन हो, जो इसको तुम्हारे साथ भेज देंगे?' तब तू क्या कहती, बतलाओ तो? जब मैंने अरुणको न जाने कितनी कसम देकर, क्रोध दिखला कर यहां आनेके लिये लिखा था, तब क्या मैं इस वर्षाकी बात न जानती थी? मैं पहले ही समझ गयी थी, कि कितना कष्ट उठाना पड़ेगा, इसीलिये इसी डरसे मैंने अरुणको वैसी चिट्ठी लिखी थी।"

"ठीक है, क्या तुम जानती थी, कि रास्तेमें इतना कष्ट उठाना पड़ेगा ? और वे लोग करुणाको नहीं देंगे ? अब बात बनाने लगी। उनमें इतनी ताकत कहां है ? वे उसको पकड़ कर रखनेवाले कौन होते हैं ?"

"मीरा तुम्हें न जाने कब बुद्धि आयेगी ! वे कोई नहीं हैं, यह बात मान ली, पर यदि करुणा न आना चाहे, और अरुण भी उससे इस विषयमें कुछ न कहे, तो क्या वे जबरन उसको हमारे साथ कर सकते हैं ?"

"हां कर सकते हैं—" कह कर मीराने गाड़ीके पीछे चलते हुए अरुणको लक्ष्य कर जोरसे कहा,—"आप क्या तमाम रास्ते पहिये उठाते-उठाते और भीगते हुए ही चलेंगे ?"

अरुण बैलोंकी चालको ध्यानसे देखता हुआ जा रहा था, सहसा मीराके इस वाक्यसे वह कुछ घबड़ासा गया। एक बार चारों ओर देख कर गाड़ीकी ओर देखा, तो उसको ज्ञात हुआ, कि मीरा अभी तक गाड़ीसे मुंह निकाले हुए उसके उत्तरकी प्रतीक्षा में है। अरुणने अप्रस्तुत भावसे उत्तर दिया,—"अब तो हम लोग गांवके करीब आ पहुंचे हैं, थोड़ी दूर और चलते ही मकान आ जायेगा।"

"मकान तो मिल जायगा, पर क्या आप यह भी बतला सकते हैं, कि ऐसा कीचड़ भी मिलेगा या नहीं ?"

"नहीं, गाड़ीवालेने रास्ता कम करनेके लिये सीधा रास्ता छोड़ कर यह विपत्ति अपने ऊपर उठाई है। अब तो—"

"पास ही वह सामने जल है, आप चाहें तो अपने हाथ-पैर धो डालें !"

"हां, धो डालता हूं । तू सीधे रास्तेसे गाड़ी हांके हुए चला-चल । मैं पीछे-पीछे आ रहा हूं ।" गाड़ीवालेसे यह कह कर अरुण तालाबके पास गया । कुछ देर बाद अरुणने पीछे घूम कर देखा, कि वह मेरे कहनेके अनुसार काम न कर, मेरी प्रतीक्षामें गाड़ी रोके खड़ा है और मीरा गाड़ीके सामनेकी ओर उसी तरह बैठी है । अरुणको देख कर मीराने फिर कहा,—"अभी तक बारिश पड़ रही है, इस छाते-को आप क्यों लगाए जा रहे हैं, इससे दोनों ओर व्यर्थ कष्ट होता है । आपको यह छाता कहांसे मिल गया ?"

अरुणने गाड़ीवालेकी ओर देख कर कहा,—"यह छाता इसी बेचारेका है । मुझे अपनी सम्पत्ति देकर यह भीगता हुआ जा रहा है ।"

"इसके सिर पर जो टाट पड़ा हुआ है, वह आपके इस छातेसे अधिक मूल्यवान् है । मांके और मेरे इधर बैठ जाने पर सामने गाड़ी में आपके लिये काफी स्थान हो जायगा । गांवमें जरा भलेमानसोंकी तरह ही चलना चाहिये । आ जाइये—" कह कर मीरा गाड़ीके भीतर अदृश्य हो गयी ।

गाड़ीवानको अपने लिये इन्तजार करते देख अरुणने कहा,—"गाड़ी चला न, अब तो अधिक रास्ता नहीं है ।"

"यह तो सुन चुकी हूं और इसीलिये आपको यहां बैठनेके लिये कह रही हूं । हम लोग आपसे कुछ बात करना चाहती हैं ।"

"गाड़ी खड़ी करके व्यर्थ समय नष्ट करनेसे, चलते-चलते कह डालने पर भी काम चल जायगा ।"

मीराको चुप देख कर सरस्वतीने कहा,—"बेटे, लड़कीकी जिद

तो तुम देख ही रहे हो, ऊपर ही आ जाओ न! इतनी दूरसे जब तुम हमारे साथ इतने कष्ट सह कर आ रहे हो, तो इतनी दूर नहीं जा सकते थे? यह कुछ कहना चाहती ही है, इसी लिये जिद कर कर रही है। इसकी बात सुन लो, तुम्हें अच्छी लगे मानना, न अच्छी लगे सही। आ जाओ। हम लोगोंके लिये तो बहुत कष्ट...."

अधिक बातें बढ़ानी उचित न समझ कर अरुण गाड़ी पर प्रायः गाड़ीवालेके स्थान पर बैठ गया। बेचारा गाड़ीवाला, बैलोंके साथ-साथ उन्हें हांकता हुआ जा रहा था।

मीराने तनिक भी विलम्ब न कर कहा,—"आप भी हम लोगोंके साथ करुणा बहनको घर चलनेके लिये कहेंगे न?"

अरुणने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह उस वक्त गाड़ीवालेको सहायता दे रहा था।

"हम लोग यह देखनेके लिये व्यस्त नहीं हैं, कि आप गाड़ी चला सकते हैं या नहीं। आप मेरी बातका उत्तर दीजिये। करुणा बहनको हम लोग अपने साथ ला सकेंगी न?"

"ताईजीकी आज्ञासे जब मैं उसको लेने गया था, तो मुझे भी खाली हाथ लौट आना पड़ा था, यह तो आप जानती ही हैं?"

"यह शायद इस लिये हो गया था, कि आपने जोर देकर उससे आनेके लिये नहीं कहा होगा।"

अरुण फिर चुप हो गया। इस बार मीराने कुछ तीव्र स्वरसे कहा,—"इस बार भी क्या आप वैसा ही करेंगे? साफ-साफ कहिये।"

"हां, उसकी इच्छा पर मैं कोई जोर न करूंगा।"

"मैंने भी आपसे ऐसी ही आशा की थी।" कह कर मीरा क्रोधसे मुंह फुला कर बैठ गयी। सरस्वतीने करुण स्वरसे कहा,—"बेटा, हम लोगोंको तुम इस तरह दुःख क्यों देना चाहते हो? मैंने तो इसी लिये तुम्हें दुःख देकर बुलाया है। यदि तुम भी—"

"इस अपरिचित रास्तेमें आपको विशेष कष्ट होगा, यह समझ कर ही मैं आपके साथ आया हूं, करुणाके लिये नहीं आया। मैं जानता हूं, वह नहीं आयेगी और मैं उसको मजबूर न करूंगा। यदि ऐसा होता, तो पहले ही मैं उसको ले गया होता। आप भी कृपाकर मुझसे ऐसा अनुरोध न करें।"

सरस्वतीको अरुणके मुखके भावको देखकर अधिक कुछ कहनेका साहस नहीं हुआ। मीराने कहा,—"समझ गयी, आपको साथ लाने-से उपकारके बदले अपकार ही विशेष हुआ है!"

"अच्छा, अब मैं उतर सकता हूं?" कहनेके साथ ही अरुण गाड़ीसे कूद पड़ा और 'अब बहुत दूर नहीं है, इस रास्तेसे चल' कह कर गाड़ीके आगे-आगे चलने लगा। गाड़ी धीरे-धीरे उसके पीछे चलने लगी।

मामूली दो-तीन छप्परके घर और बस तरहके बाड़ेसे घिरा हुआ मकान था। उसीके सामने गाड़ी रुकवा कर अरुणने कहा,—"उत-रिये।" सरस्वती कुंठित होकर आगा-पीछा सोच रही थी, पर मीरा उसी वक्त उतर पड़ी और किसीका इन्तजार किये बिना ही घरके भीतर चली गयी। लाचार होकर सरस्वतीको भी उसका अनुसरण करना पड़ा। अरुण निस्तब्ध भावसे बाहर ही खड़ा रहा।

दरवाजेके सामने ही एक छप्पर था। उसीमें कम उम्रकी दो लड़कियां धान कूट रही थीं। पासमें एक प्रौढ़ा स्त्री बैठी हुई धानोंको फटक रही थी और कभी-कभी पास रखी हुई रुईको कमानीसे धुनने लगती थी। पास ही चौकी पर बैठी हुई एक बुढ़िया चरखा कात रही थी। सहसा मीराको सामने देख कर उन चारों का काम बन्द गया।

प्रौढ़ा स्त्री खड़ी होकर,—"बेटी, तुम लोग कौन हो?" कह कर मीराकी ओर बढ़ने लगी। इसी समय मीराने सामने बैठी हुई करुणा को देख कर कहा,—"करुणा बहन, आ जाओ, चली आओ—उठ आओ!"

कौन उठे या बाहर जाय! करुणा मीराको देख कर दोनों हाथों से मुंह ढांके हुए कांप रही थी। मीराने पास जाकर उसका हाथ पकड़ लिया और आर्द्र स्वरसे कहा,—"मुझसे तुम क्यों शर्माती हो? इसके लिये हम लोग ही जिम्मेवार है। उठो, मुंह खोलो और चलो माँ आई हैं, तुम्हें लेनेके लिये, चल घर चलो!"

"मीरा!" यह क्षीण शब्द मानों करुणाके कंठसे निकलना नहीं चाहता था। "चचीजी भी आई हैं? मैं क्या करूं तो बहन? उन्हें अपना मुंह कैसे दिखाऊंगी?"

"क्यों किस लिये? भैया और मेरी करतूतोंसे ही तो तेरी यह दशा हो रही है। तुझे किस बातकी लज्जा है? उठ, यह देख मां आ रही हैं।" करुणाने मुंह उठा कर एक बार सरस्वतीकी ओर देखा, फिर मुंह ढांक कर जोरसे रोने लगी। इस वक्त सरस्वती भ

वहां आ पहुंची थो। करुणाकी यह अवस्था देख कर उन्हें बहुतसी बातें याद आ रही थीं। उन्होंने गम्भीर होकर कहा,—"जिसके प्रारब्धमें जैसा था, वैसा ही हुआ है, इस तरह दूसरोंके दरवाजे पर पड़े रहनेसे तो वह बदल नहीं सकता। घर चलो बेटी, फिर जो भाग्यमें होना होगा, होता रहेगा।"

पासमें बैठी हुई प्रौढ़ा स्त्रीने जब देखा, कि करुणा न तो उत्तर देती है और न उठती ही है, तो वह पास जाकर सिर पर हाथ फेरती हुई अपनी लड़कीसे बोली,—"देखती नहीं हो यमुना, थोड़ासा जल ले आओ, लड़कीको बेहोशीसो होती चली जा रही है।" फिर अपने आँचलसे करुणाको हवा करती हुई बोली,—"करुणा बेटी, तुम इतनी अस्थिर क्यों होती हो ? तुम तो बेटी, विपत्तियोंके समय दूसरोंको धीरज दिया करती हो, आज तुम्हीं ऐसी क्यों हुई जाती हो ?" यह कह कर प्रौढ़ाने करुणाको अपनी गोदमें लिटा लिया। वृद्धा और दूसरी लड़की घबरा कर करुणाको हवा करने और उसके मुंहपर जल छिड़कने लगी। कुछ ही देरमें करुणा सम्भल और प्रौढ़ा स्त्रीका हाथ पकड़ कर बैठ गयी।

"रहने दो मौसोजी, अब नहीं—मैं उठती हूं।"

"बेटी, और थोड़ासा आराम कर लो।"

"नहीं-नहीं।" आंख खोलते ही करुणा फिर रो पड़ी और रोती हुई बोली,—"मीरा-मीरा मेरी मां कैसी हैं,—ताईजी ?"

मीराने कुछ उत्तर नहीं दिया या दे ही नहीं सकी। करुणाकी म्लान पाण्डु मुख-कान्ति, कृष शरीर, सङ्कीर्ण जीर्ण वस्त्र और

वह क्षीण मूर्त्ति देख कर मीराके नेत्रोंमें जल भर आया था, गला रुंध गया था।

सरस्वतीने कहा,—" भगवान्‌ने जैसे रख रखी हैं, वैसी ही हैं! क्या तुम्हें यह पता नहीं है, कि सन्तसे अधिक कष्ट उनको तुम्हारे लिये है? अरुण लेने आया तब भी नहीं गयी, क्या तू अब मां या ताईजीसे ऐसा ही प्रेम करती है? तबसे वह भी घर नहीं गया है। हम लोग तुम्हारे लिये उनके और अरुणके सामने लज्जासे मरे जाते हैं। मीरा तो वहां घड़ी भर भी रहना नहीं चाहती, पर उनको एक दम अकेली भी तो नहीं छोड़ा जा सकता। बेटी, हम लोगोंने तुम्हारा ऐसा क्या अपराध किया है, जो हमें यह दण्ड दे रखा है?"

"मीराने अपनी मांकी ओर आंखें तरेर कर उसको चुप होनेका इशारा किया। फिर करुणाके व्यथा-विषण्ण सूक्ष्म दृढ़बद्ध ओष्ठाधर और मुंदे हुए नेत्रोंकी ओर देखकर कहा,—"घर चलो करुणा बहन, अब हम लोगोंको अधिक कष्ट न पहुंचाओ।"

करुणाने आंख मूंदे ही मूंदे मीराकी ओर हाथ बढ़ाया। मीरा उसके पास खिसक गयी, तब करुणाने उसके कानमें कहा,—"बहन, भगवानने मुझे घरसे हर तरहसे दूर कर दिया है। बाबाजीको मैंने दुःख दिया था, इसलिये उन्होंने उसका बदला निकाला है। अब वे मुझे घर नहीं जाने देंगे।"

"तू जो कुछ कह रही है, हम तो इसको परवा भी नहीं करते। तुम्हारे बिना मेरा पढ़नेका हर्ज हो रहा है, अब घर चल।"

"भैया भी चले गये हैं। मैं तो पहले ही समझ गयी थी, कि वे

अब घर नहीं रहेंगे। बाबाजीने हमें अपनी मांकी गोदमें रहनेका कोई रास्ता ही नहीं छोड़ा।"

"फिर वही बात कहती हो ? तेरे भाईने भी क्या तुझे यहां रहने और घर न जानेके लिये कहा है ?"

करुणा मीराके इस किञ्चित् क्रोधपूर्ण प्रश्नका सहसा उत्तर नहीं दे सकी। यह देख कर, जिसे करुणा मौसी कह रही थी, वह प्रौढ़ा रमणी बोली,—"नहीं बेटी, सनत्‌ने तो यह कुछ नहीं कहा है। मेरे पास आकर और करुणा बेटीको मेरे पास धरोहर रखकर वे दोनों भाई देशका काम करनेको चले गये हैं। हम लोग भी नहीं चाहते, कि करुणा बेटीको हम छोड़ कर किसी औरको सौंप दें। उस दिन करुणा का भाई आकर भी इसको इसी गरीब घरमें रख गया है। परन्तु बेटी मैं समझ गयी हूं, तुम भी करुणाकी अपनी ही हो, सो यह जाना चाहे तो जा सकती है। किन्तु—"

सहसा करुणाने उनके पैर पर हाथ रखकर कहा,—"मौसीजी, मुझे अपने घरसे निकाल न देना !"

मौसीने उसी वक्त उसका हाथ अपने हाथमें ले और उसको चूमते हुए कहा,—"बलिहारी है। तुम यदि अपनी इस मौसीकी गोदमें ही रहना चाहती हो, तो मेरे पाससे तुम्हें कौन ले जा सकता है बेटी ? हम तो किसीको जानती-पहचानती नहीं। जानती हैं, सिर्फ तुम्हें और सनत्‌को। तुम दोनोंकी इच्छाके बिना तुम्हें मेरे पाससे कोई नहीं ले जा सकता।"

मीराने क्रुद्ध हो और घरकी मलकिनकी ओर देख कर कहा,—

"आप क्या कह रही हैं ? हमारी लड़की यदि अभिमान कर नहीं जाना चाहती है, तो भी हम जबरदस्ती ले जायंगे, तुम रोकनेवाली कौन हो ?"

"कोई नहीं बेटी, लेकिन हम सिर्फ सनतको जानती हैं, वह करुणाको हमारे पास रख गया है, जब वह आयेगा, तभी हम करुणा-को भेजेंगी।"

आप इस टूटे-फूटे घरमें करुणासे धान कुटवा, आटा पिसवा कर अपना काम करानेके लिये व्यस्त होंगी, इसमें तो कुछ आश्चर्य ही नहीं है, पर जानती हो यह कौन है, यह एक लखपतीकी उत्तराधिका-रिणी है, आप लोगोंके—"

सहसा करुणाके शरीरमें मानों प्राण शक्ति आ गयी। उसने उठ-कर और क्रुद्धा-दर्पिता मीराके मुंह पर हाथ रखकर, उसके तीक्ष्ण वाक्यवाणोंको बन्द कर दिया। फिर उसके क्षीण कण्ठमें जितनी शक्ति थी, सारी शक्ति लगाकर जोरसे बोली,—"झूठी बात है, झूठी बात है, मैं तुम लोगोंकी आश्रिता हूं—तुम लोगोंकी दयासे पली हुई हूं। मीरा तुम वापस हो जाओ, चचीजी भी चली जायं, मैं यहांसे कहीं नहीं जाऊंगी, मांकी गोदमें भी नहीं, तुम लोग चली जाओ!" कहते-कहते करुणाकी शक्ति समाप्त हो गयी। वह फिर वहीं बैठ गयी। उसके बैठते ही उसकी मौसीने उसको गोदमें ले लिया

करुणाने उठ कर फिर अपनी मौसीके पैरों पर हाथ रख कर कहा,—"मौसीजी, मेरे ऊपर नाराज़ न होना। मेरे लिये यह अपमान सहकर भी मुझे यहांसे न निकालना।" मौसी आदर और सान्त्वनासे करुणाको फिर प्रकृतिस्थ करने लगी।

मीराको काठकी पुतलीकी तरह खड़ी हुई देख कर सरस्वतीने अपनी कन्यासे रूखे स्वरसे कहा,—"क्यों, अब तो शौक पूरा हो गया है न? अब घर चलेगी या अबभी यहां और कुछ दरकार है?"

"नहीं, बस चलो।" कहकर मीराके चलते ही करुणाकी मौसीने उठकर उसका हाथ पकड़ लिया और कहा,—"बेटी, तुम्हारे भाई सनत्‌की मैं मौसी हूं, तुम्हारे भाईके नामकी दुहाई देकर कहती हूं, कि बेटी, थोड़ा आराम कर और कुछ जलपान करके तब यहांसे जाना।"

मीराने इस बार उस उदारहृदया ग्राम्य-रमणीके सरल मुंहकी ओर देखा। सोचा, अभी तो मैंने इसको ताना मारा था और अभी यह ऐसा उच्च व्यवहार कर रही है! मीरा कुछ कहे-सुने बिना ही वहीं बैठ गयी और बोली,—लाओ दो क्या देती हो, हम लोगोंको इसी गाड़ीसे लौट जाना होगा।"

"गाड़ी तो सिर्फ रातके वक्त जाती है, अभी तो बहुत देर है बेटी!"

"रास्ता भी तो काफी देरका है।"

"खैर होने दो, थोड़ी देर बैठो बेटी। यमुना, इसे भीतर ले चल।"

घरकी मलकिनने फिर सरस्वतीका हाथ पकड़ कर कहा,—"बहन, हम लोग गृहस्थ हैं, मैं लड़के-लड़कियोंकी मां हूं। चाहे किसी कारणसे हो, जब आपने अपने चरणोंसे इस घरको पवित्र किया है, तो पैर धोकर आसन पर बैठो। इससे अधिक कहनेकी मुझमें शक्ति नहीं है।"

सरस्वतीने देखा, कि मीरा यमुनाके साथ उन्हीं छप्परके घरोंमें

से एक घरमें घुस गयी है। लाचार होकर अप्रसन्न मुखसे वह भी यमुनाकी मांके हाथसे जलका लोटा ले और पैर धोकर वहीं एक चौकी पर बैठ गयी। उस समय बारिश बन्द हो गयी थी। करुणा उसी तरह वहीं मुंह लपेटे पड़ी थी।

करीब घण्टे भरके बाद मीराने घरसे बाहर आकर कहा,—"चलो मां।"

कन्याके प्रसन्न और हंसते हुए मुंहकी ओर देख कर सरस्वती समझ गयी, कि इसका ब्यालु अच्छी तरह हो गया है। उसने असन्तुष्ट स्वरसे कहा,—"अपने आप तो खा लिया है, पर बाहर जो लड़का तमाम रास्ते गाड़ी खींचते-खींचते हैरान हुआ है, उसकी बात एक बार जबान पर भी नहीं लाई।"

मीराने हंसकर कहा,—"मैं क्या करूं? मौसीजीका दूध और बर्दवानके सुन्दर-सुन्दर केले गाड़ीमें पहुंच गये हैं और शायद गाड़ीवाला भी खाली नहीं रहा।"

यमुनाने विनीत भावसे कहा,—"अरुण भैया भी हाथ मुंह धोकर ब्यालु कर चुके हैं।"

वृद्धाने सरस्वतीसे कहा,—"बेटी, मैं तुम्हारी मांकी उम्रकी हूं।"

सरस्वतीने उनको और कुछ कहनेका मौका न दे, उठकर कहा,—"इस झड़ी-पानीकी मौसिममें चलना चाहती है तो देर न कर मीरा।"

मीराने यमुनाकी माता और दादीको प्रणाम करके कहा,—"आप चिन्ता न कीजिये, मैं आती हुई रास्तेमें देख आई हूं, कि दो-एक तालाब बीचमें पड़ते हैं आपके इस तरफका जल अच्छा है, मांको

रास्तेमें ही ब्याल करा दूंगी । अब देर करनेसे काम नहीं चलेगा।" फिर यमुनाकी ओर देख और उससे इशारेसे बिदा-प्रार्थना करके मीरा करुणाके पास गयी और कहा,—"अब जाती हूं, तू अपने भाईसे भी नहीं मिली ?"

करुणा चुप रही—कुछ नहीं बोली ।

"अच्छा जाने दो, तुम अपना मुंह किसीको न दिखाओ । भैया आ जायं, तब देखूंगी, कि कितनी बड़ी है तू ! तब तो घर जाना ही पड़ेगा।" यह सुन कर करुणाने दोनों हाथोंसे मुंह ढांक लिया।

मीराने कुछ क्षोभ-मिश्रित हंसी हंस कर कहा,—"चलती हूं, मौसी भैयाके जेलसे छूटने पर उनके साथ फिर तुम्हारे यहां खाना खाने आऊंगी ! पर मैं यह अभीसे कहे देती हूं, कि उस वक्त यमुना-को साथ लेकर तुम्हें भी ताईजीके घर चलना पड़ेगा।"

"अच्छा, सुलच्छिनी बेटी, भगवान करें वह दिन जल्दी आये।"

सरस्वती अपनी विचित्र चरित्रा लड़कीकी ओर अवाक् होकर देखती हुई चलने लगी । जिनके साथ अभी थोड़ी देरपहले कुवाक्योंका प्रयोग कर लड़ रही थी, उन्हींसे इस समय न जाने कितने दिनके पुराने आत्मीयोंकी तरह विदा हो रही है ! करुणाको अपने साथ न ले चल सकनेका कोई क्षोभ या लज्जा मानो उसके हृदयमें जरा भी नहीं है।

गाड़ीमें बैठते ही मीराने देखा, कि करुणा दरवाजेके पास आकर जरा आड़से उन लोगोंको छिप कर देख रही है। मीराने झल्लाकर कहा,—"जाओ-जाओ, तुम्हें जड़ काट कर फूंगमें पानी देनेकी जरू-रत नहीं है !"

यह सुन कर करुणाका संकुचित शरीर और भी संकुचित हो गया। मीराने फिर गाड़ीसे उतर कर उसके कंधे पर हाथ रक्खा। करुणा रोती-रोती हिचकियां लेती हुई बोली,—"मांसे कहना—"

"हां हां, मांसे कहूंगी, कि तुम्हारा लड़का और बहू दोनों एक साथ घर आयेंगे। बहूका अकेले आना अच्छा नहीं प्रतीत होता।"

करुणा झेंप कर फिर चुप हो गयी।

"अपने भाईको प्रणाम करो और मांको प्रणाम करो।" कह कर मीराने करुणाको एक प्रकारसे खींच कर ही उनको प्रणाम कराया। फिर कुछ म्लान हंसी हंसते हुए अपनी मांके पास जा कर बैठ गयी।

गाड़ीवालेने गाड़ी हांक दी, अरुण फिर पहले ही की तरह पीछे-पीछे चलने लगा।

२०

रास्तेमें मीराने अरुणसे कहा,—"मुझे कलकत्ते मामाके घर पहुंचा कर आप मांको लेकर ताईजीके पास जाना।"

अरुण सरस्वतीके मुंहकी ओर देखने लगा।

सरस्वतीने रुष्ठ स्वरसे कहा,—"यह चाहे जो कुछ कहे, पर मुझे जेठानीजीके पास पहुंचा दो बेटा। मैं और कहीं नहीं जाना चाहती।"

अरुणने नम्र स्वरसे कहा,—"मैं आपको कलकत्ते पहुंचा दूंगा, फिर नन्नूबाबू आपको अपने साथ लेकर घर पहुंचा देंगे। उनसे यह बात तै हो चुकी है।"

सरस्वतीने कुछ देर चुप रह कर कहा,—"तुम भी घर नहीं

जाओगे, मीरा अपनी जिद पर डटी हुई है, करुणा और सनत्को तो देश-निकाला हो ही गया है। तुम सब मिल कर क्या बूढ़ी बहनको पागल करनेका विचार कर रहे हो? इतने बच्चोंको पाल-पोस कर अन्तमें और इस दुःखके समय क्या उन्हें अकेले रहना पड़ेगा? तुम लोग क्या कभी उनकी बात नहीं सोचते?"

मीराने अपनी मांकी बात काट कर कहा,—"तुम चुप रहो मां, उनकी बात तुम्हें भी नहीं सोचनी चाहिये। यदि कोई उन्हें पागल करेगा, तो तुम्हीं करोगी, जो हर वक्त इस तरह बकती रहती हो। यदि उनके पास रहती हो, तो उन्हींकी तरह चुप-चाप शान्तिपूर्वक रहना सीखो!"

"तुम्हें अब हम लोगोंकी बात नहीं सोचनी पड़ेगी।" कह कर सरस्वतीने मीराकी ओरसे मुंह फिरा लिया।

मीराने अरुणकी ओर देख कर कहा,—"आपको तो हम लोगोंसे इस तरह बहुत कुछ पानेका अभ्यास है, यह भी शायद—"

अरुणने मीराकी बातमें बाधा देकर कहा,—"लेकिन आप ही क्यों अपनी ताईको इस तरह कष्ट देना चाहती हैं? शायद, आप उनके सारे अभाव पूरे कर सकती हैं।"

प्रगल्भा वाक्पटु बालिका इस बार चुप हो गयी। अभी तक उसके अश्रुरुद्ध कण्ठकी जड़ता नष्ट नहीं हुई थी, कुछ देर बाद कहा,—"आप शायद सब बातें नहीं जानते अरुण बाबू, हम लोग तो हमेशासे ही उनको और बाबाजीको इस तरह दुःख देते चले आ रहे हैं, यह कोई नयी बात नहीं है।"

विधि-विधान

अभिमानिनी मीरा।

"पहलेकी बातोंको छोड़ दीजिये, इस समय तो वे बिलकुल अकेली हैं, बाबाजीके मर जाने और सनत्‌के जेल चले जाने पर आप ही ने उनको किसीका अभाव अनुभव नहीं होने दिया।"

"पर यह कौन कह सकता है, कि हमारा यह काम केवल उन्हीं को देख कर हुआ है ? शायद हम लोग अपने स्वार्थके लिये ही उनके पास रहतीं थीं। हम लोगोंका भी दूसरा और कोई स्थान नहीं है।"

अरुणने सिर नीचा कर लिया, मीराके इन तीक्ष्ण वाक्योंका कुछ उत्तर नहीं दिया। कुछ देर बाद मीरा ही ने फिर कहा,—"आप यह ख्याल न कीजिये, अरुण बाबू, कि मैंने आपको दुःख देनेके लिये ही यह बात कही है। मेरे मनमें ही इस तरहका द्वन्द होता रहता है। मैं यह भी जानती हूं, कि ताईजी मुझसे कितना प्रेम करती हैं, मेरे पास रहने पर वे कितनी प्रसन्न रहती हैं, फिर भी—"

"फिर क्यों आप उनको छोड़ती हैं ?"

"आप लोगोंने अपना सब कुछ क्यों छोड़ दिया है अरुण बाबू ? इस मनके द्वन्दके कारण ही तो ताईजीके स्नेहकी जो मेरी बची-खुची सम्पत्ति है, वह भी छोड़ देनेकी इच्छा हुई है !"

सरस्वती अभी तक दोनोंका वाद-विवाद चुप-चाप सुन रही थी। इस बार उन्होंने क्रोधपूर्वक कहा,—"किसके दबावसे छोड़ती है ताईको ? रहेगी कहां ? मामाके घर ? मामाको अपनी लड़की है वह तो बोर्डिङ्गमें चली गयी, जो मां-बापकी बड़ी दुलारी है। पर वह तो बीस रुपया महीना स्कालर-शिप पाती है, इससे बड़ी सहायता मिल जाती है। उसके बोर्डिङ्गका सुपरिण्टेण्डेण्ट भी उससे बहुत

स्नेह करता है। वह किसी तरह अपना खर्च चला लेती है। तुम मामाके घर पर रोटी बनाओगी या बासन मांजोगी? यह आशा नहीं करना, कि मैं वहां रहकर पढ़-लिख सकूंगी।"

मीराने शान्तभावसे माताकी ओर देख कर कहा,—"यदि ये काम भी कर लूं तो क्या दोष है, मां? करुणा दूसरेके घर धान कूट सकती है और मैं अपने मामाके घर बासन नहीं मांज सकूंगी? अरुण बाबू क्या कर रहे हैं? किस तरह अपने पढ़ने-लिखनेका खर्च चला रहे हैं, यह नहीं देखती?"

"अरुण पुरुष है, वह जो कुछ कर सकता है, तू भी वही कर सकती है?"

"कमसे कम कोशिश करके ता देखनी चाहिये। नहीं तो मामा का घर तो है ही।"

अरुणने मृदुस्वरसे कहा,—"ता आप पढ़नेके लिये ही वहां रहना चाहती हैं?"

"जिस कामके लिये हमने बाबाजीको दुःख दिया है और उनको 'गैर' की तरह छोड़ दिया था, उसको क्या किसीको मामूली बातसे अपने जीवनमेंसे निकाल कर फेंका जा सकता है, अरुण बाबू!"

"नहीं। पर यह भी तो हो सकता है, कि इस तरह न भागकर ताईजी और इलादेवीसे परामर्श कर, ताईजी की आज्ञा लेकर इला-देवीके साथ स्वच्छन्दता पूवक बोर्डिङ्गमें रहो।"

"अर्थात आप यह कहना चाहते हैं, कि सुख-सुविधा होते हुए भी म उनको क्यों नहीं इस्तेमाल करना चाहती? ताईजीको एक बार

कहते ही, वे इलाके साथ पढ़नेके लिये जरूर भेज देंगी, यह बात तो ठीक है, परन्तु आपको यह तो याद ही होगा अरुण बाबू, कि सनत् भैयाके मुकदमेमें खर्च करनेके लिये आपको बाबाकी 'देवत्र' सम्पत्ति से रुपये उधार लेने पड़े थे ? भैयाके साथ मुझे भी तो वे त्याग कर गये हैं, तब मैं ही क्यों उनकी दान की हुई वस्तुमेंसे कुछ लेना चाहूं ?"

"किन्तु आपको ताईजीका प्रेम—आप तो जानती ही हैं, कि वे ही सब कुछ हैं, फिर क्यों आप उनके स्नेहका—"

"बस ! सिर्फ यही मेरे पास त्याग करनेकी वस्तु है अरुण—बाबू ! आप अपनी विषय-सम्पत्तिका अधिकार त्याग कर महत्व दिखला सकते हैं, पर मेरे पास तो वैसी कोई वस्तु है नहीं—मेरे पास तो ताईजीका स्नेह मात्र है । मैं भी इसको त्याग करनेकी तपस्या करूंगी—आपको और करुणाकी तरह !"

अरुणने कुछ देर तक निस्तब्ध रह कर कुछ क्षुब्धस्वरमें कहा,—"लेकिन आप कितना कष्ट उठाना चाहती हैं, इसका भी कुछ पता है ? करुणा जिन लोगोंमें है, उनमें उसको दुःख है, यह तो नहीं कहा जा सकता। वह तो सरल और सुन्दर सुखसे जीवन व्यतीत कर रही है। रही मेरी बात, सो आप जानती ही हैं, कि बाबाजी मेरे खड़े होनेके लिये दो पैर जमीन तैयार कर गये हैं, इसलिये मुझे अपनी शिक्षाकी व्यवस्था करनेमें जरा भी कष्ट नहीं उठाना पड़ा। आप जिसको त्याग या महत्व कह रही हैं, उसका इस जगह कुछ भी मूल्य नहीं है ! हां, यदि कुछ है, तो यही, कि ताईजीको दुःख हो रहा है। लेकिन आपने जो संकल्प किया

है, उसमें कितने दुःख लज्जा और गौरवके बीचमें होकर आपको गुजरना पड़ेगा, इसका शायद आपने अनुमान ही नहीं किया है!"

मीराने हंसकर कहा,—"किया है अरुण बाबू, मैं इतनी नासमझ बच्ची नहीं हूं! पर फिर भी मैं उसको देखूंगी ही। उसमें थोड़ीसी इला आदिकी सहायता लेनी पड़ेगी, और बाकी देखूंगी, कि मुझमें कुछ शक्ति है या नहीं ?"

अरुणाने मीराकी ओर देखकर दृढ़ स्वरसे कहा,—"लेकिन हम आपको इतना कष्ट न उठाने देंगे, आप अपने अभिमानसे न देख सकें, पर हमारे जीवित देवता, श्री मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी आप कौन हैं, यह तो मैं जानता हूं। मेरी मातासे भी अधिक सम्माननीय ताई—जी की आप अपने सम्मानसे भी अधिक हैं। आप जानती हैं, कि आपके बाबा मुझे आपका अभिभावक बना गये है? आप इला-देवीके पास रह कर पढ़िये, आपके जो मनमें आए, सो नहीं कर सकेंगी।"

मीराने हंसते हुए कहा,—"इतने ही से आप समझ जाइये, कि बाबाजीकी सम्पत्तिके विषयमें आपकी कैसी धारणा है! ताईजी कभी अपनी 'देवत्र' सम्पत्तिसे खर्चा नहीं दे सकेंगी। उन्होंने तो अपने लड़केको छुड़ानेका खर्चा देते समय ही कह दिया था, कि इस तरह फिजूल खर्चा करनेका मुझे कुछ अधिकार नहीं है—यह तो बाबा-जीकी इच्छासे एकदम खिलाफ काम है। हां, आप अपने ऊपर दा-यित्व लेकर मेरे खर्चकी व्यवस्था कर सकते हैं, क्योंकि आप जानते हैं, कि भविष्यमें मैं ही उस सम्पत्तिका उत्तराधिकारी हूं।"

मीराकी बात सुन कर, अरुणके मुंह पर मानों प्रभात अरुणकी आभा फैल गयी। उसने कुछ उत्तेजित स्वरसे कहा,—"मैं आपके सामने सौगन्ध खाता हूं, कि आपके बाबाकी सम्पत्तिको छुए बिना ही, मैं केवल अपने सामर्थ्यसे·······"

"मुझको पढ़नेमें सहायता देंगे ? लेकिन किस लिये ? आप मेरे लिये इतने व्यस्त क्यों हो रहे हैं, जरा बतलाइये तो ?"

"यह बात तो मैं आपसे कह चुका हूं। आप मेरे जीवित देवता मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी पोती हैं !"

"लेकिन आपको यह भी ध्यान रखना चाहिये, कि आपके साथ मेरा क्या सम्बन्ध है ! मुझे मिलने वाला अधिकार आपको मिला है। आपके साथ मेरा शत्रुताका सम्बन्ध है, हिंसा-द्वेषका सम्बन्ध है और बैरका सम्बन्ध है। मैं क्या आपसे यह अनुग्रह ले सकती हूं ? दूसरी जगहसे चाहे भीख मांग लूं, पर आपकी यह दया प्राप्त करना मेरे लिये असाध्य है।"

अरुणका आरक्त मुंह देखते ही देखते राखके समान काला पड़ गया ! उसने मुंह नीचा कर लिया। मीराने विजय-गर्वसे एक बार अरुणके उस आर्त मुखकी ओर देख कर रास्तेकी ओर दृष्टि फिरा ली। उसके होठोंमें जो हंसी दिखाई दे रही थी, उसमें रक्तकी मात्रा बहुत कम थी। सरस्वती, अरुण और मीराकी बातोंके समय चुप-चाप काठ मारेसी बैठी थी, इस समय भी उसी तरह अपलक नेत्रोंसे कन्याकी ओर देखती रही।

———

२१

दो वर्ष बीत गये हैं। हेमन्तऋतुका पहला महीना समाप्त हो गया है। भट्टाचार्य महाशयके घर महीने भर तक होने वाला कार्तिकी 'नियम-सेवा'का उत्सव समाप्त हो गया है, इस समय अगहनके नवान्न भोजनकी आशासे गांवके आदमी उत्साहित हो रहे हैं। भट्टाचार्य महाशयकी ब्रह्मोत्तर जमीनसे ढेर-के-ढेर धान, भट्टाचार्यके घर आ रहे हैं, उनको देख कर लोग आनन्द-मग्न हो कर गाड़ी गिन रहे हैं। वे सब जानते हैं, कि इनमें का अधिकांश हम लोगोंके घर पहुंच जायगा—घर घर बंट जायगा।

सूर्यास्त बहुत देरसे हो चुका है—इस समय सन्ध्या है। कुछ गाड़ियां भट्टाचार्य महाशयके घरके बाहर जा कर खड़ी हुईं, पुराने नौकर हारूने आकर गाड़ी वालोंको धमकाना शुरू किया,—"बदमाशो, एकदम रात करके आए हो? इतनी रात्रिमें क्या धान तौले जाते हैं?"

एक गाड़ीवालेने असहिष्णु होकर कहा,—"अरे भाई, तो क्या करें? जब धान उठा कर रखने हो हैं, तो रात क्या और दिन क्या? तुम्हें यह तो पता नहीं है, कि रास्ता कितना है? रात-दिन बराबर चलते रहे हैं, पर यहां पहुंचनेमें फिर भी इतनी देर हो गयी। चलो, मकानका दरवाजा खोल दो, गाड़ियोंको रात भर इसी तरह रहने दो, सुबह अच्छी तरह सब धान भीतर रख देंगे।"

दरवाजा खोलते हुए भी हारूने बकना बन्द नहीं किया। कहने लगा,—"और थोड़े दिन बाद नवान्न हो जानेके बाद धान न लाए?

ये कुटेंगे कितने दिनमें ? दिन ही कितने रह गये हैं ? कोई कहने सुनने वाला नहीं है, इसलिये जो खुशीमें आता है, करते हो।"

"अरे भई, कोई कहने-सुनने वाला नहीं है, यह तो हमारी ही बदनसीबी है। यह भी जबतक जगद्धात्री माता बैठी हैं, तभी तक है, फिर हम लोगोंका क्या होगा, किसकी तावेदारी करनी पड़ेगी, हम तो इसी सोचमें मरे जा रहे हैं। नवान्नमें ऐसे कितने लगेंगे ? मोडलाने तो पहले ही एक गाड़ी भर कर भेज दी थी।" धानों परसे कपड़ा हटाते हुए एक किसानने हारूको शान्त करनेके लिये कहा।

हारूने जवाब दिया,—"हूं ! उतनेसे क्या इस घरका खर्च चल सकता है ?"

"हां भई, क्या इस बार भैया-बहन आयंगे, क्या इसीलिये इतना इन्तजाम हो रहा है ? उनके—"

एक दूसरे किसानने उसको रोक कर कहा,—"अरे भई, तुम नये आदमी हो, तुम्हें नहीं मालूम है—इस घरमें तो नवान्नके दिन हर-साल सारा गांव, भोजन करता है। अतिथि-पथिति, मांगने-तांगने वाला कोई नहीं छूटता।"

पहले किसानको अचानक कोई बात याद आ गयी। उसने कहा,—"मैदानसे हम लोगोंके साथ जो आदमी आ रहा था, वह कहां गया ? वह तो कह रहा था, मैं भट्टाचार्य महाशयके घर जाऊंगा !"

"क्या खबर कहां गया, अपना इन्तजाम वह आप करेगा, तू अपने चरखेमें तेल दे।"

सरस्वती दिया हाथमें लेकर आई और हारूसे बोली,—"अब तू अपना बकना-झकना छोड़ दे, बहनको ठाकुरजीके घरमें जानेको देर हो रही है। गाड़ीवालोंके जलपानके लिये सामान ले आ, इनको जलपान करा।"

छोटीबहूको देखकर गाड़ी वालोंने नीचे झुक कर प्रणाम किया और हाथ जोड़ उनके सामने सकुचा कर खड़े हो गये।

सरस्वतीने कहा,—"तुम लोगोंके साथ अतिथि कौन आया है? वह क्या खायगा? अपने आप बनायगा या घरमें भोजन करेगा? हारू, देख तो उसको क्या चाहिये?"

पूर्वोक्त किसान घबड़ा कर अतिथिको ढूंढनेके लिये चला।

सरस्वतीने वह आंगन पार कर भीतर पैर रखते ही देखा, कि उनके स्वर्गगत ससुरके दरवाजे पर, कोई आदमी नीचे पड़ कर प्रणाम कर रहा है! अंधेरेमें बिना पहचाने ही उसने कहा,—"वहां कौन है?"

प्रणाम करने वाला व्यक्ति उठ खड़ा हुआ। दियेकी रोशनीमें सरस्वतीने देखा, कि मैले कपड़ेसे उसका सारा शरीर ढका हुआ है, मुंह पर चारों ओर लम्बे-लम्बे बाल पड़े हुए हैं। बालोंके वजनसे सिर भी बड़ा मालूम होता है, पर उसका शरीर कृश और लम्बा है। यह देख कर सरस्वतीने कहा,—"तू अतिथि है, भाई? तो इधर—यहां क्यों आया है, बाहर जा!"

फिर भी उसको अपनी ओर आते हुए देखकर सरस्वतीने उसको कोई पागल समझा।

"बहन !" कह कर और आवाज देकर पीछे हटते ही अरुन्धतीके शरीरसे वह टकरा गयी। दूसरा शब्द कहनेसे पहले ही उसने देखा, कि उसकी जेठानीने अपने दोनों हाथ उस पागलकी ओर बढ़ा दिये हैं और रूखे-सूखे बाल वाला पागल, एकदम उनकी गोदमें लिपट गया है। अरुन्धतीके मुंहसे कोई शब्द नहीं निकला।—पागल, पागलोंकी तरह ही बोला,—"मां—मेरी मां !"

"सनत्—सनत्—सन्तू !" कहते-कहते सरस्वती वहीं, आंगनमें ही बैठ गयी। इस अप्रत्याशित आनन्दसे उसका सारा शरीर कांप रहा था। सनत् भी अपने बालोंसे भरे हुए सिरको मां की गोदमेंसे उठा कर बोला,—"चाचीजी, आप मेरी मां को छोड़ कर नहीं चली गयी थीं ?—मांके पास ही हैं ? मैं भी यही सोच रहा था, कि मीरा और आप मांको कभी अकेली नहीं छोड़ सकतीं। बहन मीरा कहां है, चची ? अच्छी तरह तो हो ?" कहते हुए सनत्‌ने मानों अनिच्छासे मांकी गोदमें से उठकर पहले तो अपनी माताके चरण छुए, फिर चचीके पैरोंमें झुकते ही, सरस्वतीने उसका सिर अपनी गोदमें ले कर रोते हुए कहा,—"मेरा और है ही कौन सनत, बहनको छोड़ कर मैं और कहां रह सकती हूं ?"

सनत्‌ने रुके हुए सांससे कहा,—"यह क्या चचीजी ? मेरी बहन ? मीरा ? कहां है वह ?"

अरुन्धतीने सनत्‌के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा,—"वह अपने मामाके घर है सनत्—पढ़ रही है। चलो, घरमें चलो।"

"फिर चचीजी ऐसी बात क्यों कह रही हैं ? सच कहो मां, बहन मीरा अच्छी तरह तो है ?"

"बलिहारी है ! छोटी बहूकी बातें तो ऐसी ही होती हैं। तुम्हारी चचीकी नाराजीसे ही मीरा पढ़ने गयी है, इसीलिये यह ऐसी बात कह रही हैं सनत्। चलो स्नान करो।"

सनत्‌ने एक आरामका निःश्वास छोड़ कर कहा,—"बाबाजीके घरमें दिया जल रहा है, उनके जीते हुए जसे धुंएंकी गन्ध आया करती थी, वैसी ही गन्ध निकल रही है मां, उस घरमें कौन है ?"

"कोई नहीं, उनकी खड़ाऊं, उनकी पूजाकी वस्तुएं, उनका विस्तरा बस यही हैं।"

सरस्वतीने फिर कहा,—"एक वर्ष ही में तो तेरे आनेकी बात थी सनत्, फिर इतनी देर क्यों हुई है ? क्या एक बार जेल जा कर भी तेरी साध नहीं मिटी थी ? जेलमें क्या कर दिया था ?"

मुंह पर फैले हुए बालोंको हाथसे पीछेकी ओर करते हुए सनत्‌ने कहा,—"जो बाहर है, भीतर भी वही है चचीजी, शायद मुझे हमेशा के लिये उसी घरमें अड्डा जमाना पड़ेगा। आप लोगोंके लिये इस बार मनमें चिन्ता हो रही थी, मांको देखनेके लिये प्राण तड़प रहे थे, इसी लिये, एक महीने तक चुप-चाप भेड़की तरह पड़ा रहा हूं। तुम लोगोंको देखे बिना, चैन नहीं पड़ती थी।"

"तेरा हम लोगोंके लिये बेचैन होना यही है ? बैठे-बिठाए जेलमें गड़बड़ करके कैदकी मियाद बढ़वा ली थी ? हां, तुम्हें यहाँसे कितनी दूर भेज दिया था ? पिताजी चले गये, उनका सोनेका संसार नष्ट-भ्रष्ट हो गया और तू इस तरह हम लोगोंकी बात सोच रहा था !"

"क्या करूं चचीजी, मैं भी तो मनुष्य ही हूं। जो लोग मेरे जैसे रास्ते पर कदम रखते हैं, उनको मेरी तरह ही काम करना पड़ता है। मैंने कोई नया काम तो किया नहीं। यदि तुम वहां होतीं, तो तुम भी यही करती।"

"क्यों तुम्हारा वह मित्र प्रमथ ? वह तो इलासे सुना है, एक वर्ष बाद ही छूट कर चला आया ?—"

"अरुन्धतीने बाधा देकर कहा,—"चल सन्टू, स्नान करके, ठाकुरजी को प्रणाम करना—"

"चलो पहले बाबाजीके घरमें जाऊंगा मां ! मालूम होता है, मानों वे इसी घरमें बैठे हैं।"

"कौन बोल रहा है, मां ? यह किसकी आवाज सुन रहा हूं ?" कहते हुए हारूने भीतर प्रवेश किया। सनत्को देख कर एक दम पागलोंकी तरह बोल उठा,—"हमारा खोया हुआ रत्न क्या आ गया है ? मेरे भैयारे !" कहते-कहते हारूने दौड़ कर दोनों हाथोंसे खींच लिया, पर दूसरे ही क्षण छोड़ कर शङ्कित भावसे उसकी ओर देखा। यह मानों वह सनत् नहीं है। उस घरके आनन्द-घन, किशोर बालक का स्वभाव, इन दो वर्षोंमें, एक प्रोढ़ युवकका स्वभाव हो गया है। आंख-मुंहमें न जाने कैसी तीव्रता है, लम्बे-लम्बे बालोंमें आंखें तारेकी तरह चमक रही हैं। शरीर दुर्बल है, पर पहलेसे बहुत लम्बा हो गया है ! यही क्या उनका सनत् है ?

हारूका संकोच देख कर इस बार सनत्ने हंस कर कहा,—"क्या हारू तुम डर गये हो ?'

हंसी तो उसी पुराने सनतूकी है ! इस बार साहस करके हारूने गद्-गद् स्वरसे कहा,—"तुम आ गये भैया ? क्या यह सच बात है ? मुझे तो विश्वास होता नहीं ।"

"क्यों विश्वास नहीं होता, मैं क्या मर गया था ? क्या मुझे भूत समझ रहे हो ? अच्छा, इधर आओ तुम्हारी गर्दन मरोड़ूं, हारू भैया !"

सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखका साथी हारू बोला,—"अब विश्वास हो गया है, भाई ! छोटी मां चल्दी उठ कर मुझे सामान निकाल कर दो, मैंने न जाने कितनी मानता मान रखी हैं । मैं मोहल्लेके सब लड़कोंको बुला लाता हूं । उनको मिठाई बांटूंगा ।"

हारूकी पीठको थप-थपाते हुए सनतूने कहा,—"आज नहीं हारू भैया, कल खिलाना-पिलाना ।"

मैंने तो न जाने कितने देवी-देवताओंका प्रसाद बोल रखा है। गांवके देवताकी खूब धूम-धामसे पूजा करनी होगी । इस वार नवान्नसे पहले सत्यनारायणकी कथा खूब धूम-धामसे होगी । हम लोग आपस में अभी कह रहे थे । तुम गाड़ीवालोंके पीछे-पीछे ही आये हो न भैया, यह कह कर कि मैं उनके यहां अतिथि बनूंगा ? अहा ! एक किसान अभी कह रहा था, कि इस साल लड़के-लड़की सब आ रहे हैं क्या ? परमात्मा, उसके मुंहमें घी-चीनी दे । आओ भैया, स्नान करो । मैं जरा उन लोगोंको यह खबर दे आऊं ।"

वृद्ध हारू मानों नवयौवन प्राप्त कर कूदता-फांदता चला गया । सनतूने उसका यह उछ्वास देख कर हंसते हुए कहा,—"अरुण भैया कहां है मां ? उनको—"

पुत्रके मुखकी ओर देख कर अरुन्धतीने कहा,—"अरुण यहां नहीं रहता। वह न्यायशास्त्रकी परीक्षा दे चुका है, अभी और पढ़ रहा है—कलकत्ते रहता है।"

"तुम्हारे पास न रहकर वह उपाधिके लिये मारा-मारा फिर रहा है? क्या होगा उपाधि लेकर और परीक्षा देकर? उसको तुम लोग मेरे जेल जानेकी खबर पाकर यहां ले आए हो न?"

अरुन्धतीने उत्तर नहीं दिया। सरस्वतीने कहा,—"बेटा, पहले यह वेश उतारो, फिर सब कहना-सुनना।"

सनत्‌ने उत्कण्ठित होकर हंसते हुए कहा,—"चचीजी, आज क्या मुझे भूख-प्यास है? तुम लोगोंकी गोदमें आ गया हूं, घर आ गया हूं, बाबाजी तो हैं नहीं, पर भाई-बहनोंको भी नहीं देख रहा हूं, इससे क्या मेरा मन खानेमें लगेगा? और इस वेशको देख कर तुम्हें कष्ट क्यों होता है? यह कैदियोंकी पोशाक ही तो हमारी अपनी पोशाक है, हम तो जेलखानेके कैदी हैं!" फिर उसी वक्त दूसरा प्रसङ्ग चला कर कहा,—"पहले मीराकी बात सुनाओ। चची-मां, यहीं बैठ जाओ, पहले सब सुन लूं। करुणाको बुलाओ।" कह कर सनत्‌ने मांके गलेमें दोनों हाथ डाल दिये। अरुन्धती बैठ गयी। सनत् उनके पास ही बैठ गया।

सरस्वतीने कुछ उद्विग्न होकर कहा,—"पहले नहा-खालो सन्टू, बहन तुम भी बैठ गयी?"

"नहीं-नहीं, तुम लोग न बैठो, पहले मुझसे सब बातें कह दो। मेरे भाई-बहन कहां है?"

सरस्वती फिर भी कुछ नहीं कह सकी।

चचीको चुप देख कर सनत्‌ने मांके मुंहकी ओर देखा। अरुन्धतीने इस बार स्थिर कण्ठसे कहा,—"करुणा वहांसे अभी आई नहीं है। मीरा, छोटीबहू और अरुण उसको लेने गये थे, पर खाली लौट आये हैं। जब प्रमथ जेलसे छूट कर आया था, तब उसने कहा था, चलो मैं तुम्हें पहुंचा दूं, पर वह तब भी नहीं आई।"

क्यों तुम्हारे बुलाने पर भी करुणा नहीं आई? उस तिनकौड़ी भट्टाचार्यके लड़केका डर क्या अभी उसके दिलसे दूर नहीं हुआ?"

सनत्‌के हंसते हुए मुंहकी ओर देखकर अरुन्धतीके कुछ कहनेसे पहले ही सरस्वतीने कुछ तीक्ष्ण स्वरसे कहा,—"क्या करुणा इसी डरसे घरसे भाग गयी थी? वह वैसी लड़की नहीं है। यदि उसको कोई काट कर फेंक देता, तो भी वह कुछ न बोलती। यह काम तुम्हारा और तुम्हारी उद्दण्ड बहनका है। इस लिये वह भी अपने मामाके घर दासी बन कर पड़ रही है। मामाके घरका काम-काज और कई लड़कियोंको पढ़ा कर उनकी खुशामद करके एक परीक्षा दी है और भी एक परीक्षा देनेकी तैयारी कर रही है। मुझसे तो उसके यह काम देखे नहीं जाते, इस लिये बहनके पास रह कर भूलनेका प्रयत्न कर रही हूं। जबतक बहन हैं, तब तक तो यहां हूं, पर फिर जो ये लोग करेंगे, मैं भी वहीं करूंगी! और तुम्हारी करुणा भी—उसने भी यही निश्चय कर रखा है, कि जब तक तुम जेलसे छूट कर नहीं आते, तबतक जहां तुम रख गये थे, वहीं रहेगी! वह भी धान कूटती है, चरखा कातती है! सुना है, उसीमें उसको सुख मिलता है!"

सरस्वती एक निःश्वासमें जितना कह सकती थी, कह कर चुप हो गयी। सनत् भी मीराके समाचारोंके साथ अपनी चचीकी आत्म-कथा सुनते-सुनते उनके मुंहकी ओर देख रहा था। इस समय करुणा-की बात सुन कर मुंह नीचा कर लिया और उसका शीर्ण मुख आरक्त हो उठा। मांकी ओर देखकर सनत्ने अस्फुट कंठसे कहा,—"तुम्हारे बुलानेसे भी नहीं आई?—यह क्या सच है मां?"

अरुन्धतीने पुत्रके मुंहकी ओर देख कर कहा,—"और भी एक बाधा है सनत् जिसके लिये वह आई नहीं!"

"क्या कारण है मां?"

सरस्वती फिर सनत्से नहाने-धोनेके लिये अनुरोध करना चाहती थी, पर उसकी ओर ध्यान न दे, अरुन्धतीने अपने अम्लान स्थिर नेत्रोंसे पुत्रकी ओर देख कर आकम्पित कण्ठसे कहा,—"पिताजी, मीरा और तुम्हें उत्तराधिकारी न बना अपनी समस्त देवत्र सम्पत्ति अरुण और करुणाको दे गये हैं।"

सनत् कुछ विस्मित हुआ, पर फिर कुछ सोच कर बोला,—"बहनको—मीराको बाबाजी त्याज्य कर गये हैं? उनकी मृत्युके समय मीराने भी क्या कोई अपराध किया था, मेरी तरह?"

"मीरा उस समय आ गयी थी, उनका आशीर्वाद ले चुकी थी, पर तुम सब लोगोंके जानेके बाद ही उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति 'देवत्र' कर दी। और मुझे उन्होंने कुल सम्पत्तिका भार सौंप दिया था।"

"फिर?—उन्होंने ऐसा क्यों किया? तुम जितने दिन हो मां, उतने दिन तक उन्हें इतना अभिमान नहीं करना चाहिये था? मीरा

किस लिये इतना कष्ट उठा रही है ? अरुण भैया ऐसे क्यों हो गये हैं ? और चचीजी तो तुम्हें छोड़कर नहीं चली गयीं ? ये तो उनकी तरह पागल नहीं हुईं ?"

सरस्वती सनत्‌की बातसे प्रसन्न होकर बोली,—"मैं बूढ़ी हो गयी हूं और उनका खून अभी ताजा है, बेटा !"

सनत्‌ने हो-हो करके जोरसे हंसते हुए कहा,—"तो मेरी तुमसे भी अधिक उन्नति हो गयी है चची, मैंतो तुम्हारा एकदम बूढ़ा बाबा हो गया हूं । मुझे तो इन लोगोंके काण्ड देख कर बड़े जोरकी हंसी आ रही है । कब, कौन किसकी सम्पत्ति पायेगा, यह सोच कर लोग अभिमान करके घर छोड़ भागे हैं औरअपना मुंह नहीं दिखाते ! वाह यह तो बड़ा अच्छा मजा है ! देवत्र बुरा क्या है ? बड़ी सुन्दर बात है । बाबाजी, अरुण भैयाको भगवान्‌के नाम उत्सर्ग करके बहुत अच्छा कर गये हैं । पर मीरा ? मीरा तो बचपनसे ही अभिमानिनी है मां, पर तुम लोगोंके हृदयमें मनस्ताप होते हुए भी एक बहुत बड़ा काम हो गया है मां, वह तो तुम देख ही रही हो । उनकी इस फटकारसे उनके सब बच्चे कमर बाँध कर आदमी होनेका प्रयत्न करने लगे हैं । इतने दिनतक सिर्फ मैंने ही उनके इस आशीर्वादका अंश नहीं पाया ! लेकिन आज पा गया । क्या मुझे भी वे कुछ दे गये हैं ? उठो चचीजी, चलो स्नान करने चलें, मां भोजन परोसो, हारू भैया नवान्नकी बात कह रहा था न ? इस बार सब इकठ्टे होकर नवान्न करेंगे ! मैं कल ही मीरा और करुणाको लेने जाऊंगा और अरुण भैया तो खबर पाते ही आ पहुंचेंगे ।

२२

चन्द्रनाथ चक्रवर्तीका मकान बीडन स्ट्रीटके पास ही है। उनके चार पुत्र इस समय उनकी सम्पत्तिके अधिकारी हैं। बड़े और मँझले पुत्र कलकत्तेमें ही रहते हैं। मीरा अभी तक इन्हींके घरमें रहती है। परन्तु जबतक उसके बाबा और नाना जीवित थे, तबतक आदरके साथ प्रतिपालित होती थी और आजकल उससे बिलकुल उलटा हिसाब हो रहा है।

अगहनका महीना है और शामका वक्त। पांच बजते ही कलकत्तेके मकानोंमें अंधेरा हो गया है। आकाश और हवा धूमाच्छन्न हो रहे हैं। जिनके शरीर स्वस्थ नहीं हैं, हवा उनको छातीमें धौंकनीसी लग रही है। रसोई-घरकी ओरका व्यापार और भी गुरुतर है। दो-तीन चूल्होंके धुएंसे अपरिष्कृत घर और आँगन एकदम बैलून-यन्त्रकी तरह हो उठा है, मानों अभी उड़नेकी तैयारी कर रहा है। कलके नीचे गीले कपड़ोंका ढेर पड़ा है, आंगनमें जूठे बसनोंका ढेर लगा है! भोजन बनानेवाला उड़िया ब्राह्मण, यदि रसोईका शीघ्र ही इन्तजाम पूरा करके न दे गया तो, बच्चोंको आठ बजेके भीतर भोजन न दे सकेगा और ऐसी असुविधा और दिक्कतका काम वह बहुत शीघ्र छोड़ कर चला जायगा, इसका ऐलान कर रहा है। नौकर नलसे जल भरता हुआ कह रहा है, कि झीको बुखार हो गया है, बर्तन कौन मांजेगा? मेरा तो अभी जल भरना और मसाला आदि कूटना-पीसना बाकी है। नयी गृहणी 'भण्डारके घर'में बासन न पाकर बड़े जोरसे उसको फटकार रही हैं। ऊपर बरामदेमें खड़ी हुई बिचली

बहू, अभीतक बच्चोंके लिये भोजन नहीं बना है, यह अपराध लगाकर नौकर और ब्राह्मण दोनोंका तिरस्कार कर रही हैं और उम्रमें बहुत छोटी, रिस्तेमें बड़ी जेठानीके ऊपर भी एक-दो टिप्पणी कर रही हैं। यह सुनकर जेठानी क्रुद्ध होकर बोली,—"भोजन तैयार होना तो दूर रहा, नलके नीचे अभीतक कपड़े पड़े हैं और चौकमें बासन पड़े हैं। झीको बुखार हो गया है।"

बिचली बहूने झंकारके साथ कहा,—"क्यों नौकर और ब्राह्मणने कोई कुली बुलाकर ये काम नहीं करा लिये ?"

ब्राह्मणने उत्तर दिया,—"हमें अपने कामसे तो सिर उठानेकी फुरसत है ही नहीं, दूसरेके कामको देखनेका समय कहां है ? जब वह काम झीका है, तो उसने वक्त रहते क्यों नहीं कह दिया, कि मैं नहीं आऊंगी ?" बस, उसकी जवाबदेही खतम हो गयी।

अब गृहणीके आगे यह समस्या आई, कि आजका काम कैसे पूरा हो ? वह बेचारी उद्विग्न हो उठीं। देवरानी जेठानी दोनों मिल-कर ब्राह्मणसे कुली लानेके लिये कहने लगीं। लेकिन ब्राह्मणने कहा,—'मेरा चूल्हा जलाया जा रहा है, उनमेंसे कोई यहां आएं तो मैं कुली खोजनेके लिये जा सकता हूं।' नौकरने फिर जल भरनेका मामला सामने रखा, वह कुली बुलानेके लिये चला गया, तो जल नहीं भरा जायगा। ब्राह्मण अभी मसाला मांगेगा, बहुओंमेंसे कोई इस कामका जिम्मा लें तो मैं जा सकता हूं।

बहुएं समझ गयीं, कि यदि इस समय इनमेंसे किसीको छुट्टी दी तो ये खूब घूम-फिर कर आयेंगे। उन्होंने कहा,—"जो-जो काम

कर रहा है, वह वही करता रहे, वे और कोई इन्तजाम करती हैं।" कह तो दिया, पर क्या इन्तजाम करेंगी, यह समझमें नहीं आता था और शामके वक्त अपना बनाव-शृङ्गार कर लेनेके बाद रसोई-घरमें जाना भी उनके लिये एक बहुत कठिन काम था।

लेकिन शीघ्र ही उपाय हो गया। मीरा कालेजसे आकर अपनी एक सहपाठिनके भाई-बहनोंको जैसे रोज पढ़ाने जाया करती थी, आज भी वैसे ही पढ़ाने गयी थी, वह पढ़ा कर आ गयी। यहां आकर वह अपनी मामी और नौकरोंकी बात सुन कर सब मामला समझ गयी। उसने नौकरके हाथसे बाल्टी खींचकर कहा,—"ला जल भरने और मसाला पीसनेका काम मैं कर लूंगी, तू बासन मांजनेके लिये आदमी बुला ला।"

यह सुन कर बड़ी मामी चिल्ला कर कहने लगी,—"तू भाई, स्कूलके कपड़ोंसे भोजनके जलको न छूना! तुम्हारा स्कूल तो म्लेच्छोंका है! ब्राह्म, कृश्चियन, मुसलमान सभीकी लड़कियां पढ़ती हैं, कौन बचा हुआ है। उनकी छाया—"

"मामीजी, मैं तो कपड़े बदल चुकी हूं!"

"धोती ही बदल दी है, पर सेमीज और पेटीकोट तो वे ही हैं!"

मीराने निराश हो चारों ओर देख कर कहा,—"अच्छा तो मुझे तुम अपना कोई धुला हुआ कुर्ता दो, मैं रसोई-घरमें जाती हूं, देखो-"

बड़ी मामीने और भी जोरसे चिल्ला कर कहा,—"बिना नहाये रसोई-घरमें चली जायेंगी?"

मीराने एकबार चकित होकर ब्राह्मण और नौकरके मैले स्याह कपड़ोंकी ओर देखा, फिर चुप-चाप चौकमें पड़े हुए बासनोंके पास बैठ गयी।

"रामदीन, थोड़ीसी राख और पत्ते तो ला दो।" यह कह कर मीरा घस-घस शब्दसे बासनोंका ढेर मांजने लगी।

मामीने कुछ देर चुप-चाप खड़ी रहकर अन्तमें नौकरसे कहा,— "आंगनमें एक लालटैन रख दे, बर्तनोंमें स्याही रह जायगी, और कल सुबह तक यदि बर्तन मांजनेवाले आदमीको न लाये तो देखना क्या होगा।"

इस तरह शासन करनेके बाद दोनों मामी, अपनी शर्म दूर करने के लिये भीतर चली गयीं। ऊपर जाकर बिचली मामी अपने लड़के-को खिलानेवाले नौकरकी गोदसे बच्चा लेकर दूध पिलाने लगी और उससे नलके नीचे पड़े हुए कपड़े धोनेको कहा।

मीराने अपनी मामीकी बात सुनकर कहा,—"इस जाड़ेकी रात-में इसके कपड़े भिगवानेकी जरूरत नहीं है। मँझलीमामी, एक ही आदमीको काम करने दो। मैं तो अब नहाऊंगी ही, थोड़ी ही देरमें सब निचोड़ कर रख दूंगी।"

नौकर मलिकिनकी गोदसे बच्चेको स्नेहपूर्वक लेकर इस विपत्तिसे उद्धार पा, एक प्रकारसे कूदता हुआ चला गया। मँझलीमामीकी बड़ी लड़कियां ऊपरसे झांक कर और मीराको बर्तन मांजते हुए देख कर बोली,—"मीरा बहन, रोज-रोज ऐसा ही हुआ करेगा क्या? हम लोगोंको अब पढ़नेकी जरूरत नहीं है। तुम रोज बर्तन मांजने

और मसाला पीसने लगी ? वाह, यह तो बड़ा मजा है !" फिर अपनी मांकी ओर घूम कर दोनों बहनोंने रोना शुरू करते हुए कहा,—"मां, दस-बारह दिन बाद हमारी परीक्षा है। हम लोगोंके लिये एक अलग मास्टर रख दो।"

मँझली बहूने मुंह भारी करके कहा,—"आज कल इस घरमें रोज यही होता है ! प्रतिदिन नौकरोंको बुखार चढ़ जाता है। अच्छी तरहसे लड़कियोंका पढ़ना भी नहीं होता। इला क्या ऐसे ही बोर्डिङ्ग में गयी है ?"

बड़ीबहूने तीव्र कण्ठसे कहा,—"बड़ा भारी काम किया है ! मानों सभी लड़कियां इलाकी तरह स्वाधीन होती हैं। अब तो लड़-कियोंका विवाह होना और उनके घर-बारका काम देखने-भालनेकी प्रथा ही उठ जायगी। रहेगा सिर्फ पुरुषोंकी तरह पढ़ना-लिखना। इसीलिये, तो घर-बार नष्ट होते चले जा रहे हैं।"

मँझली बहू, विशेष लड़ाई-झगड़ा पसन्द न करती थी। उसने जेठानीकी बातके उत्तरमें शान्त कण्ठसे कहा,—"विवाह क्यों नहीं किया जायगा, घरका काम-काज क्यों नहीं सिखाया जायगा, उसके लिये तो सारा जीवन ही पड़ा हुआ है। इस समय जो कुछ पढ़ना-लिखना हो जायगा, वही तो लड़कियोंकी सम्पत्ति होगा ? जबतक माता-पिता विवाह नहीं करते, तब तक लड़कियोंके पढ़नेमें क्या हर्ज है ?"

बड़ीबहूने गरम होकर कहा,—"क्यों, क्या विवाह होनेके बाद लड़कियां लिख-पढ़ नहीं सकतीं ? लड़कीको इतनी बड़ी न कर यदि

पहले विवाह करके उनको पढ़ाया-लिखाया जाय, तो क्या काम नहीं चल सकता ? बहुतसे आदमी न जाने कैसी बात कहा करते हैं। इन्हें न जाने—"

मँझली बहूने हंस कर कहा,—"बहन, कहना ही कहना है ! किस लड़केने अपनी बहूको लिखना-पढ़ना सिखाया है, ऐसे कितने दृष्टान्त हैं ? यही देखो न, हमारे ससुर लिखने-पढ़नेके इतने पक्षपाती थे, मैंने और बड़ी बहनने कितना लिखना-पढ़ना सीखा था ? बहुओं-की तो सभी जगह एकसी हालत है ! बाहर लोग जितने ज्यादह लेक्चर झाड़ते हैं, उनके घरमें बहुओंकी हालत उतनी ही अधिक खराब होती है ! हां, घरकी लड़कियोंको थोड़ी बहुत स्वतन्त्रता है। बहुओंकी तो सभी जगह एकसी दशा है। हां, बहुओंके ऊपर यदि सास-ससुर न हों और पति लिखने-पढ़नेका पक्षपाती हो, तो कुछ हो सकता है। इलाके विवाहके लिये इस साल जैसी कोशिश कर रहे हैं, यदि दो वर्ष और रुके तो बस इलाने बी० ए० पास कर लिया ! और मीरा का इस तरह कबतक काम चलेगा, इस बेचारी दूसरेकी लड़कीकी क्या हालत होगी—"

बड़ीबहूने तानेके तौर पर कहा,—"तुम्हारे बापका घर तो खूब शिक्षित है बहू ! मीराका विवाह तो तुम्हारे भाईके साथ करना चाहते थे। इला ही गरीबकी लड़की है, मीरा तो उनको पसन्द आ गयी थी ! फिर अपने भाईके साथ इसका विवाह क्यों नहीं करा देती ? मीराका पढ़ना-लिखना भी होता रहेगा और ये सब झगड़े भी नहीं होंगे।"

"मझलीबहू जेठानीका ताना समझ गयी। उसने हंसते हुए कहा,—

"अपने घरकी बहूको वे भी कितना पढ़ाएं-लिखायेंगे, यह बात मैं भी नहीं कह सकती। और एम० ए० पास लड़केके साथ अपनी लड़कीका विवाह करनेमें क्या कुछ भी खर्च न किया जायगा। पुराने जमानेकी तरह 'पांच सुपारी' देकर विवाह आजकल नहीं हो सकता। वह लड़का तो विलायत जायगा! इलाके साथ तो उसकी अच्छी जोड़ी मिल जाती। विद्यामें, बुद्धिमें, रूप-गुणमें—"

"सिर्फ धन ही नहीं मिला! एक लड़कीके लिये तो वे वैसी झंझटमें पड़ नहीं सकते। तुम लोग यही समझ रहे थे, कि मीराके बाबा, उसको न जाने कितनी सम्पत्ति दे जायेंगे—इतने दिनसे यही इन्तजार था! पर अब—"

"चचीजो, मीरा कहां है?" दोनोंने ऊपर आंख उठा कर देखा कि इला खड़ी है।

"यहीं है मीरा,—मीरा! मीरा! इला आई है, जल्दी आ!" यह कह कर मँझलीबहू, मीरासे बर्तन मंजवानेकी शर्मको उतारनेकी कोशिश करने लगी।

लेकिन इला उनकी बातोंमें नहीं आई। उसने बरामदेका रेलिंग पकड़ नीचे देख कर अपनी विमातासे कहा,—"मीराकी क्या बात हो रही थी मां!"

बड़ीबहू, मँझली बहूकी तरफ सब दोष धकानेका प्रयत्न न करती हुई सीधी तरह सब बातें कहने लगी।

इलाने आंगनमें बैठी हुई मीराकी ओर और उसके गीले कपड़ोंकी ओर देख कर विमातासे कहा,—"तो क्या आज मीराकी यह दशा होती मां!"

और बात न बढ़ा कर इला, मीराके कमरेमें जाकर बैठ गयी। मीरा भी कुछ देर बाद अपना काम समाप्त करके वहां पहुंच गयी। काम करनेकी जल्दीमें उसके कपड़े भीग गये थे। वह एक सूखे कपड़ेसे अपना शरीर पोंछती हुई बोली,—"मुझे क्या बहुत देर हो गयी, इला बहन ? और थोड़ी देर बैठ सकोगी न ? आज तुम्हें पढ़ाना तो नहीं है ?"

"नहीं ! मीरा, मेरी एक प्रार्थना सुनो, मेरे पास चलो, जिस तरह भी हो। हम तुम मिल कर अपना खर्च चला लेंगी। इस तरह क्या तुम्हारा पढ़ना हो सकेगा ? और उस पर भी यह परिश्रम ! ओह !" मीराने आंख उठा कर देखा, कि इलाके नेत्रोंसे टप्-टप् करके आंसू गिर रहे हैं।

मीराने शान्तिपूर्ण निःश्वास छोड़ कर कहा,—"मुझे इसमें कोई कष्ट नहीं हुआ और फिर प्रतिदिन थोड़े ही इतना काम करना पड़ता है ? यह तो एक समयका फेर है ! प्रतिदिन अपना काम पूरा करके नीहारके घर पढ़ाने जाना पड़ता है, घर आकर टूनी-मणिको पढ़ाना पड़ता है। किसी-किसी दिन मुझे यही अखरता है। बर्तन मांजते और कपड़े धोते हुए अच्छा आनन्द आ गया था बहन, आज तो उनको पढ़ाना नहीं पड़ेगा, आओ, थोड़ी देर तुमसे बात-चीत करूं।"

"कुछ खाया है ?"

"निहारबाला, चाय पिलाये बिना तो छोड़ती नहीं ! इत्तिफाकसे बहन, तुमने मेरा यह काम लगा दिया था, नहीं तो मेरा पढ़ना कैसे हो सकता था ? बेचारे घर पहुंचानेके लिये गाड़ी भेजते हैं ! सचमुच ये हैं बड़े भले आदमी।"

इलाने दोनों हाथोंसे मीराको अपने पास खींच लिया। उसे पहले समयको सब लोगोंसे सदा आदर पानेवाली मीरा याद आ रही थी! मीराके कंधे पर अपना मुंह रख कर इलाने कहा,—"चलो भई, तुम मेरे पास चलो।"

"फिर वही बात? स्कालर-शिपके रुपयों और एक लड़कीको पढ़ा कर तुम अपना खर्च चला रही हो! घरमें रह कर पढ़ना नहीं होता, इस लिये बोर्डिंगमें जाकर रही—इसी लिये मामा-मामीने खर्चा देना बन्द कर दिया है! अब यदि मुझे भी अपने सिर पर रख लोगी, तो फिर कैसे पढ़ो-लिखोगी? मैं सच कहती हूं, मुझे कुछ कष्ट नहीं है। रातको सोते ही सारी थकावट मिट जाती है।"

दोनों हाथोंसे मीराका मुंह ऊपर उठा कर इलाने कहा,—"इस समय मेरे पास आइना होता, तो दिखाती, कि तुम दिन पर दिन कैसी हुई जा रही हो! इस बार तो और भी अधिक कमजोर देख रही हूं! मैं अब तुम्हारी बात नहीं सुनूंगी। तुम्हारी ताईजीको अभी मैं तेरी सब बातें खोल कर लिखूंगी। वे नहीं जानतीं, कि तेरा क्या हाल हो रहा है, नहीं तो कुछ न कुछ इन्तजाम जरूर करतीं। चल तू मेरे पास, मैं बड़ी बुआको चिट्ठी लिखूंगी।"

मीराने उसके मुंह पर हाथ धर कर कहा,—"मैं यदि बाबाजीकी दान की हुई सम्पत्तिमेंसे कुछ लूंगी, तभी तो तुम चिट्ठी लिखोगी? मैं यहां बड़े आनन्दमें हूं, उन्हें व्यर्थ क्यों कष्ट पहुंचाती हो बहन! मुझे और किसी बातका कष्ट नहीं होता, हां, यदि सुबह भोजन न मिले और कालेजकी गाड़ी चले जानेके डरसे बिना खाये ही चली

जाती हूं, तो उस दिन तकलीफ अवश्य होती है, पर वह भी अधिक नहीं। मैं मँझली मामीकी लड़कियोंको पढ़ाती हूं, इस लिये वे कुछ मेरा ध्यान रखती हैं। उनकी लड़कियां भी स्कूल जाती हैं उनके साथ ही साथ मेरा काम भी हो जाता है। बड़ी मामी न अपने बच्चोंके पढ़नेके ऊपर ध्यान रखती हैं, न दूसरोंके बच्चोंके ऊपर। वे तो सिर्फ इसी बातकी आलोचना करती रहती हैं, कि इस घरमें इतनी बड़ी लड़कियोंका विवाह न कर उनको कुमारी रखे हुए हैं। हां, आज मैंने एक बात और सुनी है। बड़े मामा तुम्हारे विवाहकी तैयारी कर रहे हैं। तुम्हें पता है, इस बातका ? यदि तेरा विवाह हो गया तो मैं कहां जाऊंगी, क्या करूंगी ?"

इलाने हंस कर कहा,—"मैं पिताजीको समझा दूंगी, कि जब उन्होंने मुझे इतने दिन तक पढ़ाया है, तो दो वर्ष और पढ़ने दें— मैं—"

"मीरा—मीरा—! देख कौन आया है, आकर देख, मीरा !" अपनी मँझली मामीके चिल्लानेसे विचलित होकर मीरा अपने कमरेसे बाहर निकली; उसके साथ ही इला भी आ गयी थी। बरामदेकी उज्ज्वल बिजलीकी रोशनीमें दोनोंने देखा, कि एक शीर्ण देह, लम्बे-लम्बे बालोंमें दो उज्ज्वल नेत्र उनके सामने हैं। "भैया-भैया !" कह कर मीरा सनतके पास जाकर उसकी गोदमें गिर पड़ी।

———

२३

"अरुण, भाई, तुमने मीराके दौरात्म्यसे घर छोड़ दिया? वाह, यह तो बड़ा मजा है! कष्ट उठानेमें तो तुमने ग़ज़ब ढा दिया है, कैसा सुन्दर चेहरा हो रहा है! उधर मीरा भी मरीसी हो रही है। हां, यह थोड़ीसी प्रसन्नताकी बात है, कि तुम लोगोंको दुःख-कष्ट सहनेका अभ्यास हो गया है। इसमें भगवान्‌ने बस यही सान्त्वनाका मसाला दिया है, क्यों ठीक है न?"

अरुणने सनत्‌के उस शीर्णोज्वल मुखकी ओर देख कर स्निग्ध स्वरसे कहा,—"भाई, मेरा और करुणाका जीवन तो इससे भी अधिक सैकड़ों गुना बुरी अवस्थाकी ओर जानेवाला था। जिस देवताने हमको वैसी बुरी अवस्थासे खींच कर ऊपर उठा दिया था, उन्होंने ही फिर उनका स्वभाव देख कर कुछ नीचे भी गिरा दिया है, इस उपकारके लिये तो उनका सम्मान ही करना चाहिये! पर यदि हो सके तो मीराको अपने साथ ले जाओ। इलादेवीसे उस दिन जो बात सुनी है—"

"उसको अपने साथ क्यों ले जाऊं? वह पढ़ रही है, पढ़ने दो। थोड़ासा कष्ट होता है, पर इस तरह स्वावलम्बनसे अपने पैरों खड़े होकर यदि इलाकी तरह वह भी पढ़ना चाहती है, तो पढ़ने दो, पर करुणाके विषयमें ही कुछ थोड़ीसी मुश्किल है। चचीजी कहती हैं, कि उन्होंने गांववालोंसे कह दिया है, कि करुणाका विवाह हो गया है! अब उन्हें, गांववालोंके सामने झूठा न बनना पड़े। पहले तो प्रमथ राजी हो गया था, पर अब जाकर मैंने उससे विवाहके लिये

कहा, तो वह न जाने क्या-क्या कहने लगा ! उसकी माँ और बहन भी वही बात कह कर इन्कार करती हैं। दुष्टा मीरा यह सब बीज बो आई है ! करुणा तो सीधी तरहसे मेरे सामने ही नहीं आई, मैं उसके पास गया, तो मुंह ढांक कर रोने लगी। बड़ी मुश्किलसे लाकर उसको मीराके पास रखा है। अब मैं क्या करूं, कुछ परामर्श दो।"

"भाई सनत्, मैं यह तो अच्छी तरह समझता हूं, कि उसको घर ले जाकर तुम लोगोंको कुछ झंझटमें पड़ना पड़ेगा। वह जैसे प्रमथके घर थी, उसे वहीं क्यों न रहने दिया ? प्रमथकी माँ-बहन उससे जैसा स्नेह करती हैं,—"

"अरुण भाई, तुम क्या कह रहे हो ? क्या तुम यह भूले जा रहे हो कि करुणा बाबाजोकी आधी सम्पत्तिकी अधिकारिणी है ? वह उन के 'देवत्र' को सार्थक करेगी, मैं उसे दूसरोंके घर छोड़ सकता हूं ? और तुम अरुण भैया ! तुम इस तरह भीख मांग कर, कुलीकी तरह मेहनत करके,—"

"सनत्, यदि तुम मुझे अपना भाई समझते हो, तो मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करो—हमारे इस परम और चरम दुर्भाग्यकी बात फिर कभी मेरे सामने न उठाना।"

सनत्ने अरुणके मुंहकी ओर देखा। वह आरक्त मुंह एकदम लाल हो गया था। नेत्र निष्प्रभ और जमीनकी ओर थे। सनत्ने आवेगपूर्वक कहा,—"क्यों भैया, तुम इतने दुःखित क्यों होते हो ? बाबा यह अच्छी तरह समझ गये थे, कि हम लोगोंसे उनका 'देवत्र'

नहीं चल सकता, तुम्हीं उसके उपयुक्त अधिकारी हो। तुम उनकी इच्छाकी अवहेलना करके पाप कर रहे हो भाई! अकेली माँके ऊपर सारा बोझ डाल रखा है। और मैंने करुणाकी जैसी व्यवस्था की है, उसके अनुसार उसका भी तो कोई उपाय होना चाहिये। जिस कामके लिये मैं करुणाको उनके पाससे लेकर भागा था, उसमें भी मैं सफल नहीं हूंगा, बाबाजी इस बातको पहले ही समझ गये थे। मीरा अपने भाईके किये हुए पापका प्रायश्चित्त कर रही है। मेरे कारणसे ही वह इस तरह अपने अधिकारसे वंचित हुई है, पर मैं यह निश्चित रूपसे कह सकता हूं, कि वह करुणाको उसका प्राप्य अधिकार देनेमें कभी दुखी या क्षुण्ण नहीं होगी। मेरी बहन इतनी नीच नहीं है।”

अरुणने सनत्‌को रोक कर हृदयमें छिपे हुए बाष्प-समाच्छन्न स्वर से कहा,—“सनत, तुम लोग देवताकी सन्तान हो, इसलिये तुम भी देवता हो, क्या तुम मुझे भी वैसा ही समझ कर समझा रहे हो? मैं क्या कभी तुम्हारी क्षुण्णताकी आशङ्का करता हूं? नहीं कभी नहीं। मैं तो सिर्फ तुम्हारे त्यागका थोड़ासा अंश लेना चाहता हूं। तुम लोग जो करते हो, मैं भी वही करता हूं, इसमें मुझे कुछ शान्ति मिलती है। तुम ताईजीकी गोदमें नहीं हो, तो मैं भी वहां रह कर सुख भोग नहीं करना चाहता—मुझसे यह होता ही नहीं है भाई! तुम लोग—”

“मैंने जिस उद्देश्यसे जेल भोगी है, वह तो तुम जानते ही हो भाई, आशीर्वाद दो, यदि देशके लिये फिर आवश्यकता पड़े तो—”

“हाँ भाई, मैं हृदयसे आशीर्वाद देता हूं।” कह कर अरुणने

सनत्‌को छातीसे लगा लिया। सनत्‌ने उसकी छाती पर सिर रखे हुए हंस कर कहा,—"और मेरी बहन भी बचपनसे वैसी ही लाड़िली है—सनतकी है ! वह कहती है, कि 'बाबाकी दान की हुई सम्पत्ति में हम लोग साझोदार बनेंगे—क्या हम इतने नीच आदमी हैं ?" चचीजीसे सुना है, कि मीराने प्रतिज्ञा कर रखी है, कि हम दोनों भाई-बहन मजदूरी करके खायंगे। खैर, इन बातोंको रहने दो, अब करुणाका क्या किया जाय, कुछ सलाह दो अरुण भाई।"

अरुणने स्तब्ध भावसे सनत्‌की बातें सुनीं। कुछ देर बाद अपने उस विवर्ण मुंहसे सनतकी ओर देख कर मृदु स्वरसे कहने लगा,—"तुम्हें याद है सनत, तुमने मुझे नौकौड़ी भट्टाचार्यके लड़केके साथ करुणाका विवाह करनेमें सम्मति देते हुए देख कर मेरा तिरस्कार किया था ? यद्यपि ताईजीने पहले मुझसे वह बात एक बार भी नहीं कही थी, पर यदि कहतीं, तो मैं अवश्य अपनी सम्मति दे देता। करुणाका जीवन कितना तुच्छ है—और तुच्छसे भी तुच्छ मेरा जीवन है—जिससे हमारे द्वारा तुम्हारे घरमें अशान्ति आ गयी है ! तुम्हें विचलित करनेके लिये ही तुम्हारी माँने उस दिन नौकौड़ी भट्टाचार्य के लड़केके साथ करुणाका विवाह करनेकी बात कही थी, उसीके कारण तुम करुणाको लेकर चले आये थे। तुम्हारे चले आनेसे ही बाबाजीने अपनी सम्पत्तिकी ऐसी व्यवस्था की है ! मीरा और उस की माँ कैसे असङ्गत प्रस्तावसे दुखी होकर घरसे चली आई थी, मैं यह भी जानता हूं। उसीके फलसे करुणाकी और मेरी यह चरम अवस्था है और तुम लोगोंको भी इस तरह कष्ट सहते हुए देखना

पड़ा। खैर, जो होना था, वह तो हो गया है, अब मेरी एक बात मानो, तुम करुणाके लिये व्यस्त न हो। उसको मेरे पास छोड़ कर तुम दोनों भाई-बहन कुछ दिन माँके पास रहो। इतने दिनोंमें मैं भी अपनी कल्पनासे कुछ न कुछ—"

"अरुण भाई, क्या तुम यह भूले जा रहे हो, कि करुणाको साथ में लेकर न गये, तो माँ हम लोगों पर भी प्रसन्न नहीं होंगी ?"

"वह दरवाजा तो बाबाजीने एकदम बन्द कर दिया है भाई—इसके सिवा अब और उपाय नहीं है !"

सहसा पीछेका दरबाजा खुलते ही, दोनोंकी दृष्टि मीराकी दृष्टि से मिल गयी। उस घरमें मालूम होता है, और भी कोई था, जो मीराके दरवाजा खोलते ही पीछे हट गया था। मीरा सनत् और अरुणके सामने आ और सनत्‌की ओर देख कर बोली,—"मैं तो अपनी सलाहमें आप लोगोंसे सम्मति लेने आई थी, पर यहां आकर मैंने आपकी बातें भी सुन ली हैं भाई, अरुण बाबू, तुमसे जो बात कह रहे थे, मैं तुम्हारी ओरसे उनका उत्तर देती हूं। करुणा बहनको ले जानेका उन्हें कुछ अधिकार नहीं है। उसकी जो कुछ व्यवस्था करनी होगी, पहले भी हम ही करते थे, अब भी हम लोग ही करेंगे। जैसे उस वक्त उन्होंने कुछ नहीं कहा था, वैसे ही अब भी कुछ नहीं कह सकते।"

सनत्‌ने हंसते हुए अरुणकी ओर देख कर कहा,—"देखते हो भैया, इसका जुल्म ! इसके आगे भी किसीका बस चल सकता है ?"

अरुणको चुप देख कर सनत्‌ने ही मीरासे पूछा,—"अच्छा, सुनाओ तो तुमने क्या व्यवस्था की है ?"

"उसके विषयमें अभी कुछ नहीं सुन सकते—घर जाने पर धीरे-धीरे सब मालूम हो जायगा। कल ही घर चलनेका इन्तजाम करो।"

"यही तो मुश्किल हो रही है, करुणाका अभी तक विवाह नहीं हो सका—चचीजी कहती हैं, कि—"

"तुम्हारी चचीको झूठ नहीं होना पड़ेगा, इसमें जो कुछ होगा, सबका भार मेरे ऊपर रहा।"

"कहो तो तुमने क्या-क्या भार लिया है ?"

"कह तो दिया, अभी कोई नहीं सुन सकता।"

"यह व्यवस्था किसने की है ? तुमने और करुणाने ? इला नहीं आई ? उनको—"

"आप समझ लें, मैं इन मामलोंमें नहीं हूं। पहले भी तो आप और मीराने ही सलाह की थी, इस बार भी वही बात है।" कहती हुई इला घरके भीतरसे दरवाजेके पास आ गयी,—"हां, केवल मीरा और उसका समर्थन किया है, करुणाने !"

मीराने इलाके मुंहकी बात छीन कर कहा,—"और इतनी देरतक इला बहनके साथ करुणाका इसी विषयमें तर्क-वितर्क हो रहा था।"

सनतने इलाको देख कर हर्षातिरेकसे उठकर कहा,—"आप भी आ गयी हैं ? मुझे तो यह विश्वास नहीं था, कि आज आपसे मिल सकूंगा। आप—"

इलाने क्षीण हास्यके साथ कहा,—"आप तो इन दो वर्षोंमें मुझे 'आप' कहना सीख गये ?"

"दो वर्षका समय क्या कम है ? आपके पिताजीको भी उस

बार अरुण भैयाके साथ देखा था, आपकी बात भी अरुणसे सुनी थी। देखता हूं, आपकी देखा-देखी मीराके हृदयमें भी साहस भर गया है।"

"मीरामें तो मुझसे चौगुना साहस है ! मैं जो काम नहीं कर सकी, वह काम यह बड़ी प्रसन्नतासे कर रही है ! खैर, कैद तो एक वर्षकी हुई थी और एक वर्ष अपने कामोंसे बढ़ा ली थी ? अब मीराको लेकर घर जा रहे हैं न ?"

"हां, मां और चचीजीसे कह आया हूं, कि सबको साथमें लाकर 'नवान्न' ग्रहणका अनुष्ठान करूंगा ! हमारे घरके साथ आपका अकारण ही सम्बन्ध हो गया है, उसके अनुसार जब मैंने उनसे यह बात कही थी, तो मेरे मुंहसे आपका नाम भी निकल गया था। हमारे ऐसे सुखके दिन, क्या हमारे साथ आप भी चलकर इस आनन्दका उपभोग न करेंगी ?"

मीरा सहसा बोल उठी,—"आह भैया ! तुम्हारा यह 'आप' कानोंमें बड़ा आघात करता है।" सनत् हंस पड़ा। इलाने नीचा मुंह करके कहा,—"इस बार क्षमा कीजिये, मैं आपकी अपनी हूं ही कहाँ ? नहीं तो क्या आप मुझे 'आप-आप' कहते ?"

"सिर्फ इसी लिये ? अच्छा तो अब मैं अपनी भूलका संशोधन किये देता हूं।"

"इस बार तो आप लोग ही जायं, फिर आऊंगी। आप तो यहां थे ही नहीं, मीरा भी इस साल नहीं गयी। पर मैंने अपनी गर्मियों-की और पूजाकी छुट्टियां बुआजीके पास ही बिताई हैं।"

"हां, यह मैंने सुना है, और इसी लिये तो मुझे आश्चर्य होता है

कि जिस समय मेरी मां और चचीकी किसीको परवा नहीं थी, उस समय जिसने उनको सान्त्वना दी है—सहायता की है—इस समय इस आनन्दके मौके पर वे ही नहीं जायंगी ?"

"आनन्दका दिन आने दो, उस दिन जरूर आऊंगी।"

"क्या तुम्हारी रायमें अभीतक वह दिन नहीं आया ?"

"नहीं।"

अरुण अभीतक चुप था—इस बार उसने दृढ़ स्वरसे कहा,—"सनत् तुम्हें करुणाको इलादेवीके पास छोड़ जाना पड़ेगा। उसे ले जानेकी कोई जरूरत नहीं हैं। मैं कोशिश करता हूं, उसके विवाह करनेकी, उसके बाद फिर ताईजीके पास ले जाना।"

"किस लिये, बतलाओ तो ?"

सनत्को बोलनेका मोका न देकर मीराने उग्र स्वरसे अरुणकी बातका उत्तर दिया। फिर उसकी ओर तीक्ष्ण नेत्रोंसे देख कर कहा,—"यदि वह विवाह करनेके लिये तैयार न हो ? आपका क्या कुछ जोर है ? आप किस लिये उसको इस तरह से रखोगे ?" समझ लीजिये, उसका विवाह हो चुका है। उसके माथेमें सिंदूर लगा कर तो घर ले जानेमें कोई हर्ज नहीं है ? अब बतलाइये, आपको क्या आपत्ति है ?"

मीरा यह कह कर आंधीकी तरह उस कमरेसे चली गयी। सनत् विस्मित होकर प्रश्नसूचक दृष्टिसे इलाकी ओर देखने लगा।

इलाने नीचा मुंह किये हुए कहा,—"मैंने आकर सुना है, कि करुणासे उसने यही बात कही है। देशमें जाकर वे कहेंगी, कि

करुणाका स्वामी कहीं चला गया है, ऐसी ही सलाह ठीक हुई है। वह इस तरह निरुपद्रव भावसे अपने घरमें रह सकेगी।"

सनत्ने वेगपूर्वक कहा,—"नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। इससे तो अरुण भैया जो कह रहे हैं, वही अच्छा है! करुणा तुम्हारे पास ही रहे। हम लोग कोई वर ढूंढते हैं—"

इलाने नीचा मुंह किये हुए कहा,—"मैं आप दोनोंसे कहती हूं, कि जो बात सम्भव नहीं है, आप उसकी चेष्टा न करें! या तो सनत् भैया करुणासे विवाह करके उसको घर ले जायं, नहीं तो यह रास्ता है! मीराने बहुत सोच-बिचार कर ही यह बात कही है।"

"क्या मीराकी तरह तुम भी यह बात कह रही हो, कि मैं विवाह करूं? तो फिर बाबाजीको इतना कष्ट क्यों दिया गया? इसके सिवा विवाह करनेको—मैंने प्रमथसे कहा है, वह मेरी बात कभी नहीं टालेगा।"

सनत्को उठते हुए देखकर इलाने उसको रोक कर कहा,—"आप पागलोंकी तरह क्या कह रहे हैं? वह यदि सम्भव होता तो प्रमथ ही स्वीकार कर लेता। और उन्होंने भी आपहीकी तरह जीवन बितानेका निश्चय किया है, अपने आप झंझटसे बचनेके लिये उनके ऊपर अनुचित दबाव क्यों डालते हो?"

सनत्ने अरुणकी ओर देख कर हताश भावसे कहा,—"क्या उपाय किया जाय, अरुण भाई?"

अरुणने व्यग्र स्वरसे इलाको कहा,—"आप एक बार करुणाको मेरे पास ला दें, वह क्या कर रही है, मैं उसे समझा दूं।"

"करुणा कुछ नहीं कर रही है अरुण बाबू, जो कर रही है मीरा कर रही है। आप उससे ही कहिये।"

"कहिये, क्या कहना चाहते हैं?"

मीरा आकर अरुणके सामने खड़ी हो गयी। अरुणने कहा,—"एक बार आप करुणाको मेरे सामने ले आइये।"

"उसको आप नहीं पा सकते।"

अरुणने इलाकी ओर हताश भावसे देख कर कहा,—"आप ही कुछ उपाय कीजिये।"

"किसीको उपाय नहीं करना होगा, वह देखो, करुणा अपने आप ही चली आ रही है।" इलाने उत्तर दिया।

करुणाके पैर लड़खड़ा रहे थे, पर फिर भी वह चली आ रही थी। उस म्लान छायाकी ओर देख कर सब चौंक उठे। मीराने दौड़ कर उसको छातीसे लगा लिया और कहा,—"मैं तो दरवाजा बन्दकर आई थी, फिर तू किधरसे भाग आई?"

अरुणने आर्त स्वरसे कहा,—"करुणा, मेरे पास आओ बहन, तुम्हें बचपनकी बात क्या याद है? पिताजीकी बात, अपने भाइयोंकी बात—उनकी अवस्थाकी बात याद है? जिन देवताओंने तुम्हें और तुम्हारे भाईको अपने चरणोंमें स्थान देकर, अपने स्नेहसे पाल-पोसकर मनुष्य-समाजमें रहने योग्य बनाया है, अपने तुच्छ सुख-दुःखके लिये उनके घरमें विप्लव न उत्पन्न कर देना! एक तो पहले ही बहुत हो गया है—अब नहीं, आओ मैं—"

मीराकी गोदमें सिर रखे हुए करुणाने रोते हुए कहा,—"मैं तो

तुम्हारे साथ जाना चाहती हूं भैया, पर मीरा किसी तरह भी नहीं जाने देना चाहती। इसने मुझे कैद कर रखी है !"

"स्नेहका बन्धन भी कर्त्तव्यके आगे कठोर होकर तोड़ देना पड़ता है बहन, जानती हो, वे कितनी लापरवाहीसे, कितना बड़ा आत्मत्याग कर रहे हैं ? इन्हीं देवताओंके 'देवत्र' को हम लोग अपनी आशा-तृष्णा मिटानेके लिये भोगेंगे ? उसके मालिक बनेंगे ? छिः ! क्या इससे हम लोगोंका मर जाना अच्छा नहीं है ? हृदय मज-बूत करो, देखती नहीं हो, जो लोग मृत्युञ्जय भट्टाचार्यके सर्वस्व हैं, वे कैसा जीवन बिता रहे हैं ! और हम लोग नहीं बिता सकेंगे ? जिनके छोटे-छोटे भाई भूखसे तड़प-तड़प कर मर गये हैं, जिनके पिताने आत्महत्या करके अपने दुःखोंकी ज्वाला शान्त की है, उनके लड़के-लड़कियोंको इतनी सुख-तृष्णा नहीं रखनी चाहिये। करुणा, चलो मेरे साथ !"

"मैं तो—मीराके आगे जोर नहीं कर सकती—तुम मुझे इससे छुड़ा दो—"

करुणाको और भी जोरसे दबा कर मीराने मुंह उठा कर अरुणकी ओर देखा। उसका मुख लाल हो रहा था और बड़े-बड़े नेत्रोंसे टप्-टप् आँसू गिर रहे थे। मीराने तीव्र स्वरसे कहा,—कहिये, और क्या कहना चाहते हैं ? इस तरहकी दो-चार बात और कहते ही यह मेरी गोदमें ही मर जायगी, बस सब मामला खतम हो जायगा। इतनी ही देरमें अधमरीसी हो गयी है ! इला बहन, करुणा मरी जा रही है, जरा पकड़ो तो ! पर इतने पर भी सुनिये अरुण बाबू, इसको

लाश भी मैं आपको नहीं दे सकती—मैं लाशको ही अपने सिर पर रखकर ताईजीकी गोदमें जाकर रख दूंगी। बाबाजीका 'देवत्र' दान इसी तरह सार्थक होगा। आप जिस तरह इसका प्रबन्ध करना चाहते हैं, उससे तो यही अच्छा है! करुणाका शरीर तो ताईजीकी गोदमें ही पहुंचेगा। भैया—"

मीराकी बात पूरी होते न होते ही सनत्ने चिल्लाकर कहा,—"ऊफ! असह्य है मीरा अब नहीं! बोलो मैं क्या करूं? करुणासे विवाह करनेके लिये कहती हो न? खैर, वही करूंगा—यही होगा—तू चुप रह!"

"नहीं-नहीं-नहीं!" ठीक इसी समय अस्त्राहत कण्ठके जैसी ध्वनि उठी और करुणाके अज्ञान शरीरको लेकर मीरा गिरते-गिरते बची। इलाने दोनोंको पकड़ रक्खा था। इसलिये वे दोनों गिर नहीं सकीं।

मूर्च्छिताकी शुश्रूषा करते हुए इलाने वाक्य-रुद्ध कण्ठसे कहा,—"मैं तो समझ ही नहीं सकती, कि आप लोग मामलेको इतना बढ़ा क्यों रहे हैं! मीरा जो करना चाहती है, वह इतना असम्भवसा क्यों है? इतना हो लेने पर दूसरी जगह इसका विवाह करनेका प्रयत्न करना ही अन्याय है। और यह मीरा जो कह रही है, कि मैं विवाह न कराऊंगी, हमेशा पढ़ती-पढ़ाती रहूंगी, तुम इसका क्या कर सकते हो? करुणा भी उसी तरह, मीरासे भी अच्छी तरह बुआजीके पास रह कर अपना जीवन बिता देगी। बड़ी बुआने तो अरुण बाबूसे कह दिया है, कि मैं करुणाका विवाह नहीं करूंगी,

तुम उसको मेरे पास ला दो ! अरुण बाबू, सनत् भैयाके लिये ही करुणा पर अन्याय करना चाहते हैं। पर इसकी क्या जरूरत है ? जब जरा-जरासी विधवाएं अपना जीवन अच्छी तरह बिता देती हैं, तो कुमारी लड़कियां क्यों नहीं बिता सकतीं ? अभी तक लोग उसका विवाह करनेमें ही जीवनकी चरम सार्थकता क्यों समझते हैं ? विवाह में चाहे जितनी विपत्तियां और विघ्न हों, पर विवाह करना ही होगा, यह कहांका न्याय है ? क्यों विवाह करते हैं ? करुणाके विषयमें यह मुश्किल है, कि पहलेसे लोगोंसे कह दिया गया है, कि इसका विवाह हो गया है ! यदि ऐसा न कहते तो दूसरा कोई उपाय भी नहीं था, क्योंकि सनत् भैया उसको जिस तरह वहांसे उड़ा कर ले आये थे, और जितने दिन यह वहांसे अनुपस्थित रहे, उतने दिनके लिये समाजके आगे किसी न किसी तरहकी जवाबदेही तो उन लोगोंको करनी ही पड़ती। मीराने जो विचार किया है, वह बिल्कुल ठीक है। विधवा न बनाकर सधवा बनाए रखना ही अच्छा है। सिर्फ इतनीसी झूठी बातके कहनेसे यदि करुणाका जीवन शान्तिपूर्वक बीतता है, तो बीतने क्यों नहीं देते ? सनत् भैया और अरुण बाबू, अब आप हम लोगोंकी बातें सोच कर अपने जीवनमें आंधी-तूफान लानेका काम न करें ! आप लोग अपने-अपने कामसे जाइये, हम लोग अपना इन्तजाम स्वयं कर लेंगी। सब लोगोंने मिल कर लड़कीको मार डाला है !"

सनत्ने इतनी देर बाद एक निःश्वास छोड़ कर कहा,—"हम लोगोंको तो अब घर जाना होगा, मैं मांसे कह आया हूं, कि सब लोग इकट्ठे होकर 'नवान्न' करेंगे।"

"अच्छा तो है, करुणा जरा ठीक हो जाय फिर कल सब लोग चले जाना।"

"आप भी—तुम भी चलोगी ?"

"कह तो चुकी हूं, अभी नहीं जाऊंगी, इस समय तो आप ही लोग जाइये।"

अरुणने इलाकी ओर देखकर कहा,—"यह नहीं हो सकता, इला-देवी ! करुणाके लिये, इस समय ही आपको हम लोगोंके साथ चलना होगा। इस झूठमेंसे आपको भी थोड़ासा हिस्सा लेना पड़ेगा। जब कह चुकी हैं, कि हमारे लिये, आप लोगोंको कुछ चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी, फिर क्यों बचना चाहती हैं ?"

इलाने उदास स्वरसे उत्तर दिया,—"आप यह न समझिये, कि मैं इसीलिये बचना चाहती हूं। करुणाके लिये जो इन्तजाम किया जा रहा है, उसको जब यही लोग झूठ-मिथ्या नहीं समझते तो मैं क्यों समझूं ? हां, आपके और मीराके लिये हम लोगोंको कुछ कष्ट उठाना पड़ेगा। मीराकी मां तो रोती ही रहेंगी और ताईजीका क्या हाल होगा, नहीं कहा जा सकता। मीरा तो परवा नहीं करती पर क्या और लोग भी वैसे ही हो जांय ? शायद सारा क्रोध मीराके ऊपर ही पड़ेगा। और आप जो अपने कर्त्तव्यकी अवहेलना करके दिन बिता रहे हैं, इससे भी कष्ट होता है। आपको 'न्याय वागीश' होनेकी क्या जरूरत है ? आपको तो यह चाहिये, कि अपने देवता मृत्युञ्जय भट्टाचार्यका अनुसरण कर उन्हींकी तरह जीवन उत्सर्ग करें, और क्या कोई आपकी जैसी स्थितिमें नहीं पड़ता ? आपके बाबा,

अपने देवत्रमें आपको क्या आदेश दे गये हैं? उनके देश और उनके गांवके अनेक प्रकारके कष्टोंको दूर करनेके लिये ही क्या उन्होंने आपके ऊपर यह भार नहीं दिया है? और आप अपने व्यक्तित्वकी बात सोच कर, लज्जा, दुःख और वेदनाका अनुभव कर इतना बड़ा कर्त्तव्य भूले जा रहे हैं? सनत् भैया जेलमें दुःख उठा रहे थे, मीरा यहां तकलीफ भोग रही है, पर आप तो जानते हैं, कि ये कोई बुरा काम नहीं कर रहे हैं। फिर आप ही सबसे अधिक ऐसा बेढङ्गा काम क्यों कर रहे हैं अरुण बाबू?"

इलाकी तेजपूर्ण बातोंसे अरुणका मुंह म्लान होता जा रहा था। वह मानों अपनी अनिच्छासे ही बोल उठा,—"सनत्की बात नहीं है, किन्तु—"

"किन्तु मीरा—यही तो आप कहना चाहते हैं? यदि पढ़ने-लिखनेमें इसको कष्ट ही उठना पड़ रहा है, तो उसको देख कर आप अपना कर्त्तव्य क्यों भूले जा रहे हैं? इससे क्या मीराके कष्टमें कुछ कमी कर सकते हैं? आप जो कहेंगे वह मैं समझ रही हूं अरुण बाबू, पर आप मीराके लिये अपने 'देवत्र' के काममें आलस्य या अवहेलना करें, यह ठीक नहीं है। आप—"

"बड़ी मां तो कर रही हैं—वे जो कुछ कर रही हैं—"

"उनसे बहुतसे काम असम्पूर्ण रहते हैं। वे अकेली स्त्री हैं, यदि आप उनकी सहायता करते, उनका दाहना हाथ होकर रहते, तो सोचिये तो सही, कि अब तक गांवकी कितनी उन्नति हो जाती! सनत् भैयासे भी कहती हूं, यह भी देश ही का काम है, कुछ दिन

तक, अपने घरको—गांवको—ठीक करनेके लिये अपने घर जाकर क्यों नहीं रहते ? गांवमें जाकर देखिये, कितने जङ्गल, कितने सड़े हुए तालाब, मैलेके कितने ढेर और रोग-शोक तथा दुःख-दैन्यकी कितनी अधिकता है ! कुछ दिन तक इनके संस्कारमें अरुण बाबूके साथ तुम्हें भी लग जाना चहिये । मैंने आपके गांवमें कई बार जाकर देखा है, कि····।"

"मैं तो खद्दरके प्रचार-कार्यके लिये जाऊंगा, पो० सी० रायसे मिल चुका हूं । उन्होंने मुझे अपने काममें लेना स्वीकार कर लिया है ।"

"हां, तो चले जायं, पर कुछ दिन तक घर रह कर इन लोगोंका काम शुरू करा दें । परन्तु मीरा—"

"अब वह इस तरह पागलपन न कर सकेगी । इसके पढ़नेकी अच्छी तरह व्यवस्था किये देता हूं ।"

"मेरे लिये क्यों सोचते हो भाई, मैं तो अच्छी तरह हूं । मँझली मामी मुझसे बड़ा प्रेम करती हैं, मेरे लिये तुम लोग व्यर्थ क्यों हैरान होते हो ?"

"रहने दे—रहने दे, अब तुम्हें ज्यादा बहादुरी न दिखलानी पड़ेगी, जेसा शरीर हो गया है, उसको देखते हुए किसी दिन मर जायगी !"

"वाह ! तुम तो बड़े मोटे हो रहे हो न, पर हाँ बातोंमें कुछ तेज बढ़ गया है । अच्छा भैया, बतलाओ तो मेरे सुखकी व्यवस्था तुम कैसे करोगे ? तुम तो जाना चाहते हो, खद्दर प्रचारिणी समितिमें !"

"क्यों, क्या जीके कुछ रुपये बेङ्कमें नहीं पड़े हैं। सुना है, तुमने चचीजीसे बेंककी किताब छीन ली है—"

"ठीक है ! मैं तुम्हें अपनी विधवा माँका आशा-भरोसा तो जरूर नष्ट करने दूंगी !"

"बन्दरी, तुम्हें इन सब बातोंकी क्या जरूरत है ? मुझे इस समय तेरे साथ बकनेकी फुरसत नहीं है।"

"समझ गयी हूं, ताऊजीने जो कई हजार रुपये तुम्हारे नामसे बेंकमें जमा कर रखे हैं, उन्हींके ऊपर कूद रहे हो। उनसे करुणाका विवाह करोगे, मुझे पढ़ाओगे और उस मेंडककी लातसे और किसे-किसे मारोगे बतलाओ तो ?"

"सबसे पहले तेरा ही विवाह करूंगा, जब तू मानेगी। सुना है, तुम्हारी मँझली मामीका भाई कुछ हजार रुपये मांगता है। इस समय तो पांचेक हजार रुपये ले, विवाह कर विलायत चला जायगा, उसके बादके लिये भी इतना ही अन्दाज किया जा सकता है। अच्छा, मैं मँझली मामीसे कह कर सब ठीक किये जाता हूं।"

मीरा कुछ देर तक स्तब्ध रह कर सहसा कह उठी,—"अच्छा ! तो अब मैं पढूंगी नहीं ? क्यों ?"

"पढ़ेगी क्यों नहीं ? इसी तरह पढ़ती रहेगी।"

मीराने हंस कर कहा,—"यह शर्त सामने रख कर विवाहकी बात पक्की करोगे न ?"

"बेशक।"

"तो यह बात याद रखना। अच्छा चलो अब घर चलें, शामकी

गाड़ीसे ही चल पड़ें। अरुण बाबू, इला बहन, किसीके न जानेको बात नहीं सुनी जायगी। आज भैया घर आये हैं—इस वर्षके नवान्न में जो लोग शरीक नहीं होंगे—उनके साथ—उनको—"

"क्या ? जन्म भरके लिये छोड़ दोगी ?"

"तुम अब मुझे ज्यादा गुस्सा न दिलाओ भैया, जो नहीं जायंगे, समझ ही रहे होंगे।"

"क्या समझ रहे होंगे, सुनूं तो ? छः महीनेकी फांसी या उससे भी कुछ अधिक ?" इला हंस कर मीराकी ओर देखने लगी।

"जन्म भर ऐसी बात कहती रहूंगी, जो फांसीसे भी कड़ी होगी, समझ गये ?"

करुणा अभी तक इलाकी ओर आशापूर्ण नेत्रोंसे देख रही था, मीराको इस समय नरम होते देख कर, उसने धीरे-धीरे कहा,—"मुझे वहीं छोड़ आओ बहन, वहीं यमुनाके पास ! मुझे तुम घर न ले जाना !"

यह बात यद्यपि अस्फुट भाषामें कही गयी थी, पर इसने सबके कानोंमें पहुंच कर एक बार सबको फिर चुप कर दिया और मीराको यह सोच कर बहुत दुःख हुआ, कि करुणा मेरी स्नेहपूर्ण वेदना और व्यग्रताकी ओर ध्यान न देकर अभी तक यही समझ रही है, कि मेरे कारण एक विशेष समस्या इन लोगोंके सामने आई हुई है। इलाने करुणाके सिर पर स्नेहका कोमल हाथ फेरते हुए कहा,—"सबको अब दुःख न दो करुणा, अब तुम अपनी ताईके पास चलो। मुझे पूर्ण विश्वास है, कि वे सबकी अशान्ति दूर करनेका उपाय कर देंगी।

सब बातोंकी मीमांसा उनके सामने पहुंचते ही हो जायगी । तुम लोग अब मीराको अधिक दुःख न दो ।"

सब लोग यथा समय चुपचाप घरकी ओर चल पड़े। मीराने तमाम रास्ते भर किसीसे अच्छी तरह बात नहीं की । उसको चिन्तित और अन्यमना देख कर सनतूने भी अधिक छेड़-छाड़ करना उचित नहीं समझा। अपनी-अपनी चिन्ताओंसे सभीके मुंहपर वेदनाकी रेखा खिंची हुई थी । जिस आनन्द मनानेकी इच्छासे सनतूने सबको इकट्ठा किया था, वह आनन्द बीचमें न जाने कैसी बाधा पाकर अपनी गति संकुचित करनेके लिये मजबूर हो गया था। सनतू इलाकी युक्तिको ठीक समझते हुए भी अपने मनमें न जाने कैसी अशान्तिकी छाया पड़ी हुई देख रहा था।

अरुन्धतीने स्थिर और संयत भावसे सबकी आव-भगत की। अरुण, करुणा या मीरासे उन्होंने एक बार भी किसी तरहकी शिकायत न की। हां, यह जरूर किया, कि मीराकी माँकी इस बात पर ध्यान न देकर, कि उसने लोगोंसे यह कह रखा है कि करुणाका विवाह हो गया है, उसके अभी तक विवाह न होनेकी बात सबके सामने कह दी। गांव भरमें बड़ा भारी आन्दोलन होने लगा । यदि किसी बूढ़ीने उनसे कैफियत तलब की तो उन्होंने कुल जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर उनको उत्तर दिया,—"इतनी बड़ी लड़कीका अभी तक विवाह नहीं हो सका है, इस लज्जाके कारण ही यह बात कही गयी थी। पिताजी, इसको चिरकुमारी रख कर देवताकी दासी बना गये हैं। उनके सब लड़के-बाले देवताका काम करेंगे—कोई गृहस्थी नहीं होगा, यही उनका आदेश है ।"

पर फिर भी गोलमाल सहज ही में बन्द नहीं हुआ। जिस घरमें दो बड़ी-बड़ी अविवाहिता कन्या मौजूद हैं, उस घरमें भोजन कैसे किया जा सकता है, बड़े-बूढ़े लोग इस बातकी मीमांसा करनेके लिये व्यस्त हो उठे। दिन-प्रति दिन गांवमें पञ्चायत होने लगी और वहांसे सनत् और अरुणको बुलावे आने लगे। परन्तु अरुण और सनत्को उन लोगोंके पास न जाने देकर अरुन्धतीने उन बड़े-बूढ़ोंसे कहला भेजा, कि उनको जो कुछ कहना है, वे यहां आकर, अपने चरणोंकी धूलसे इस घरको पवित्र करके, कह जायं। लाचार होकर वे लोग दो-एक बार भट्टाचार्य महाशयके घर भी इकट्ठे हुए। परन्तु अरुन्धतीसे उन्हें एक ही उत्तर मिला,—"इनका विवाह तो जब भगवान् करना चाहेंगे तभी होगा, इसके लिये आप लोग जो दण्ड देना चाहें, मैं उसे सिर-माथे पर उठाऊंगी।"

"मां, तुम इस गांवकी लक्ष्मी हो, अन्नपूर्णा हो, तुम्हें क्या दण्ड दिया जा सकता है? पर मां, समाजकी इस तरह अवहेलना करनेसे तो तुम जानती ही हो, गीतामें ही भगवान्‌ने कहा है,—उत्सीदेयुरिमे लोका—"

"पिताजी, समाज मेरे सिर-माथे पर है। आपमें तो अधिक संख्यामें राढ़ी-बारेन्द्र श्रेणीके ब्राह्मण ही हैं। बतलाइये, कुलीनता और उच्च कुलके लिये आप लोगोंके घरोंमें क्या हमेशा अविवाहिता लड़कियां नहीं रहतीं? मेरे स्वर्गगत ससुर अपनी समस्त सम्पत्ति, अपने गांवके लिये आप लोगोंके लिये ही—'देवत्र' कर गये हैं, उनके बाल-बच्चे और मैं आप ही लोगोंके आश्रित हैं, आप हम लोगोंको उत्पी-

ड़ित न कर उस स्वर्गगत महात्माकी आज्ञाके अनुसार चलने दें, इसमें सभीका मंगल होगा। आप लोग तो हम लोगों पर विशेष कृपा और दया रखते हैं, कमसे कम इतनी दया और करें, तब आपको मालूम होगा, कि इससे आप लोगोंने अपने हितैषी स्वर्गस्थ महात्माका सम्मान ही किया है।"

अरुन्धतीके मीठे बचनों और विशेष कर उसको किसी तरह अपने निश्चयसे टला न सकनेके कारण गांवके पञ्च लोग बोले,—"अच्छा माँ, तुम्हारी इच्छाके ऊपर विवेचना करके हम लोग और कुछ दिन तक चुप रहते हैं।"

वे लोग यह कह कर चले गये। जातिच्युत होनेके डरसे अरुन्धती नहीं डरेगी, यह उसकी इसी बातसे समझ गये थे, कि—"दण्ड सिर-माथे पर उठाऊंगी।"

गांव भरके आदमी एक तो समय-समय पर अरुन्धतीसे हमेशा सहायता प्राप्त कर उपकृत हुआ करते थे, दूसरे पास ही नवान्नोत्सव है, लक्ष्मी-पूजा है, महीने भर तक भोजन होता रहेगा—इन सबको छोड़ देना भी मामूली बात नहीं थी। इधर यह दोनों लड़के भी गांवका उपकार करनेमें जुटे हुए हैं, सबके घरके पासका कूड़ा-कर्कट, मोरीकी गन्दगी, तालाबका कीचड़ और गांवके आस-पासका जङ्गल बिना पाई खर्च हुए ही साफ होता चला जा रहा है, ऐसे समय इन्हें छेड़ना उचित नहीं है। इनके घरमें जवान लड़कियां हैं, पढ़ती-लिखती हैं, इसमें किसीका क्या हर्ज है? हम लोग तो उन लड़कियों को अपने घरमें लानेके लिये लालायित नहीं है। बल्कि लड़कियां

गाँवकी छोटी-मोटी लड़के-लड़कियों बिना फीस लिये पढ़ाती हैं, यह क्या बुरा है ? आजकल जैसा समय आ गया है, उसको देखते हुए थोड़ासा लड़कियोंका पढ़ाना भी जरूरी हो गया है। रस्सीको अधिक न खींच कर, अपनी इज्जत लेकर चुप-चाप बैठ रहना ही अच्छा है। विशेष कर बड़ीबहू अन्नपूर्णा है, उनका अनुरोध न माना तो हम लोगोंको पाप लगेगा। यह सोचकर धीरे-धीरे सब लोग चुप हो गये। शक्ति और साधना, इन दोनोंके सामने मूर्खोंको भी सिर झुकाना पड़ा।

२४

मीराकी यद्यपि कुछ ही महीने बाद परीक्षा होनेवाली थी, पर उसका ध्यान पढ़नेमें नहीं लग रहा था। सनत् उसके विवाहकी जो बात चला रहा था, वह अब कुछ-कुछ पक्की हो गयी है। इस बातका प्रमाण इसी बातसे मिलता है, कि मीराकी मंझली मामीके भाईके घरवालोंने यद्यपि मीराको सैकड़ों बार देख रखा था, उस घरका बच्चा-बच्चा मीराको जानता था, पर इस बार मीराको देखने आनेकी बड़े जोरकी धूम हो रही थी। मां और ताईसे मीराने सैकड़ों बार कहा था, कि सनत् भैया आकर मेरी जैसी व्यवस्था करेंगे, मैं उसको स्वीकार कर लूंगी। इस समय उसी सनत्का यह प्रबन्ध देख कर मीराका शिर गर्म हो उठा है। खैर, किसी तरह इतने दिन तक चुप बैठी थी, पर जिस दिन भावी वर साज सजा कर उसको देखनेके लिये आनेवाला था, उस दिन मीराने इलासे कहा,—"घरमें रहनेसे

इस वर्ष मेरे पास होनेकी सम्भावना नहीं है, मैं तुम्हारे पास बोर्डिङ्ग में रहकर पढूंगी।"

इलाने हंसकर कहा,—"क्या तुमने यह नहीं सुना है, कि इसी दिसम्बरमें मुझे बोर्डिङ्ग छोड़कर घर चला जाना पड़ेगा, पिताजीने ऐसी ही आज्ञा दी है? घर रह कर ही मैं कालेजमें पढ़ने जाया करूंगी। मैं बड़े दिनके मौके पर ही अपना सामान उठा कर घर चली आऊंगी।"

"अचानक तुम्हारे पिताने ऐसा हुक्म क्यों दिया है? इसका कारण?" मीराने भौं चढ़ा कर प्रश्नसूचक दृष्टिसे इलाकी ओर देखा।

"जिस कारणसे तुम घर छोड़ना चाहती हो, मुझे भी उसी कारण से घर जाना पड़ रहा है।"

"विवाहके लिये?"

"हां।"

"तुम्हारे विवाहकी कहाँ तैयारी हो रही है?"

"नयी मांके एक भानजेके साथ। सुना है, उन्हें मैं खूब पसन्द आ गयी हूं।"

"इन भानजों और भतीजोंने तो नाकमें दम कर दिया है। तुम उनके इस पसन्दके कारण ही घर जानेको तैयार हो गयी हो?"

इलाने हंसकर कहा,—"पिताजीकी इच्छा, पढ़नेकी सुविधा तथा और भी कई तरहकी सुविधाओंको देख कर मैं बोर्डिङ्गमें रहती थी, अब जब पिताजी घर रह कर ही पढ़नेको कह रहे हैं, तो मुझे वही स्वीकार करना पड़ेगा।"

"उसके बाद ?—मांका भानजा ?"

"वह बादकी बात है बहन, मेरा भाई तो तुम्हारे भाईकी तरह दस-बारह हजार रुपया देनेके लिये तैयार नहीं है, तिस पर मैं इतनी बड़ी हो गयी हूं, आशा है, मांके भानजे साहब बहुत दूर तक नहीं बढ़ सकेंगे।"

" यह कैसे कहा जा सकता है बहन ! मान लो वे यदि मँझली-मामीके भाईकी तरह दस-पांच हजार रुपया न मांगें ?"

"बादकी बात बादमें देखी जायगी, अब यह बतलाओ, तुम्हें क्या कहना है ?"

"मैं तो यही कहती हूं, कि अब मैं यहासे भाग जाऊंगी। पढ़ना भी ठीक तरह हो जायगा और—"

"और मां और ताईजीसे एक तरहका झगड़ा भी हो जायगा। क्यों न ?"

"तुमने ठीक अनुमान किया है बहन ! मैं यही सोच रही हूं, कि भैयाने इतने रुपयेका इन्तजाम कैसे किया है। उस दिन मैं उसके पास जाकर खड़ी हुई, तो झट बेग बन्द कर लिया। लेकिन मुझे ऐसा मालूम हुआ, मानों बेगमें ताईजीके गहनें हैं। भाई, मां और ताईजीके सारे धनका मालूम होता है, नष्ट करने जा रहे है। अच्छा भाई, क्या इस तरह उन्हें मेरा विवाह करना उचित हैं ? क्या हम लोग विवाह किये बिना नहीं रह सकतीं ? क्या इसमें पाप होता है ? हम लोगोंके लिये केवल यही मार्ग है क्यों ?"

इलाने कुछ उत्तर नहीं दिया—हंसने लगी।

मीराने और भी नाराज होकर कहा,—"तुम हंस रही हो इला बहन,—और गुस्सेके मारे मेरा सारा बदन जला जा रहा है ! मैं उनके पास जाती हूं। उन्हें तो किसीको विवाहकी जरूरत है नहीं और मुझे है ? पहले सनत् भैया विवाह करें, अरुण बाबू, करुणाका विवाह करें तब वे मुझसे कुछ कह सकते हैं।"

"तुमने यह सुना है, या नहीं, कि सनत् भैया और अरुण बाबूने गांवमें खूब जी लगा कर काम करना शुरू कर दिया है। अरुण बाबू अपने न्यायशास्त्रको छोड़ कर कुदाल हाथमें लिये जङ्गल सफा करते फिर रहे हैं ! लड़कियोंका स्कूल बना कर उसमें करुणाको अध्यापिका बनाना चाहते हैं। ताईजीके जो काम बाकी थे, उनको उन्होंने करना आरम्भ कर दिया है । ग्राम्य-स्कूल—और भी न जाने क्या-क्या—"

मीराने मुंह फुला कर कहा,—"सुना है—सुना है। तुम्हारे ही आंख खोल देनेसे उनमें यह बुद्धि आई है। अब तो उन्हें सिर्फ यही है, कि किसी तरह मेरा पढ़ना बन्द हो जाय।"

इलाने कुछ लज्जित होकर कहा,—"नहीं तुम्हारा पढ़ना नहीं छूटेगा। तुम्हारी परीक्षा होने पर बैशाख-जेष्ठमें विवाह करनेको वे लोग राजी हो गये हैं। यदि तुम और भी पढ़ना चाहोगी, तो वे उस में भी बाधा नहीं देंगे।"

"वाह ! तुम यह क्या कह रही हो ? यह तो बड़ी विचित्र बात है ! मुझे तो इस पर विश्वास नहीं होता। खैर, मैं भैयाके साथ चली जाती हूं, यहां तो इनकी ज्वालासे पढ़ना हो नहीं सकेगा।"

इलाने हंस कर कहा,—"और वहां जाकर भी तुम कुछ कर सकोगी, मुझे तो इसका भी विश्वास नहीं होता। फिर भी जाना चाहती हो, तो जाओ।"

यह सुन कर मीरा भी हंस पड़ी। घर आकर एक तरहसे बड़े आडम्बरके साथ, एक कमरेमें बन्द होकर मीराने पढ़ना शुरू किया। माँ, ताई, भाई यहां तक, कि करुणाके साथ भी बात-चीत करनेका उसको समय नहीं मिलता था। उसके कुल काम ताईजी चुपचाप कर देती थी। उन्हें तो निष्प्रयोजन बोलनेका अभ्यास ही नहीं था। मीराकी माँ मीराके ढङ्ग देख कर घरके काम-काजके बहानेसे दूर ही रहती थी।

परन्तु चार-पांच दिनमें ही मीरा अकेली उकता गयी। उसने एक दिन मुंह फुला कर ताईसे कहा,—"भैया कहां हैं?"

अरुन्धतीने उत्तर दिया,—"वह तो खद्दर-प्रचारके कार्यमें चला गया।"

"वाह! वह तो खूब निकला! मुझे क्या इसीलिये यहां लाया था?"

यह कहनेके साथ ही मीराको याद आया, कि इस बार तो उसको घर आनेके लिये किसीने नहीं कहा था। शायद ताईजीको भी यह बात मालूम है। वे मेरी बात सुन कर जरूर हंस रही होंगी। यह सोच कर मीराने कुछ झेंप कर उनकी ओर देखा तो वे बिलकुल शान्त भावसे उत्तर दे रही थीं,—"काम आ गया था, इसलिये चला गया है।"

"बड़ा भारी काम है न! क्यों, यहां भी तो सुना है, उन्होंने अपना काम शुरू किया था, घरका काम क्या काम नहीं है?"

"जिसको जो अच्छा लगे, वही काम करता है।"

ताईजीके चले जाने पर मीरा फिर पढ़ने लगी, पर आज उसका मन नहीं लगा। वह उठ कर करुणाको ढूंढ़नेके लिये ताईजीके घरके बाहर गयी, तो उसने देखा, कि करुणा एक चरखा सामने रखे हुए, उसमें कातनेके लिये रुई पीन रही है और उसकी कैवर्त-बुआकी भतीजी, पोती और सगे सम्बन्धियोंकी पांच-छः कन्याओंको पढ़ा रही है। सबके हाथमें एक-एक पुस्तक और स्लेट थी। उनको अक्षरा-भ्यास करा रही थी। कुछ दूर पुरोहित महाराजकी लड़की वर्ण-परि-चयका दूसरा भाग हाथमें लिये हुए, अपनी पद-मर्यादाके अनुकूल गम्भीर स्वरसे कह रही है—'वक्र, विक्रम, क्रूर, क्रोध' मीरा उसके मुंहकी ओर देख कर हंस पड़ी। मीराके हंसनेके शब्दसे चौंक कर करुणाने विस्मित होकर उसके मुंहकी ओर देखा। मीराने उसी तरह हंसते हुए भ्रुकुटिको कुटिल करके कहा,-"वक्रके बादकी अवस्थामें क्रूर और क्रोधकी बात तो समझमें आ जाती है, पर बीचमें 'विक्रम' कहांसे आ टपका, यह तो बतलाओ पण्डितानीजी?"

करुणाको फिर भी मूढ़की तरह अपनी ओर देखते हुए देख कर मीराने उसके पास बैठ कर कहा,—"मैं पूछ रही हूं, कि जिनका नाम साक्षात् करुणा है, वे मेरे ऊपर 'वक्र' क्यों हो रही हैं?"

पर फिर भी करुणा उसकी ओर उसी तरह देखती रही। इस बार मीराने विरक्त होकर कहा,—"तुम मेरी ओर पागलोंकी तरह कैसे

देख रही हो ? मैंने ऐसा क्या अपराध किया है, जो दिन भरमें एक वार भी कोई मेरे पास नहीं जाता ?"

करुणाने इतनी देर बाद रास्ता पाकर आरामका निःश्वास छोड़ा। फिर प्रसन्नताकी हंसी हंसते हुए कहा,—"तुम तो भाई, अपनी परीक्षा की तैयारी कर रही हो। यदि कोई तुम्हारे पास जाय, तो इससे तुम्हारा हर्ज होगा! इधर ताईजीने चरखा भी उस तरफके घरसे उठवा कर यहां मंगा लिया है, शायद इसके शब्दसे तुम्हारे पढ़नेमें कुछ असुविधा हो।"

"तो क्या इसी कारणसे मनुष्य दिन भर अन्धकूपमें पड़ा रहेगा ? देखूं, तेरा चरखा।"

यह कह कर मीरा चरखेका हत्था खूब जोर-जोरसे घुमाने लगी और करुणा प्रफुल्ल मुखसे उसका काम देखने लगी। मीराकी इस जल्दीसे सूत बहुत खराब आने लगा, पर करुणाने कहा कुछ नहीं। कलकत्तामें वह मीराके स्नेह-व्यग्र हृदयकी जिदका सम्मान नहीं रख सकी थी, इसलिये वह मीरासे कुछ झेंप रही थी। कुण्ठित थी। मीरा ने भी शायद यही बात सोच कर, जब वे पहली वार घर आये थे, तब करुणासे विशेष हेल-मेल नहीं किया था। इस बार भी मीराको पढ़नेके बहानेसे एक कमरेमें बन्द पड़ी हुई देख कर, करुणाको उस के पास जानेका साहस नहीं हुआ था। और, आज अपनी इच्छासे मीराको अपने पास आते देख कर, करुणाकी आंखोंमें आनन्दसे जल भर आया। वह समझ गयी, कि या तो मीरा मेरा दोष भूल गयी है या क्षमा कर दिया है ।

अपने मनका अनमनापन दूर होते ही मीराने देखा, कि लड़कियां अपना पढ़ना बन्द कर अवाक् भावसे उसकी ओर या उसके कामकी ओर देख रही हैं।

"तुम लोग क्या देख रही हो? पढ़ती क्यों नहीं?" यह फटकार सुनते ही सब अपने-अपने काममें लग गयीं। पुरोहितकी लड़की फिर जोर-जोरसे बोलने लगी,—"क-र-ओ और ध—क्रोध।"

करुणाने हंस कर मीरासे कहा,—"मैं भी तुमसे पूछती हूं, कि तुम्हारे अन्दर अब यह वस्तु तो नहीं रही गई?"

मीराने कुछ चकित भावसे कहा,—"मुझसे कह रही हैं?"

"हाँ!"

"क्यों, मेरे क्रोध करनेका क्या कारण था?"

करुणाने और कुछ कहनेका साहस नहीं किया। यदि मीरा वह बात भूल गयी हो, तो व्यर्थ अब क्यों याद दिलाई जाय!

"अच्छा, करुणा बहन, तुमने इतना अच्छा सूत कातना कहां सीखा है?"

मीराने अन्यमनस्क होकर प्रश्न किया।

करुणाने उत्तर दिया,—"उन्हीं लोगोंके पास। यमुना कितनी जल्दी और कैसा सुन्दर सूत कातती थी, यह तुमने शायद नहीं देखा है।"

"मैं बड़ी देरके लिये वहां गयी थी और उनसे मिली थी न, जो उसका चरखा कातना भी देख लेती! फिर जब कभी मिलूंगी तब

देख लूंगी, कि तेरा काता हुआ सूत अच्छा या यमुनाका काता हुआ अच्छा है ! लेकिन मैं यह कैसे समझ सकती हूं, कि कौन अच्छी चीज है और कौन बुरी ? मैं इसका व्यापारी तो हूं ही नहीं । हांरी, तुम सब अपने-अपने घर जाओ, आज हम लोग बातें करेंगी ।"

सब लड़कियां खुश होकर अपनी-अपनी पुस्तक-पट्टी उठा कर चली गयीं ।

सहसा मीराने करुणासे पूछा,—"यमुना तुम्हारे पास चिट्ठी नहीं भेजती ?"

यह सुन कर करुणाने मुंह नीचा कर लिया और देखते ही देखते उसका मुंह न जाने कैसा विवर्ण हो गया । मीराने फिर वही बात पूछी तो उसको लाचार होकर उत्तर देना पड़ा,—"एक चिट्ठी भेजी थी, उसका जवाब न मिलनेसे और नहीं भेजी !"

"क्यों ? श्रीमती करुणाने क्या धान कूटते और सूत कातते हुए अपने 'भाई' की सिखाई हुई विद्या भी उसीके साथ कूट कर फेंक दी है, जो एक चिट्ठीका जबाव भी नहीं दे सकी ?"

करुणाने कुछ उत्तर नहीं दिया । उसके उत्तरोत्तर पांशुवर्ण धारण करनेवाले मुंहकी ओर देख कर मीराने कुछ क्रुद्ध स्वरसे कहा,—"अकृतज्ञ ! वह तुमसे कितना प्रेम करते थे, तुम उन्हें इतने ही दिनों में भूल गयी ?"

करुणाने फिर भी उत्तर नहीं दिया ।

मीराने फिर कहा,—"देखूं तेरी चिट्ठी, क्या लिखा है, उसने ?"

करुणाने बड़ी कठिनाईसे कहा,—"फाड़ कर फेंक दी है ।"

विधि-विधान
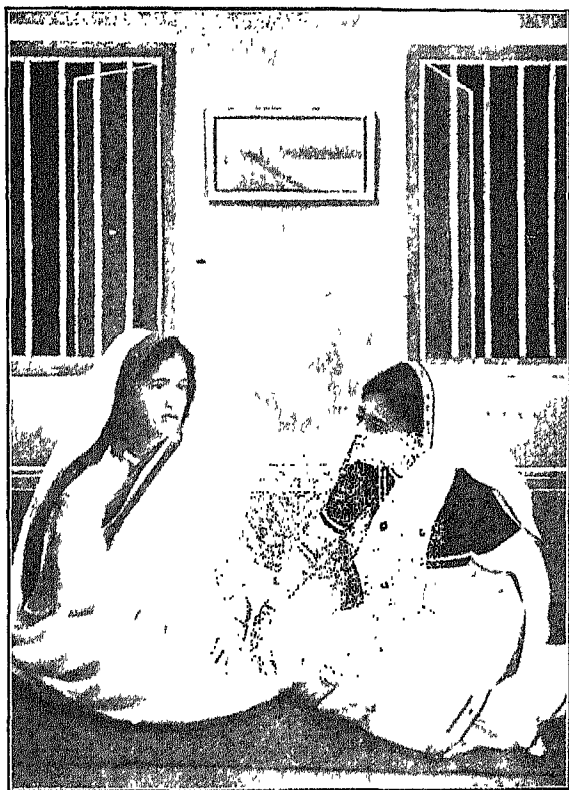
मीरा और करुणा ।

"क्यों ?"

पर कुछ उत्तर नहीं मिला। मीराने फिर कहा,—"उनको जिस दिनके लिये निमन्त्रण दे आई थी, यद्यपि अभी वह भाग्यसे नहीं आया है, पर फिर भी उनको एक बार यहां बुलानेमें क्या हर्ज है ? मैं—"

आर्त-मुखी करुणा घबड़ा कर चिल्ला उठी।

"नहीं नहीं, उनके यहां आनेकी जरूरत नहीं है, ताईजीको और किसी—"

"क्यों, इसमें क्या हर्ज है ?"

"नहीं भई, मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूं।"

करुणा अधीर होकर सचमुच ही मीराके पांवमें हाथ लगानेके लिये आगे बढ़ी। मीराने उसको धक्का देकर पीछे हटा दिया और क्षीणतापूर्ण हंसी हंस कर कहा,—"क्यों तुम लोगोंमें तो कोई विकार नहीं है, तुम तो शान्त-सहिष्णु हो—तुम्हें काहेका दुःख है ?"

करुणाने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसकी आंखोंसे टप्-टप् आंसू पड़ने लगे।

मीरा कुछ देर तक स्तब्ध रह कर अन्तमें मृदु स्वरसे बोली,—"शायद वे यह समझ रहे हैं, कि यहां आते ही, भैयासे तेरा विवाह हो गया है ? इसीलिये उनसे इतनी लज्जा करती हो ? क्यों ठीक है न ?"

इसी समय सरस्वतीने आकर मीराको आवाज दी। करुणा मुक्ति पाकर बच गयी। मीरा अपनी माँकी आवाजसे, व्यस्त भावसे

उठना ही चाहती थी, कि सरस्वतीने कहा,—"तुम्हारे इस समयके घर आनेसे, मँझली बहू चिन्तित हो रही हैं ?"

"मँझली मामी किस लिये चिन्तित हो रही हैं माँ ?"

"उसके बड़े भाई और भावज देशमें आये हैं और तुम्हें देखना चाहते हैं। चल न, मेरा भी एक बार कलकत्ता जानेका इरादा है। मैंने अरुणसे कहा है, वह कल ही हम लोंगोंको कलकत्ता पहुंचा देगा।"

मीराने विशेष कुछ नहीं कहा। उसने कुछ देर चुपचाप माँकी ओर देख कर कहा,—"ताईजी कहां हैं ?"

सरस्वतीके उत्तरसे मालूम हुआ, कि वे अरुणके साथ अपने 'देवत्र' का हिसाब-किताब मिला रही हैं। मीराने एकदम उनके पास पहुंच कर आवाज दी,—"ताईजी !"

अरुन्धतीने सिर उठा कर देखा। मीराने फिर कहा,—"तुम्हारे और सब लड़के-लड़कियोंको अपने विषयमें स्वाधीनता है, पर मुझे अपने विषयमें नहीं ?"

मीराके आक्रमणका ढङ्ग देख कर अरुन्धतीने चुपचाप उसकी ओर देखा और अपने कागज-पत्र बन्द करने लगी।

मीराने कहना शुरू किया,—"कलकत्ता गोल-मालमें पड़ कर पढ़ना नहीं हो सकता था, इसलिये तो मैं घर आई थी, और तुम अब मुझे फिर फिर वहीं जानेको कहती हो ?"

"मीरा, तुम्हारी माँकी इच्छा ऐसी ही है।"

"माँकी इच्छा है—तुम्हारी इच्छा नहीं ?"

"हम लोगोंकी इच्छाकी बात छोड़ दे—तेरी क्या इच्छा है यह बतला !"

मीराने मुंह नीचा करके पहलेसे मृदु स्वरमें कहा,—"मैं तो अभी पढ़ूंगी—मुझसे अभी किसीको और तरहकी कोई बात नहीं करनी चाहिये।"

"अच्छी बात है, तुम जब तक यहां रहोगी, तब तक तुझसे कोई कुछ नहीं कहेगा, पर जब यहांसे और कहीं जायगी, उस समयकी जिम्मेदारी कौन लेगा बतला तो ?"

मीराने कुछ चिड़चिड़े ढंगसे कहा,—"ऐसी दशामें मैं यहांसे कहीं जाऊंगी ही नहीं, चाहे मुझे इस बार परीक्षासे रह जाना पड़े। पर और जगह रहनेकी जो बात तुम कह रही हो, उसके जिम्मेदार भी भैया हैं, जिन्होंने ताऊजी और पिताजीका जहां जो कुछ मसाला था, उसको और तुम्हारे गहनों तकको हथिया कर इन भिखमंगोंको इकट्ठा किया है ! बतलाओ तो तुमने अपने शरीरके गहने भैयाको क्यों दे दिये ? और अब कहती हो, कोई जिम्मेदार नहीं है ?"

अरुन्धतीने मीरासे कुछ न कह सरस्वतीको बुलाकर कहा,—"उनको लिख दो छोटीबहू, कि वे इस तरह जल्दी न मचायें। इसकी परीक्षा हो जाय, फिर जो कुछ होना होगा, होगा। इस समय इसको वार-वार विरक्त करनेसे कैसे काम चलेगा ?"

"लेकिन बहन, तो वे लोग—"

"क्या करेंगे वे लोग ? यदि अधिक गड़बड़ करेंगे, तो मैं कलकत्ते ही नहीं जाऊंगी ! ताईजी, और सब लोगोंके ऊपर तो तुम

कुछ दौरात्म्य नहीं करती और यदि मेरी बार ऐसा पक्षपात करोगी, तो—अच्छा, बताओ तो तुमने भैयाको इतने रुपये क्यों दिये हैं? वह भी मांकी बातोंमें आकर जो मनमें आता है, सो कर रहे हैं ! मैं—"

अरुन्धती मीराको शान्त करनेके लिये उसकी पीठ पर हाथ फेरती हुई बोली,—"तू थोड़ी शान्त हो जा, तेरी इच्छाके बिना कुछ नहीं होगा—चुप रह, मुझे हिसाब सुनने दे। यह क्या, अरुण उठ कर चला गया है?"

सरस्वतीने विरक्त भावसे कहा,—"अभी चला गया? वह तो उसी वक्त उठ गया था, जब तुम्हारी लड़की रणमूर्त्ति धारण कर यहां आई थी। बहन, तुम भी इसकी बातोंमें आकर—"

अरुन्धतीने उसकी बात काट कर कहा,—"इसकी बातें सुननी ही पड़ेंगी छोटीबहू, इस समय विरक्त करनेसे काम नहीं चलेगा ! तू क्यों घबराती है? साफ बात लिख दे, इसमें कुछ अनुचित नहीं है।"

"सनत् कब घर आयेगा? वह आ जाय तो मेरी जान बचे।" कहती हुई सरस्वती असन्तुष्ट भावसे चली गयी।

परन्तु उसकी अधीर प्रतीक्षा सफल नहीं हुई, सनत् नहीं आया, सिर्फ उसका एक पत्र आया। 'वह और उसका मित्र प्रमथ, खद्दर-प्रचारके काममें पी०सी० रायके पास न जाने कहां गांव-गांवमें पिकेटिंग करते फिर रहे थे, पुलिसने उनकी इस तरहकी स्वाधीनता सहन न कर कुछ ऐसे कारण उत्पन्न कर दिये हैं, जिनसे उन दोनोंको कुछ दिन तक हाजतमें रहना अनिवार्य हो गया है और इसके बाद जेल भेजे बिना निश्चिन्त रहेंगे, ऐसी आशा करना ही अन्याय है। इसलिये, आप

लोगोंसे कुछ दिनके लिये विदा लेनी पड़ रही हैं। मांने तो मुझसे कभी कोई आशा नहीं की थी, सिर्फ चचीजी ही के लिये दुःख है, कि मैं उनका काम पूरा करके न आ सका ! पर जब मां भी इस विषयमें साथमें जुड़ी हुई हैं, तो मैं आशा करता हूं, कि मेरे विना कुछ काम न रुकेगा। मेरा काम अरुणके द्वारा मां करा सकती हैं। मां और चचीजीको प्रणाम, बहनको प्यार, करुणाको आशीर्वाद और अरुण भयाके लिये थोड़ीसी श्रद्धाका निवेदन करके, मैं कुछ दिनके लिये विदा होता हूं—

यह समाचार इस बार पहलेसे भी अधिक सांघातिक होकर सब लोगोंके हृदयमें लगा। सरस्वती तो जमीन पर गिर कर रोने लगी, अरुणके कुल काम बन्द हो गये । उसको सनत् ही ने कुछ दिन तक साथ रहकर नये कार्यक्षेत्र और नये जीवनमें डाला था ! सनत् फिर जेल जा रहा है, इस खबरने उसको एकदम किंकर्त्तव्यविमूढ़ कर दिया। मीरा निर्वाक् निस्तब्ध थी, मानों पत्थरकी मूर्त्ति हो। केवल अरुन्धती सबकी खबर लेती और सान्त्वना देती हुई कहती थी,— "मैं जानती हूं, कि वह इस घरके लिये इस संसारमें नहीं आया है, इसी लिये ऐसी घटनाएं होती हैं। एक बार इस बातको भूल जानेसे हम लोगोंने करुणाको भी उसके साथ जोड़ दिया है। मुझे अपनी उसी भूलका करुणाके द्वारा प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। मैं जानती हूं, वह हम लोगोंके लिये नहीं उत्पन्न हुआ है।"

सरस्वती अश्रुरुद्ध कण्ठसे जेठानीकी बातको और भी पुष्ट करनेके लिये बोली,—"ऐसे लड़केका विवाह करके क्या दूसरोंकी लड़कीको

जानसे मार डालना है ? बहन, तुम यह ठीक ही कहती हो, कि इसका विवाह नहीं करूंगी ।"

"जिसको करना है, उसके कपालमें लिखी हुई रेखको क्या कोई मिटा सकता है छोटीबहू ?" यह कह कर अरुन्धतीने अरुणकी ओर देख कर कहा,—"अरुण, अब पहलेकी तरह फिजूल दौड़-धूप न करना, वह इस घरमें नहीं रहेगा—उन्होंने जिसे अपना घर समझा है, वार-वार वे तो वहीं दौड़े जा रहे हैं, व्यर्थ कष्ट न उठाना। वह तो सर्वसाधारण मनुष्योंसे अधिक कोई रियायत भी नहीं चाहेगा, यह तो तुम तभी देख चुके हो ! इसी लिये पिताजी उसको अपने घरके कामोंसे मुक्त कर गये हैं। जिनको घरके साथ बांध गये हैं, उन्हें चाहिये, कि वे अपने कामको न भूलें ।"

दो-तीन दिन बाद अरुण जिस समय देवत्रके काममें लगा हुआ था, मीरा उसके पास आकर खड़ी हो गयी। मीराका मुंह सूखा हुआ था। आज इस असम्भव बातके सम्भव हो जानेसे अरुणने चौंक कर उसके मुंहकी ओर देखा, तो उसे मालूम हुआ, कि किसी विषयमें दृढ़ प्रतिज्ञा करके मीरा मेरे पास आई है। उसके उस प्रतिभा और दृढ़ सङ्कल्पसे तम-तमाते हुए मुंहकी ओर देखनेमें आज अरुण जरा भी कुण्ठित नहीं हुआ। और अरुण उसके मुंहकी ओर देख रहा है, यह समझ कर भी आज मीरा लज्जित नहीं हुई। उसने स्पष्ट स्वरसे कहा,—"अरुण बाबू, आपने आगे क्या करनेका विचार किया है ?"

मीराके प्रश्नसे अरुणको जरा भी बुरा नहीं लगा,—उसने धीरेसे उत्तर दिया,—"ठीक नहीं कह सकता ।"

"अभी तक ठीक नहीं कह सकते ? इतने बड़े अन्यायके बाद भी क्या करना होगा, यह कोई सोचनेकी बात है ? आप कुछ बात अवश्य निश्चित कर चुके हैं ।"

अरुणने अपने नेत्र नीचे करके कहा,—"आप ही बतलाइये—"

"अच्छी बात है, मैं ही बतलाती हूं । जिसके लिये मेरे भाईको, मेरे बाबाजीके वंशके गौरवको—इतने अत्याचार सहने पड़ रहे हैं, हम सब लोग मिलकर वही काम करेंगे, अपने गांवके आदमियोंको वही काम करना सिखायेंगे—देशके हरएक आदमीको अपने दलमें मिलायेंगे, समझ गये हो न ?"

"अरुणने श्रद्धापूर्ण, गम्भीर दृष्टिसे मीराकी ओर देख कर चुपचाप उसकी बातोंका अनुमोदन किया ।

मीरा अरुणकी वह निःशब्द सहानुभूति पाकर दूने उत्साहसे बोली,—"तो अब सोच-विचारमें समय नष्ट न कीजिये, आजसे ही काम आरम्भ कर दो । गांव भरमें 'देवत्र' की जो अच्छी-अच्छी जमीनें हैं, उनमें जिससे बढ़िया कपास उत्पन्न हो, ऐसा प्रबन्ध कीजिये। उस कपाससे सूत तैयार किया जाय । जुलाहेको बुला कर खड्डी लगवाइये, खद्दर तैयार हो जाय । और उस खद्दरको गांव-गांवमें बेचनेका प्रबन्ध कीजिये ।"

अरुणने सिर नीचा किये हुए कहा,—"ऐसा ही होगा ।"

"आप इस काममें एक दिनकी भी देर न कीजिये, बस आज ही काम आरम्भ कर दीजिये ।"

मीराके उत्तेजित शरीरको पीछेसे अपनी गोदमें खींचकर अरु-

न्धतीने स्नेहपूर्ण स्वरसे कहा,—"पगली, पहले अच्छी कपासके बीज मंगाने पड़ेंगे, जमीन अच्छी तरह तैयार करनी होगी और उसके काम करनेके लिये कुछ उत्साही स्थिर प्रतिज्ञ आदमियोंका इन्तजाम करना होगा, नहीं तो—"

"क्यों, अरुण बाबू हैं, तुम हो—"

अरुन्धती धीरे-धीरे गर्दन हिलाती हुई और क्षोभपूर्ण हंसी हंसती हुई फिर कुछ कहना चाहती हैं, यह देख कर मीरा और भी अधिक अधीर होकर बोली,—"मैं करूंगी, मैं आजसे पढूंगी नहीं। पढ़नेसे उन लोगोंको क्या लाभ हो सकता है, जिनका जीवन इतना विड़म्बना पूर्ण है—जो अपनी इच्छासे कुछ करनेकी शक्ति नहीं रखते, विद्या उनके लिये सबसे पहली जरूरी वस्तु नहीं है। अरुण भैया, तुम कपास तैयार करा दो, जुलाहोंका इन्तजाम कर दो, मैं और करुणा चरखा काता करेंगी और अपने गांवमें चरखा कातनेवाले आदमी तैयार करेंगी। इसके लिये आजसे मैं सब कुछ छोड़ती हूं।"

अरुन्धतीने मीराको फिर छातीसे लगा कर कहा,—"आजसे पिताजीका 'देवत्र' सार्थक होने लगा है मीरा, आज तेरे बाबा तुम्हें आशीर्वाद दे रहें हैं।"

यह सुन कर मीराके नेत्रोंसे थोड़ेसे गर्म आंसू निकल पड़े। उसने नीचे झुक कर ताईजीके पावोंकी धूलि लेकर अपने माथे पर लगा ली।

अरुणकी ओर देख कर ताईजीने कहा,—"मैं भगवान्‌से यह प्रार्थना करती हूं कि अरुण, तुम मीराके इस निर्भर भाव और सम्मानको रख सको।"

अरुणने भी उनके चरणोंकी धूल लेकर सिर नीचा कर लिया।

२५

अरुण अपनी छोटीसी गठरी बांध कर जैसे ही उठा तो उसने देखा, कि मीरा न जाने कबसे उसके पीछे खड़ी हुई है। उसकी अकुण्ठित दृष्टिके सामने अरुणने अपनी आंख नीची कर ली। मीराने पूछा,—"कहां जा रहे हैं? उपाधि परीक्षा देनेके लिये?"

अरुणने मृदु स्वरसे उत्तर दिया,—"हां।"

"क्या न्यायवागीश हुए विना आपका काम नहीं चल सकता?"

इस बार कुछ उत्तर न पाकर मीराने कुछ गरम होकर कहा,—"मान लिया, कि आपकी तबीयत कुछ महीनोंमें ही भर गयी है, पर यह जो कपासकी खेती और खद्दर बुनाईका काम हो रहा है, इसकी क्या दशा होगी? क्या आपको यह बात नहीं सोचनी चाहिये?"

अरुणने नीचे मुंह किये हुए ही उत्तर दिया,—"बड़ी मां और छोटी मां हैं, हारू है, आपको जिस कामकी जरूरत हो, इनसे करा सकती हो—"

"अर्थात् आपको अब इन कामोंसे न तो दिलचस्पी रही है और न आप इनकी जरूरत ही समझते हैं, यही तो आपका विचार है? पर जिस दिन मैंने आपके साथ यह काय आरम्भ किया था, आपने उस दिन यह बात क्यों नहीं बतला दी थी?"

अरुण कुछ देर चुप रहकर अन्तमें बोला,—"पड़ी हुई वस्तुको काममें लगाना ही बुद्धिमानी है। आपको भी तो परीक्षा देने जाना होगा?"

"मैं जाऊंगी ? आपसे यह बात किसने कही है ?"

अरुणको फिर अपने काममें मन लगाते हुए देखकर मीराने चिढ़ कर कहा,—"आप यह न समझियेगा, कि मैं आपके मनकी बात नहीं समझी हूं। मैं जानती हूं, मुझे परीक्षा देनेके लिये भेजनेका यह भी एक षड्यन्त्र है। लेकिन मैं आज आपसे यह पूछना चाहती हूं, कि आपकी ऐसी व्यक्तित्वहीन प्रकृति क्यों है ? आपको जो आदमी जैसा समझा देता है, आप उसीमें 'हां-हां' करने लगते हो ! यह आपका कैसा स्वभाव है ? अपने आस्तित्वकी, अपने कर्त्तव्याकर्त्तव्यकी वस्तु आपके अन्दर क्यों नहीं है ?"

अरुण मीराके इस तेजपूर्ण और सरल आक्रमणसे जैसे एक ओर कुछ झेंपा वैसे ही दूसरी ओर विस्मय और प्रशंसापूर्ण दृष्टिसे मीराकी ओर देख कर मृदुस्वरसे बोला,—"जिसका स्वतंत्र व्यक्तित्त्व या आस्तित्त्व विधाताने ही नहीं रचा है, उसके पास वह कैसे रह सकता है, मीरादेवी ?"

अरुण कुछ और भी कहना चाहता था, पर मीरा उसकी बात काट कर तेजपूर्ण स्वरसे बोली,—"अपने इस मन्तव्य और धारणाको एक ओर रख दीजिये ! क्या विधाताने आपको मनुष्य नहीं बनाया है ? मान लिया कि अवस्थाके चक्रमें पड़ कर आपको दूसरेकी सहायतासे बड़ा होना पड़ा है, किन्तु उससे आप अपने मनुष्यत्त्वको क्यों छोटा करते है ? मनुष्यत्वको अपने पहले जोवनमें तो दूसरोंकी सहायता लेनी ही पड़ती है, प्रत्येक बच्चेका पालन-पोषण करनेकी मनुष्यसमाजके ऊपर जिम्मेदारी है। जिसके मां-बाप नहीं होते या

व्यवस्थाका सुयोग नहीं होता, उसको मनुष्यसमाजके आदमी आश्रय देकर, उसके मनुष्यत्वका विकास करनेके लिये क्या मनुष्यसमाज दावी नहीं है ? पर यदि इस सहायताके बदले वह बच्चा अपना व्यक्तित्व-ही न प्राप्त कर सके तो वह मनुष्य कहां बन सका ? जिनके हाथों द्वारा वह सहायता आई थी, उनके ऊपर अनुचित कृतज्ञताके आधिक्यसे, यदि वह सहायता प्राप्त करनेवाला व्यक्ति, जिन्दगी भर उनकी नौकरी करनेके सिवा अपने मनुष्यत्वके विकासमें स्वाधीनता न प्राप्त कर सके तो कहना होगा, कि उसका उपकारके बदले अपकार ही हुआ है।"

अरुण मीराके इन युक्ति और तेजपूर्ण वाक्योंसे धीरे-धीरे मोहित होता चला जा रहा था। मीराने जब अपनी बात समाप्त कर प्रश्न-पूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखा, तो अरुणको होश हुआ। उसने धीरे-धीरे उत्तर दिया,—"यदि सहायक व्यक्तिके किसी काममें अपने जीवनकी कोई वस्तु त्याग करनेकी शक्ति न हो सकी हो, तो क्या वह मनुष्य समझा जा सकता है मीरादेवी ?"

"इसका भी तो एक नाप-तौल है अरुण बाबू ! आपने देशोपकार का काम अपने हाथमें लिया था, किन्तु आपकी कृतज्ञताकी बाढ़से इतना बड़ा कार्य भी बीचमें रुका जाता है। मैं आपसे पूछती हूं, कि क्या यही मनुष्यत्वके लक्षण हैं ?"

"मैं आपके हृदयमें अपनी ओरसे यह मिथ्या धारणा रहने देना नहीं चाहता। मैं स्वीकार करता हूं, कि यह काम मैं देशभक्तिके लिये नहीं कर रहा था। मेरे जीवनमें तो सिर्फ एक वस्तु है, उसको आप चाहे जिस नामसे पुकार सकती हैं।"

"यदि ऐसी बात है, तो ताईजीकी उत्कट इच्छा होते हुए भी आपने करुणाको उनके पास क्यों नहीं ला दिया था? जिस समय ताईजी और मांके पास कोई नहीं था, मैं भी जब मामाके घर चली गयी थी, उस समय आप इस कृतज्ञताको भूल कर इतनी दूर कैसे पड़े रहे? घर क्यों नहीं आये? हम लोगोंसे भी अधिक कष्ट सहन कर इतने वर्ष क्यों बिताये थे? उस समय भी क्या इनको आपकी जरूरत नहीं थी?"

अरुण कुछ देर तक निरुत्तर रहकर अन्तमें बोला,—"उसको भी मैं यह नहीं समझता, कि मैंने अपने जीवनकी सत्तासे विरुद्ध कार्य किया है।"

मीराने भृकुटी-कुटिल करके कहा,—"अच्छा, वह भी आपकी स्वाभाविक इच्छा नहीं थी? वह भी इसी कृतज्ञताका नामान्तर मात्र था? ऐसी दशामें मुझे आपसे कुछ नहीं कहना है। जिनके साथ आपका इस कृतज्ञताका सम्बन्ध है, उनके किसी एक तरहकी व्यवस्था देनेके लिये आपने वह कष्ट स्वीकार किया था, लेकिन आज उनके जीवनके सबसे बड़े काममें आप जो यह अनास्था प्रकट कर रहे हैं, इससे आपके उस कृतज्ञताके शास्त्रमें क्या कुछ कमी नहीं पड़ती है?"

अरुणने फिर कुछ देर तक चुप रह कर और दृष्टि उठा कर मीराकी ओर देखा और एक प्रकारके अस्वाभाविक स्वरसे कहा,—"नहीं मीरादेवी, कभी नहीं पड़ेगी। उनके कामकी साधारण सहायताके लिये उनके जीवन मार्गमें मेरे द्वारा कोई कूड़ा-कर्कट न आ सके, मैं

इसकी चेष्टा करता रहता हूं। वैसी दशामें उनसे बहुत दूर चला जाना ही मेरे शास्त्रकी विधि है। आप जिसको कृतज्ञताके नामसे पुकारती हैं, मुझे ठीक मालूम नहीं है, कि उसका यह नाम उचित है या नहीं, परन्तु करुणा और उसके भाईके शरीरके खूनका कतरा-कतरा स्वर्गीय मृत्युञ्जय भट्टाचार्यकी इच्छाको पूरी करनेके लिये तैयार रहना चाहिये। करुणा, उसको पूरा न कर सकी, पर आप ईश्वरसे प्रार्थना करें, कि मैं पूरा कर सकूं। मैं उनके—"

"करुणा पूरा नहीं कर सकी? आप क्या कह रहे हैं, अरुणबाबू? उसने जो किया है, उसको आप जानते हैं?"

"जानता हूं, वह अभी लड़की है। और यह भी जानता हूं, कि आप लोग उसके लिये अपने मनमें कितना कष्ट पा रहे हैं!"

"आप क्या यह कहना चाहते हैं, कि करुणाको नौ-कौड़ी क्या ऐसे ही और किसीके लड़केके साथ विवाह कर लेना चाहिये था, हम लोगोंको निश्चिन्त करनेके लिये?—जैसे आप देशका काम करनेकी इच्छा मनमें रहते हुए भी, मांके कहनेसे उसको नष्ट करनेके लिये न्यायवागीश होने जा रहे हैं? क्यों, ठीक है न?"

"मेरे न रहनेसे आपका काम एकदम नष्ट हो जायगा, इस पर तो विश्वास नहीं कर सकता। परन्तु इस समय इस कामकी विशेष आवश्यकता न होनेके कारण लोग आपसे आशा रखते हैं, कि आप भी अपनी पढ़ाई समाप्त कर लेंगी।"

"अर्थात् आपकी देखा-देखी मैं भी परीक्षा देने जाऊंगी? इस तरह आपके कामोंका अनुकरण करनेकी इच्छा, मुझमें कबसे उत्पन्न

हुई है, यह मैं तो जानती नहीं, पर और सब लोग जानते हैं। अच्छा तो अरुणबाबू, अब आप न्यायवागीश बननेके लिये जानेमें विलम्ब न करें। यदि हो सके और किसी अध्यापकका स्थान खाली हो, तो नौकरी भी कर लेना। भैया आ जायें तब मैं देखूंगी, कि अपना काम चला सकती हूं या नहीं। वे जब तक नहीं आयेंगे, तब तक मैं इन्तजार करूंगी। आप यह निश्चय रखिये, कि मांकी इस परीक्षा दिलानेकी चाल और उस दस-हजारी मन्सबदारीका काम मैं कभी नहीं करूंगी, यह बात आप मांसे भी कह दीजिये। मैंने इला बहनको भी यह बात लिख दी है। बड़े मामाके देहान्त हो जानेसे वह भी इस बार परीक्षा न दे सकेगी। वह, मैं और करुणा तीनों मिल कर हम अपना काम चलायेंगी। आप चले जाइये, मुझे आपकी सहायताकी जरूरत नहीं है। मैं देखूंगी, कि आपको छोड़ कर हम लोग कुछ कर सकती हैं, या नहीं।"

"ईश्वर आपकी प्रत्येक बातको सफल करें। मैं यदि कभी आया, तो आपके सफल कार्यों को देखकर कृतार्थ हो जाऊंगा। बाबाजी का 'देवत्र' इसी तरह सफल होना चाहिये।"

"तो क्या आप सच-मुच ही यहांसे चले जा रहे हैं? अच्छा तो जाते समय क्या मेरा एक संदेह दूर करते जायंगे? ताईजीने कभी ऐसी व्यवस्था नहीं की होगी, मांके कहनेसे, लाचार होकर ही उनको इस विषयमें सम्मति देनी पड़ी है, ठीक है न?"

अरुणने कुछ उत्तर नहीं दिया। यह देख कर मीराने कुछ तीव्र स्वरसे कहा,—"मेरी मां ऐसी ही है! भैयाने जबसे उनको दस

हजारी मन्सबदारीका लोभ दिखाया है, तबसे फिर उनकी बुद्धि बदल गयी है। अच्छा इन बातोंको छोड़ दो। जब तक ताईजी हैं, तब तक की तो कोई बात ही नहीं, किन्तु उनके शरीर की अवस्था दिन पर दिन जैसी खराब होती चली जा रही है, उसको देखते हुए वे अधिक दिन तक नहीं बचेंगी, मुझे ऐसी आशा नहीं होती अरुण बाबू! अब की बार भैयाजीके घर आनेपर हम लोग ऐसी व्यवस्था करेंगे, जिससे उनको फिर बाहर न जाना पड़े—घरमें ही ताईजी और मांके पास रहें। आप इस समय परीक्षा देने जा रहे हैं, तो जाइये, पर कभी आपने उस वक्तकी बात्त भी सोची है? ताईजीके अभावमें एक आप ही तो इस 'देवत्र' के मालिक होंगे। मुझे करुणाके लिये जरा भी चिन्ता नहीं है, पर आपमें इस कृतज्ञताके भावका जितना प्रावल्य है, तब मेरे जीवनके रास्तेका कूड़ा-करकट हटानेके लिये मुझे आप यहांसे निकाल तो नहीं दोगे? पर यदि किसीने ऐसा प्रयत्न किया भी तो मुझे अपने जीवनके व्रतसे कोई नहीं टला सकेगा—पर फिर भी पूछने की इच्छा होती है, कि उस वक्त आप क्या करेंगे? आपके 'देवत्र' से मैं देशका काम कर सकूंगी न? इससे आपकी कृतज्ञतामें कहीं बाधा तो नहीं पड़ेगी?"

अरुणको फिर भी उत्तर देते हुए न देख कर, मीराने तीक्ष्ण नेत्रों से कुछ देर तक उसकी ओर देख कर कहा,—"अच्छा तो आप जाइये।"

"आपसे सिर्फ एक प्रार्थना है—" यह कहनेके साथ ही अरुणने मुंह ऊपर उठाया, तो मीराने देखा, कि उसका मुंह मुर्देकी तरह सफेद

हो उठा है। अरुणने जिस हाथसे अपनी गठरी पकड़ रक्खी थी, वह स्पष्टरूपसे कांप रहा था। अरुणको फिर चुप देख कर मीराने कहा,—"कहिये, क्या कहते हैं ?"

फिर भी कुछ देर तक अरुणने उत्तर नहीं दिया। फिर कुछ वेग-पूर्वक कहा,—"सनन्‌के घर आ जाने पर—और ताईजी यदि सच-मुच ही चली जायं तो तब एक बार—नहीं—नहीं कैसे सम्भव हो सकता है ?"

मीराने सहसा विस्मित हो कर कहा,—"आप अपना मतलब तो साफ-साफ कहिये। क्या आप कोई ऐसी निरुद्देश्य यात्रा कर रहे हैं, जो हम लोग आपके पास खबर भी नहीं भेज सकेंगे ? ताईजी अपने शरीरकी ऐसी अवस्थामें आपको भेज रही हैं और आप भी चले जा रहे हैं, यह व्यापार क्या आप लोग अपनी सम्मतिसे कर रहे हैं ? क्या वे यह भी जानती हैं, कि आप हमेशाके लिये चले जा रहे हैं ?"

अरुण कुछ उत्तर देना चाहता था, पर उसके गलेसे आवाज नहीं निकली। मीरा यह देख कर हंसती हुई बोली,—"आपकी अस्वी-कार करनेकी चेष्टा व्यर्थ है। झूठी बात आपकी जबानसे ही नहीं निकल सकती—मैं तो आपसे सच्ची बात ही सुनना चाहती हूं। क्या आप सदाके लिये चले जा रहे हैं ?"

"हां।"

"आप ताईजीकी बात नहीं सोचते ? आपको कुछ डर नहीं लगता ?"

"खबर मिली है, कि सनत् एक दो दिनके भीतर ही घर आ जायगा।"

"भैया आ रहे हैं? फिर भी आप उनसे बिना मिले ही चले जा रहे हैं?"

"उनके आ जाने पर तो मेरा जाना सहज नहीं है मीरादेवी!"

"तो क्या आपका जाना आवश्यक है?"

"हां।"

"तो क्या आप यहांकी खबर पानेका मार्ग भी बन्द कर देंगे? यदि ताईजी शीघ्र ही चली गयीं?"

"उन्होंने यह बात समझ कर ही मुझको आशीर्वाद दे दिया है।" बड़े कष्टसे यह बात कह कर अरुणने दूसरी ओर मुंह फेर कर कहा,—"समय बीत रहा है, मैं—"

"कुछ थोड़ी देर खड़े रहिये! आप यह निश्चय समझ रखिये, कि मां, ताईजी जैसे गुरुजनको, ऐसे असमयमें, और आपको, जिस बातके लिये इतना कष्ट देना चाहती हैं, उनकी यह चेष्टा व्यर्थ होगी। उन्होंने बाबाजीके आगे जो अपराध किया है, अभी तक उसका कुछ भी प्रायश्चित्त नहीं हुआ, पर अब की बार वे इस पापका दण्ड भोगनेसे नहीं बचेंगी। मुझे विवाहके लिये किसी तरह राजी न कर सकेंगी। आप यदि कभी इस 'देवत्र' पर अधिकार करनेके लिये न आयें, तो आपकी इस त्यागशक्तिको आदर्श रख कर मैं ही आप का कर्त्तव्य पूरा करती रहूंगी। आप चाहे जहां चले जाइये, आपकी इस कृतज्ञताका फल आपको वहीं मिलेगा, यदि ऐसा नहीं हुआ, तो

संसारका नियम बदल जायगा। पर चलते हुए मुझे यह आशीर्वाद दे जाइये, कि मैं आपके छोड़े हुए कार्यमें सफलता प्राप्त कर सकूं !"

मीरा यह कह और अरुणको प्रणाम करके चल पड़ी। चलते हुए उसने पीछे लौट कर देखा, कि अरुण सफेद पत्थरकी मूर्तिकी तरह निश्चल भावसे वहीं खड़ा है। न आंखके पलक झपकते थे और न शरीरमें ही स्पंदन था। मीराने लौट कर उसके पास आकर कहा,—"क्या आपकी तबीयत खराब है? कुछ थोड़ी देर आराम कर लीजिये। इससे आपकी कृतज्ञतामें किसी तरहकी कमी न आ जायगी। मैं ताईजी के पास जाती हूं, आज उनको और दिनोंसे अधिक ज्वर हो रहा है।"

"जाइये, पर जानेसे पहले एक बात और सुन जाइये—जो आपको या संसारके किसी आदमीको, सुनाने समझने देनेकी कभी इच्छा नहीं थी! जिसको बार-बार आप कृतज्ञता कह रही हैं—जिसको आप त्यागशक्ति समझती हैं—आज जिसके कर्त्तव्यका भार आपने स्वेच्छासे अपने ऊपर लिया है, वह आपको कैसा समझता है, इसपर कभी आपने विचार किया है? संसारके किसी भी आदमीको जो बात न जानने देनेके लिये, वह अभी तक प्राण-पणसे युद्ध कर रहा था, आज केवल आपकी जरासी बातसे उसका बांध टूट गया है, केवल कृतज्ञता ही उसका नाम नहीं है, आप यह समझें कि—"

"नहीं मुझे और कुछ सुननेकी जरूरत नहीं है—मैं आपकी और बात नहीं सुनना चाहती—जाइये—आपसे यह बात किसने पूछी है—मैं आपकी किसी बात पर विश्वास नहीं करती !"

"ठीक है—ठीक है मीरा, मैं भी विश्वास नहीं करता !" कहते

हुए सनत् उनके सामने आकर खड़ा हो गया। उसके पीछे ही हास्य-मुखी इला भी थी!

"भैया!" कह कर मीराने सनत्को अपने पास खींचकर उसके कन्धे पर अपना सिर रख दिया। सनत्ने अरुणकी ओर देख कर कहा,—"मुझे इलासे सब बातें मालूम हो गयी हैं। इतने बड़े काममें हाथ लगा कर भी, तुम्हारा वह पुराना कृतज्ञताका ख्याल दूर नहीं हुआ? छिः अरुण भैया! इसी बिरते पर इतने बड़े कर्त्तव्य पालन की तैयारी कर रहे हो? और समस्त विरोधी स्वभाव जिस दुःखके उत्पीड़नसे एक जगह पहुंच कर मिल गये हैं, उस मिलनको अस्वीकार करते हो? मैं इस समय न जाने कैसे समय आ पहुंचा हूं, नहीं तो तुम लोग न जाने क्या कर डालते?"

"सनत्, मुझे यह तो मालूम नहीं था, कि तुम आज ही आ जाओगे।"

"तुम नहीं जानते थे, यह तो अच्छा ही हुआ। इलासे मालूम हुआ है, कि मां बहुत बीमार हैं, चलो उनके पास चलें।"

२६

अरुन्धती मुंह ढांके हुए शय्या पर पड़ी हुई थी और करुणा उनके पास बैठी पंखेसे हवा कर रही थी। 'मां!' कह कर सनत् उनके पैरोंके पास बैठ गया, पर अरुन्धतीने अपना एक हाथ उसकी ओर बढ़ा देनेके सिवा मुंहसे कुछ नहीं कहा। सनत् अपनी मांके हाथको अपने मुंह पर फेरता हुआ बोला,—"मां, शायद अब

तुम्हें छोड़ कर दूर जानेका मौका न मिले, सुना है मीरा और अरुण भैयाने यहां काम आरम्भ कर दिया है।"

"अरुण तो मुझे छोड़ कर चला गया है सन्टू, मीराके लिये वह, तू सबसे पहले अपनी चचीकी साध पूरी कर दे—वह अंधो है—"

कहते-कहते अरुन्धती बीचमें ही रुक कर हांपने लगी।

सनत् मांके पास मुंह ले जाकर बोला,—"अरुण कहां जायगा? देखूं तो सही वह कितना बहादुर है!—वह कैसा जानेवाला है! यह देखो, वह तुम्हारे पैरोंके पास खड़ा हुआ है।—चचीजी कहां हैं करुणा? जरा उन्हें बुलाओ तो! मैं आया हूं, फिर भी उनकी सूरत नहीं दीखती?"

दूसरे कमरेसे म्लान मुखी सरस्वती आकर खड़ी हो गयी। सनत् ने उठकर उनको प्रणाम किया और अभिमान पूर्ण स्वरसे कहा,— "चचीजी, तुम तो बड़ी विचित्र हो, मैं इतनी देरसे आया हूं, फिर भी तुम्हारे दर्शन नहीं हुए।"

"सनत्, मैंने यह नहीं समझा था कि—"

"वह जो कुछ हो चुका है, उसकी बात छोड़ दो। अपनी इस लड़कीको समझानेकी तुम्हारे बाप चक्रवर्तीमें भी ताकत नहीं थी, फिर तुम्हारी तो बात ही क्या है! इस बार हम लोग खूब जोर-शोरसे काम आरम्भ करेंगे, पर उससे पहले मीराका विवाह हो जाना चाहिये। लेकिन बाबा, इस बार तुम्हें वह दस-हजारी जमाई नहीं मिलेगा इसको दूसरोंके हाथमें दे-देने पर न तो मेरा ही काम चलेगा और न—"

"सण्टू, नहीं-नहीं, मैं अपने अरुणको ऐसे अनादरमें नहीं छोड़

सकती। इसको जाने दो। अरुण यहांसे जहां इच्छा हो चला जाय। तुम्हारी चचीने जिसे पसन्द किया है, उसीके साथ मीराका विवाह कर दो—"

सरस्वतीने अरुन्धतीको खाटके पास घुटने टेक कर कहा,—"बहन, अब तक तुमने मेरे हजारों अपराध क्षमा किये हैं, इसको भी क्षमा कर दो! मैं पहले समझी नहीं थी। मँझली बहूने यह लिखा था, कि तुम मीराको परोक्षा देनेके लिये भेज दो, मैं सब ठीक कर लूंगी। जब मैंने यह बात तुमसे कही, तो तुमने अरुणको,—"

अरुन्धतीने उत्तेजित भावसे उठ कर, सरस्वतीकी बातको काट कर कहा,—"हटा न दूं? जो ऐसा अन्धा है, उसे मैं अपने अरुण को क्यों दूं? मैं तो हमेशासे तुम्हारे अन्दर ऐसी ही बातें देख रही हूं, आज अपनी लड़कीके विवाहमें भी तुम्हारी आंख नहीं खुली—वही अन्धापन बना हुआ है!"

"लड़कीके विषयमें क्या कहती हो बहन,—मैंने तुम्हारे अरुणको नापसन्द किया था, अपनी लड़कीसे तो पूछो! इस लड़कीके कामों को देख कर क्या अरुणको पानेकी आशा की जा सकती थी? यह तो—"

"यह ऐसी ही है—सचमुच इसमें चचीजीका कुछ दोष नहीं है। इला, मीराको तो बुला ला। मैंने यहां आ और इन दोनोंके काम देख कर यह अनुमान किया है, कि दो आदमियोंसे काम अच्छी तरह होता है। मीरा भी इस बातको अच्छी तरह समझने लगी है, पर अपना हमेशाका स्वभाव कैसे छोड़ सकती है? इसकी दुष्टता मैं

अभी दूर किये देता हूं और अरुण भैया, तुम्हारा भी अपना दिमाग ठीक करनेका समय आ गया है! घड़ी-घड़ी लड़कपन करनेसे काम नहीं चल सकता। हम लोगोंके सामने बहुतसा काम पड़ा हुआ है।"

सनत्‌ने अरुणके हाथ पर मीराका हाथ रख कर कहा,—"माँ, उठ कर इन दोनोंको आशीर्वाद दो और तुम जल्दी अच्छी हो जाओ। तुम्हारे अच्छे हुए बिना, तुम्हारे ये बाल-बच्चे कोई भी काम अच्छी तरह न कर सकेंगे। चचीजी, इधर आओ, कन्या-जमाताको आशीर्वाद दो।"

"सण्टू, मीरा और अरुणको आशीर्वाद देनेसे पहले मैं तुम्हें आशीर्वाद देना चाहती हूं। तेरे ही एक अनुचित कार्यके कर डालने से जेठानीजी इस असमयमें, बिस्तरे पर पड़ी हैं। यदि इन्हें इस बिस्तरेसे उठाना चाहते हो, तो एक काम और करना पड़ेगा! देखती हूं, पिताजीकी इच्छाने सबकी इच्छाओंको दबा दिया है। अब इस लड़कीको अधमरी क्यों कर रखा है? ले तू भी करुणाका हाथ पकड़, जिससे हमारा यह अन्धेरा घर हमेशाके लिये प्रकाशित हो जाय!"

सनत्, मीरा और अरुणका हाथ छोड़ कर स्तब्ध भावसे खड़ा हो गया! उसके मुंहसे सिर्फ इतना ही निकला,—"चचीजी!" परन्तु उस समय चचीके हाथमें करुणाका हाथ था, उसको एक प्रकारसे खींच कर ही वह सनत्‌की ओर ला रही थी। सनत्‌का यह शब्द एक अत्यन्त विपन्न मनुष्यके शब्दकी तरह सबके कानोंमें ध्वनित हुआ। इसके साथ ही करुणाका कम्पित देह काठ जैसा हो गया और उस

ने गिरनेसे बचनेके लिये दिवारका सहारा ले लिया। अरुन्धतीने अपने ज्वर-तप्त शरीरको खाटसे उठा कर आर्त कण्ठसे कहा,—"क्या कर डाला छोटीबहू ? फिर बेचारीको मार डाला ! तुम्हें यह काम करनेको किसने कहा था ? मैं अपनी करुणाको इसके हाथमें नहीं दे सकती। यह तो माँ, बहन और स्त्रीके लिये उत्पन्न नहीं हुआ है। फिर तुमने बेचारी लड़कीको क्यों दुःख दिया ? मेरी गोदमें लाओ इसको।" कहते-कहते अरुन्धती खाटसे उठना चाहती थी, मीराने रोते हुए उसको रोक कर कहा,—"तुम उठो न ताईजी, मैं तुम्हारी करुणाको तुम्हारे पास लाये देती हूं। भैया, क्या विवाह करते ही संसारका कोई काम नहीं हो सकता ? अभी-अभी तुम्हीं ने तो कहा है, कि एकके स्थानमें दो आदमियोंसे काम अच्छा होता है ! तो क्या तुम्हारे जीवनमें विवाह असम्भव है ? यदि तुम्हारा ऐसा विचार था, तो फिर तुमने क्यों—"

सनतूने धीर कण्ठसे कहा,—"मैंने तुम्हारा विवाह क्यों किया, यही कहना चाहती हो न ? इसका उत्तर यह है, कि तुम और अरुण भैया दोनों, दोनोंके पास रह सकोगे, लेकिन मेरे जीवनको तो तुम लोग जानते ही हो ? इलासे माँकी इस भयङ्कर बीमारीकी बात सुन कर ही घर आया हूं। मुझे यह ख्याल हुआ कि कहीं सत्याग्रहके काममें फंस जाने पर बाबाजीकी तरह अन्त समयमें माँसे भी न मिल सकूं। इला भी तुम्हारी सेवा करनेके लिये आई है माँ !"

अरुन्धतीने पुत्रकी ओर शान्त भावसे देख कर कहा,—"लेकिन तू क्यों आया है सन्टू, मैं तो तेरे न आनेसे जरा भी दुःखित न

होती ! मैं तो समझती हूं तू 'देवत्र' का काम कर रहा है—जिस कामका भार तुम्हारे बाबाजी मेरे ऊपर डाल गये हैं, मैंने तो तुझे उसी कामके नाम पर छोड़ दिया है।"

सरस्वतीने जेठानीकी बात काट कर कहा,—"तो क्या, इसलिये यह अपनी मांको भी एक बार देखने न आता ? देवताका ऐसा काम देवता ही को मुबारिक रहे—मनुष्यको तो मनुष्यकासा व्यवहार करना ही पड़ेगा। मैंने ही एक दिन करुणाके साथ सनत्के विवाहकी बात सुन कर क्रोध किया था बहन, लेकिन इस वक्त मैं ही कहती हूं, कि यह तुम लोगोंका कर्तव्य है, तुम्हारा जीवन तो सनत् बड़ा गौरवमय है, फिर इस बेचारी लड़कीके ऊपर तुम्हें दया क्यों नहीं आती ?"

सनत् कुछ उत्तर नहीं दे सका। उसने अपनी माँके मुंहकी ओर देखा। अरुन्धती करुणाको छातीसे लगाये हुए पत्थरकी मूर्त्तिकी तरह निश्चल थी ! इलाका शुभ्र मुखमण्डल और भी सफेद हो उठा था। मीरा चुपचाप करुणाकी ओर देख रही थी। इतनी देर बाद अरुण बोला,—"चचीजी, आप ऐसी बात क्यों कह रही हैं ? करुणा को तो कोई दुःख नहीं है। यदि वह सनत्के लिये एक नहीं अनन्त जीवन भी बलिदान कर दे, तो यह उसके लिये गौरवकी बात है ! उसको आप लोगोंके स्नेह और जगद्धात्री ताईजीकी गोदमें स्थान मिला हुआ है, फिर उसको दुःख कैसा ?"

सनत्ने अरुणकी ओर देख कर विमूढ़ भावसे कहा,—"भैया, तुम्हीं मुझे, मेरा कर्तव्य समझा दो ! बाबाजी, तुम्हें जिस कार्यके

लिये नियुक्त कर गये हैं, मीराके साथ तुम्हें उस काममें विशेष सफलता प्राप्त होगी । इसीलिये उस अभिमानिनी मीराने स्वयं अपनेको 'देवत्र' के काममें लगा दिया है ! लेकिन मुझे तो वे स्वाधीन कर गये हैं, मैं तो अपना यह जीवन—"

अरुणने सनत्‌को रोक कर कहा,—"भाई, तुम भूल कर रहे हो ! तुम्हीं तो एक दिन कह रहे थे, कि मैं इस बातका अनुभव करता हूं, कि वे मुझे क्या दे गये हैं ! हम लोगोंको वे अपने इस छोटेसे गांवका उपकार करनेका भार दे गये हैं और तुम्हारी माँको जो प्रधान आदेश दे गये हैं, उसका भार तुमने उठा लिया है ! इस देशके समान दुखी और कौन है ? इस तरह भगवान् और आदमियोंके दिये हुए दुःखको चुपचाप कौन सह लेता है ? तुम तो भाई, देवताके काममें लग कर अपने बाबाकी आज्ञाका ही पालन कर रहे हो ! तुम्हें शायद इसीलिये उन्होंने इतनी स्वाधीनता दी थी ।"

मीराने रुके हुए स्वरसे कहा,—"और भी एक आदमी मनुष्यके दिये हुए दुःखोंको प्रसन्नतासे सहन कर रहा है—वह करुणा है । भैया, क्या तुम यह समझ रहे हो कि मैं इसी तरह जिन्दगी बिता दूंगा और करुणाका तुम्हारे साथ विवाह होनेसे उसका जीवन व्यर्थ हो जायगा—यही न ? परन्तु तुम्हारे साथ विवाह न होनेसे तो उस को और भी अधिक दुःख होगा भाई !—"

इला अभी तक चुप थी । इस बार उसने सनत्‌के पास जाकर कहा,—"सनत् भैया, धीरे-धीरे अन्यायसे और भी अधिक अन्याय होता चला जा रहा है । अब तुम इन्कार न करो !"

"तुम भी यही बात कहती हो इला? तुम कल ही तो कह रही थी, कि अब मैं भी तुम लोगोंके साथ मिल कर काम करूंगी। मेरा जीवन अब स्वाधीन है और आज हो तुम्हारी राय बदल गयी? मेरे इस जीवनके साथ करुणाको बांध कर, उसको क्या सुख पहुंचानेकी आशा कर रहे हो?"

"खैर—सनत् भैया, दुःख ही सही, उसे तुम इस दुःखका अधिकार ही दे दो—यही सब लोग तुमसे आशा करते हैं—अब हीला-हवाला न करो।"

सनत्‌ने अरुन्धतीकी ओर देख कर कहा,—"माँ, क्या यही तुम्हारी भो आज्ञा है? मैं यह जानता हूं, कि करुणाके सब दुःखोंकी जड़ मैं ही हूं—मेरे लिये ही उसका जीवन नष्ट हुआ है, पर यदि इस समय मैंने उसको ग्रहण कर लिया, तो क्या वह भार सहन कर सकेगी? अभी तक मेरे दिये हुए सब दुःखोंको बिना किसी आपत्तिके उसने अपने सिर पर उठा लिया है, क्या यह भार भी उठा लेगी? मुझे मेरा कर्तव्य बतला दो! तुम्हारी आज्ञा, मैं ईश्वरकी आज्ञा समझता हूं।"

अरुन्धतीने धीरे-धीरे उत्तर दिया,—"करुणा इसीलिये संसारमें आई है, कि वह तुम्हारे भारको अपने सिर पर उठाये! तुम उसको यह अधिकार दे दो, फिर—"

"और कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है माँ, लाओ तुम्हीं अपनी करुणाको मेरे हाथमें सौंपो। उससे कहो, कि वह कातर न हो—वह मेरे—भारको सहन—"

"सहन करेगी सनत्, क्या हमेशासे नहीं सह रही है?"

"और भी, इससे भी अधिक सहना पड़ेगा—और भी—"

"हाँ, सब कुछ सहेगी।"

अभी तक अरुन्धतीने इलाको नहीं देखा था। इस बार इलाने आकर अरुन्धतीको प्रणाम किया। अरुन्धतीने उसके शिर पर हाथ फेरते हुए कहा,—"मुझसे मिलने आई हो बेटी? मैं कहीं मर जाऊं और फिर न मिल सको, यही सोच कर आई हो?"

"आप अभी कहीं नहीं जाती बुआजी, अभी तो आपके देवव्रतका काम आरम्भ ही हुआ है। आपके चले जाने पर तो कुछ भी न हो सकेगा। इस समय आपके सब लड़के-लड़कियोंने अपना-अपना कर्तव्य समझ लिया है, मीरा और अरुण भैया, आपके बायें हाथ होकर काम करेंगे, करुणा आपके घरकी लक्ष्मी होकर, सनत् भैयाका जीवन उज्ज्वल करेगी, लेकिन माँ, मैंने अभी तक कुछ नहीं सीखा! मुझे बतलाओ, सिखाओ, कि मुझे क्या करना चाहिये! इस समय मेरा अपना और कोई नहीं है, आज मुझे कोई नहीं चाहता, इसलिये मैं तुम्हारी ही सेवा करनेके लिये आई हूं बुआजी!"

अरुन्धतीने इलाको छातीसे लगा कर कहा,—"अपने-परायेका भाव छोड़ कर संसारमें, तुम सभीकी सेवा करो बेटी! तुम्हारे जैसा जीवन ही संसारमें सबसे अधिक कार्य कर सकता है! कौन तुम्हें नहीं चाहता? लोग सबसे पहले तुमसे ही स्नेह करेंगे, तुम्हें अपना

समझेंगे ! श्रान्ति और क्लान्तिके दिनोंमें तुम संसारकी सेवा-लक्ष्मी होकर लोगोंके प्राणोंको शीतल करती रहो। यदि तुम्हें अपने लिये किसीकी आवश्यकता नहीं है, तो संसार भरके लिये तुम अपना जीवन उत्सर्ग कर दो बेटी !”